ISSN 2277-5587
Impact Factor 5.465
Indexed in ULRICH, ISIFI, SJIF & DOJI
UGC Valid Journal (The Gazette of India,
Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Referred Journal)

शोध श्री

Volume-44 Issue-3 July-September 2022 RNI No. RAJHIN/2011/40531

CHIEF EDITOR
Dr. Virendra Sharma

EDITOR
Dr. Ravindra Tailor

shodhshree@gmail.com
www.shodhshree.com

Shodh Shree Volume-44 Issue-3 July-September 2022

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Referred Journal)

Dr. Virendra Sharma
Chief Editor
Government Girls P.G. College,
Ajmer

Dr Ravindra Tailor
Editor
Shodh Shree,
Jaipur

Editorial Board

Prof. H.S. Sharma (Retd.)
University of Rajasthan, **Jaipur**

Prof. T.K. Mathur (Retd.)
M.D.S. University, **Ajmer**

Prof. Ravindra Kumar Sharma (Retd.)
Kurukshetra University, Kurukshetra **(Haryana)**

Sarah Eloy
Museum The House of Alijn, **Belgium**

Prof. B.P. Saraswat (Retd.)
Dean of Commerce, M.D.S, University, **Ajmer**

Prof. Pushpa Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra **(Haryana)**

Dr. Manorama Upadhayay
Principal, Mahila P.G. Mahavidyalaya, **Jodhpur**

Prof. Veenu Pant
Professor & Head, Department of History, Sikkim University, Gangtok **(Sikkim)**

Dr. Rajesh Kumar
Director (Journal, Publicaiton & Library), I.C.H.R., **New Delhi**

Dr. Pankaj Gupta
Assistant Professor, Department of College Education, **Jaipur**

Dr. Rajendra Singh
Archivist, Rajasthan State Archives, **Jodhpur Division**

Dr. Ram Chandra
Assistant Professor, (STRIDE),Indira Gandhi National Open University, **New Delhi**

Advisory Board

Prof. S.N. Tailor (Retd.)
S.D. Government P.G. College, **Beawar**

Prof. S.P. Vyas
Jainarain Vyas University, **Jodhpur**

Dr. Kate Boehme
University of Leicester, **United Kingdom**

Dr. Mahesh Narayan
Archivist (Retd.), National Archives of India, **New Delhi**

ISSN 2277-5587
Impact Factor 5.465
Indexed in ULRICH, ISIFI, SJIF & DOJI
UGC Valid Journal (The Gazette of India,
Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Referred Journal)

शोध श्री

Volume-44 Issue-3 July-September 2022 RNI No. RAJHIN/2011/40531

Published by
DR. S. N. TAILOR FOUNDATION
(A Tribute to Late Shri Paras Hemendra G Tailor)

Prof. (Dr.) S. N. Tailor
Managing Director

Chief Editor
Dr. Virendra Sharma

Editor
Dr. Ravindra Tailor

ISSN 2277-5587
RNI No. RAJHIN/2011/40531

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Referred Journal)

Editors take no responsibility for inaccurate misleading data, opinion and statement appeared in the articles published in the journal. It is the sole responsibility of contributors.

©Editors also hold of the copyright of the Journal

Published By
Dr. S. N. Tailor Foundation
Munot Nagar, Beawar (Rajasthan)

To be had from
Dr. Virendra Sharma
54-A, Jawahar Nagar Colony
Tonk Road, Jaipur (Rajasthan)

Printed at
Ganesh Printers, Jaipur

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Referred Journal)

Contents

Volume-44 **Issue-3** **July-September 2022**

1. **विद्यार्थियों के शैक्षिक विकास में शिक्षकों एवं अभिभावकों की भूमिका** 1–4
   प्रतिभा गुप्ता एवं डॉ. उदय सिंह, गोरखपुर (उत्तरप्रदेश)
2. **भारतीय संगीत के परिपेक्ष्य में सारंगी वादन** 5–8
   मयंक राठौर एवं डॉ. सीमा राठौड़, उदयपुर
3. **जोधपुर राज्य में साहित्यिक विकास की रूपरेखा : 17 वी – 18 वी शताब्दी के विशेष संदर्भ में** 9–12
   डॉ. वीरेन्द्र शर्मा, अजमेर
4. **ज्योतिषशास्त्र में राशिचक्र का जातक पर प्रभाव** 13–18
   डॉ. हरकेश बैरवा, कोटा
5. **सर्वेश्वर की कविता में ग्राम्य–संस्कृति के विविध आयाम** 19–23
   डॉ. प्रतिभा शुक्ला, किशनगढ़
6. **भारतीय वैदिक वाङ्मय में महिला शिक्षा** 24–28
   डॉ. रजनी मीना, राजगढ़ (अलवर)
7. **दीदारगंज स्त्री प्रतिमा की सामाजिक उपादेयता** 29–32
   डॉ. सहदेव सिंह चौहान, सीतामऊ (मध्यप्रदेश)
8. **राजस्थान में कलात्मक बावड़ियाँः जल, कला व स्थापत्य के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में** 33–37
   डॉ. पंकज गौर, अजमेर
9. **गांधी चिंतन : सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक आयाम के संदर्भ में** 38–40
   डॉ. चन्दा केसवानी, अजमेर
10. **चरखी दादरी क्षेत्र के शैक्षणिक विकास में रामकृष्ण गुप्ता की भूमिका** 41–44
    तरसेम, चुडैला (झुंझुनू)
11. **पश्चिमी राजपूताना में दशनामी सम्प्रदाय का चिन्तन, शाखाएँ, संगठन, आचरण एवम् विस्तार तथा धार्मिक योगदान** 45–48
    श्रीमती पंकज परमार, जोधपुर
12. **सामुदायिक जल संरक्षण के समाजीकरण के विभिन्न पहलु (खमनोर पंचायत समिति का एक अध्ययन)** 49–53
    डॉ. तरूण दुबे, भीम
13. **वैश्विक परिदृश्य में मानवाधिकार** 54–59
    चन्द्रकला शर्मा, सीकर
14. **प्राचीन जैन तीर्थ फलवर्द्धि पार्श्वनाथ, मेड़ता (ऐतिहासिक अध्ययन)** 60–64
    दिनेश गहलोत, जोधपुर
15. **कमलेश्वर के साहित्य में भोगवादी पारिवारिक संस्कृति** 65–68
    डॉ. धनेश कुमार मीणा, राजगढ़ (चुरू)
16. **जोधपुर का धींगा गवर (बैतमार गणगौर मेला)** 69–72
    डॉ. प्रतिभा सांखला, जोधपुर

17. **केंद्र–राज्य सम्बंधः नवीन प्रवृतियां (सहकारी संघवाद के विशेष संदर्भ में)** 73–76
डॉ. विक्रांत कुमार शर्मा, कोटा

18. **प्रभा खेतान का उपन्यास 'छिन्न मस्ता' : आधुनिक स्त्री के व्यक्तित्व की स्थापना** 77–80
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद खीचड़, बीकानेर

19. **धार्मिक व स्थापत्य कला का वैभव : 'रणकपुर जैन मन्दिर'** 81–84
खुशबू जैन, जोधपुर

20. **कम्पनी अधिनियम 2013 में अंश पूंजी में कमी–प्रावधान, प्रक्रिया एवं अनुपालना** 85–88
डॉ. हेमन्त कडूणिया, नाथद्वारा

21. **बाड़मेर जिले के ग्रामीण विकास में पंचायती राज व्यवस्था का योगदान** 89–95
भजन लाल विश्नोई, पिण्डवाडा

22. **प्राचीन भारत मे वर्ण व्यवस्था (600 ई. –1250 ई. के विशेष संदर्भ में)** 96–103
मंजु कंसारा, जोधपुर

23. **कोरोना संकट का प्रभाव : आत्मनिर्भर भारत के परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन** 104–108
डॉ. यशमाया राजोरा, दौसा

24. **द्वितीय महायुद्ध में सार्दुल इन्फेण्ट्री का योगदान** 109–112
डॉ. हेमलता कंसारा, जोधपुर

25. **कॉरपोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी (CSR) का भारतीय शिक्षा व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में योगदान** 113–116
संजय कुमार, बॉदीकुई

26. **महिला कामगारों पर वैश्वीकरण के सामाजिक–आर्थिक प्रभावों का विश्लेष्णात्मक अध्ययन** 117–121
डॉ. पंकज गुप्ता, चिमनपुरा

27. **कला और सृजनात्मकता** 122–124
डॉ. प्रदीप कुमार वर्मा, बांसवाड़ा

28. **बैराठ की पुरातात्विक पृष्ठभूमि तथा अशोक के अभिलेख की विषयवस्तु का विश्लेषण** 125–129
डॉ. अनुपमा गोदारा, जयपुर

29. **A Sociological Study of Drug Awareness Among Students of HNB Garhwal University** 130-135
Dr. Uma Bahuguna & Dr. Shivani, Srinagar (Uttarakhand)

30. **Artificial Intelligence and Data Protection: Technology and its Challenges** 136-142
Dr. Meenakshi Punia, Jodhpur

31. **Population Dynamics in Karauli District** 143-148
Raghunandan Singh, Kota

32. **Constitutional Safeguards for Senior Citizens: A Socio–legal Analysis** 149-151
Dr. Om Prakash Gupta, Ajmer

33. **Democracy in India** 152-154
Dr. Arvind Kumar Gaur, Sri Ganganagar

34. **Impact of "Make In India" Programme** 155-159
Dr. Durgesh Kachhawaha, Jodhpur

35. **A Critical Assessment on Camel: A Case Study of Nagaur District** 160-168
Dr. Om Prakash, Jodhpur

विद्यार्थियों के शैक्षिक विकास में शिक्षकों एवं अभिभावकों की भूमिका

प्रतिभा गुप्ता
शोधार्थी, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उत्तरप्रदेश)

डॉ. उदय सिंह
शोध निर्देशक, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उत्तरप्रदेश)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

बच्चों की शिक्षा में अभिभावकों एवं शिक्षकों के दायित्व को नकारा नहीं जा सकता है। बच्चों की शिक्षा को सार्थक रूप देने के लिए जरूरी है परिवार एवं विद्यालय में तालमेल होना एवं बच्चे का केन्द्र में होना। बच्चा घर पर किस तरह का व्यवहार करता है उसके बारे में विद्यालय के शिक्षकों को जानकारी होना आवश्यक हैं एवं बच्चा जिस तरह का व्यवहार स्कूल में करता है उसकी जानकारी अभिभावक को होना आवश्यक है। माता-पिता एवं शिक्षकों के बीच सकारात्मक संबंध छात्रों के अपने शिक्षकों पर पूर्ण विश्वास को सुनिश्चित करता है और अपने विकास के लिए दोनों पक्षों द्वारा किये जाने वाले मेहनत को देखकर छात्र अपने शैक्षणिक लक्ष्यों तक पहुंचने के लिए अधिक लगन से पढ़ाई करेंगे जिससे उनका शैक्षिक विकास होगा।

संकेताक्षर : *शैक्षिक विकास, शिक्षक एवं अभिभावकों की भूमिका।*

देश के बहुमुखी विकास में शिक्षा की अहम भूमिका होती है। शिक्षा से सम्बंधित प्रत्येक योजना का सफल क्रियान्वयन शिक्षकों के वैयक्तिक व्यवहार, शिक्षण अधिगम क्रियाओं एवं कार्यनिष्ठा पर निर्भर करता है। शिक्षक की व्यवसायिक योग्यता एवं कला की दक्षता पर उत्तम कोटि का शिक्षण अपेक्षित है, उत्तम कोटि के शिक्षण द्वारा बालक के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास किया जाता है। शिक्षक एवं छात्र शिक्षण प्रक्रिया के दो ध्रुव होते हैं, शिक्षक ज्ञान प्रदान करता है एवं छात्र उसे ग्रहण करता है, यदि शिक्षक अपनी विषय वस्तु को अधिक से अधिक विद्यार्थियों तक समुचित ढंग से सम्प्रेषित करने में सफल होता है, तो उसे एक योग्य शिक्षक माना जाता है। महाकवि कालिदास ने अपनी पुस्तक 'मालविकाग्निमित्रम्' में शिक्षक के विशेष गुणों का वर्णन करते हुए लिखा है –

"शिक्षा क्रिया कस्य चिदात्म संस्था,
संक्रान्तियस्य विशेष मुक्ता।
यस्योभयं साधु स शिक्षकाणाम्
धुरि प्रतिष्ठा पयितव्य एवा"

अर्थात संसार में दो प्रकार के व्यक्ति हो सकते हैं। एक तो वे जो गहन गम्भीर ज्ञान को आत्मसात कर लेने में समर्थ होते है और दूसरे वे व्यक्ति जो वाणी से इतने मुखर होते हैं कि अपनी बात को सहज व प्रभावी रूप में दूसरे लोगो तक सम्प्रेषित कर सकते हैं। एक कुशल शिक्षक वही होता है जिसमें ये दोनो ही गुण विद्यमान होते हैं (गुप्ता, 2016)।

हमारे देश में प्राचीन काल से ही शिक्षकों को अत्यन्त सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। शिक्षक को समाज एवं शासक व्यवस्था का मार्गदर्शक माना जाता है। वर्तमान में शिक्षक की मुख्य भूमिका गतिहीन समाज को जीवन्त बनाने की है ताकि विकास एवं परिवर्तन के प्रति कटिबद्ध हो सके। आधुनिक शिक्षा पद्धति में अभिभावक, नेता, निर्देशक अनेक भूमिकाओं को निभाता है। समय के साथ-साथ नये प्रयोगो एवं दृष्टिकोणो ने हर व्यवसाय एवं पद के स्वरूप को बदल दिया है। प्राचीन विधियों से किसी भी कार्य को करना असम्भव हो गया है, ऐसे में शिक्षको का दायित्व और भी बढ़ गया है। शिक्षक का कर्तव्य, विद्यार्थियों को शिक्षित करने के साथ-साथ नैतिकता, कर्तव्य- परायणता का पाठ

पढ़ाना अत्यन्त आवश्यक हो गया है (कुमारी, 2016)। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में कहा गया है कि ''उर्वर एवं सुदृढ़ शिक्षा का सृजन सदैव बच्चे की भौतिक एवं सांस्कृतिक मिट्टी में होता है, उसी में उसकी जड़े जमी होती है एवं उसका पालन–पोषण अभिभावक, शिक्षक, सहपाठी एवं समुदाय के साथ अंतःक्रिया के माध्यम से होता हैं।'' परिवार का सबसे महत्वपूर्ण घटक अभिभावक होता है वह अपने बच्चे की देखरेख व्यस्क होने तक करता है, और अपनी जिम्मेदारी को निभाता है। परिवार बच्चे के मानसिक विकास को तो प्रभावित करता ही है, साथ–साथ बच्चे को सामाजिक बनाने की प्रक्रिया बड़े हद तक पूरी करता है। बच्चे एक तरफ स्कूल में औपचारिक शिक्षा ग्रहण करते हैं तो दूसरी तरफ घर में अभिभावकों से शिक्षा प्राप्त करतें है। अभिभावकों की भागीदारी एवं विद्यार्थी की सफलता के बीच सकारात्मक सम्बन्ध एवं परिवार की भूमिका किसी अन्य सुधार कार्यक्रम की अपेक्षा कही ज्यादा प्रभाव डालती है। शिक्षकों को अभिभावकों–अध्यापक साझेदारी का महत्व समझाते हुए अभिभावकों को उनके बच्चे की शिक्षा में भागीदारी बनाना चाहिए, शिक्षकों को पता होना चाहिए कि अभिभावक का सहयोग कैसे प्राप्त करना है (यादव, 2018)। अक्सर हम शिक्षकों एवं विद्यालय के दायित्व की चर्चा करते हैं, परन्तु अभिभावक के दायित्व को आवश्यक नही समझते। हमें लगता है कि शिक्षा तो विद्यालय से जुड़ी है बच्चे विद्यालय जाकर शिक्षा ग्रहण करते है तो सारी जिम्मेदारी विद्यालय की बनती है। बच्चों की शिक्षा में माता–पिता या अभिभावकों की जिम्मेदारी को नकारा नहीं जा सकता है। बच्चो की शिक्षा को सार्थक एवं बेहतर रूप देने के लिए जरूरी है परिवार एवं विद्यालय में तालमेल होना। बच्चा घर पर किस तरह का व्यवहार करता है उसकी जानकारी शिक्षक को होनी चाहिए, और बच्चे का व्यवहार स्कूल में किस तरह का है इसकी जानकारी अभिभावकों को होनी चाहिए। बच्चों को शिक्षा का अधिकार तो मिल ही गया है परन्तु इस अधिकार को वे तब जी पायेगें जब उन्हे स्कूल के साथ–साथ माता–पिता का सहयोग मिले और वे बच्चो के मन को समझ पायें (सिन्हा, 2019)।

शिक्षक समाज का दर्पण एवं राष्ट्र निर्माता होता है, माता–पिता के बाद इस संसार में कोई पूज्यनीय है तो वह शिक्षक है, प्राचीन काल से ही शिक्षक के सामने सबसे बड़ी चुनौती कक्षा में शिक्षण को प्रभावशाली एवं रूचिकर बनाये रखना है। यदि अध्यापक छात्रो के साथ एक अच्छे मित्र की तरह घुलमिलकर कक्षा का शिक्षण कार्य करते है तो निश्चित रूप से बच्चों की संख्या कक्षा में आने की बढ़ेगी, और विद्यार्थी अध्यापक के शिक्षण कार्य में रूचि भी लेगा, जिससे बच्चे के शैक्षिक स्तर में सुधार होगा। बच्चों का मनोबल समय–समय पर जरूर बढ़ाना चाहिए, ऐसा करने से अन्य बच्चे भी इस प्रकार का व्यवहार करना सीखते है, जिससे निश्चित रूप से शिक्षण में सुधार होगा। बच्चों में नेतृत्व क्षमता का विकास करने के लिए कक्षा में बच्चों को विभिन्न टोलियों में बाँट दें, प्रत्येक टोली का एक नेता घोषित कर दें एवं प्रत्येक टोली को एक कार्य दे दें, उसकी जबावदेही नेता के रूप में होनी चाहिए इससे बच्चों में नेतृत्व क्षमता का विकास होगा। कक्षा में चर्चा के दौरान प्रत्येक बच्चे को भागीदार बनायें, सप्ताह के अलग–अलग दिनो मे बच्चे को अपनी बात कहने का अवसर दें ताकि कोई भी बच्चा यह न समझे कि कक्षा में जो कुछ पढ़ाया जा रहा है वह इसके लिए समझना मुश्किल है। बच्चों को इस बात का एहसास होना चाहिए कि, कक्षा का संचालन उसके लिए है किया गया, इससे बच्चे खुद भी सीखने की जिम्मेदारी लेंगे और तैयारी के साथ कक्षा में जायेगें (नागर, 2019)।

माता पिता एवं शिक्षक का एक ही लक्ष्य होता है बच्चे की सफलता अभिभावक–शिक्षक एवं बच्चे की साझेदारी से बच्चे की स्कूली प्रक्रिया सुदृढ़ एवं प्रभावी बनती है। बच्चे की शिक्षा एवं सम्पूर्ण विकास की सफलता के लिए माता–पिता एवं शिक्षक को निरन्तर बातचीत करने की आवश्यकता पड़ती है। माता–पिता एवं शिक्षक दोनों अपने अवरोधों को दूर करते हैं और इस साझेदारी से वे अपने–अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ़ने के लिए तैयार रहते है। कुछ इंटरनेट उपयोग के साधन द्वारा अभिभावक शिक्षक संवाद को सुगम बनाया जा सकता है जैसे– इमेल, ऑनलाइन चैट, ऐप संदेश।

उच्च शैक्षणिक उत्कृष्टता स्तर को छात्र तभी प्राप्त कर सकता है जब बच्चे के परिवार एवं स्कूल का पूर्ण समर्थन मिले। बच्चे की सफलता के लिए शिक्षक का माता–पिता से संपर्क होना अति आवश्यक है क्योंकि शिक्षक द्वारा अभिभावक के प्राप्त प्रतिक्रिया से बच्चो की कमजोरियों को समझने में और उनमे सुधार लाने में मदद मिलेगा। लगातार संवाद होते रहने से पढ़ाई सत्र के दौरान सकारात्मक वातावरण बना रहता है। माता–पिता एवं शिक्षकों के सकारात्मक सम्बन्ध की वजह से बच्चों को अपने शिक्षकों पर पूर्ण विश्वास रहता है, दोनो पक्षों द्वारा किये गये मेहनत को देखकर छात्र

अपने शैक्षिक लक्ष्यों तक पहुंचने के लिए अधिक लगन से पढ़ाई करते हैं।

अभिभावक–शिक्षक के बीच परस्पर संवाद से शिक्षको के छात्रो से सम्बन्धित किसी भी मुद्दे पर उनके माता–पिता या अभिभावक के साथ संवाद करने में आसानी होती है बच्चे अपने कमियो के बारे में शिक्षकों एवं अभिभावकों को पता चल जाने से बच जाते हैं (शेते, 2019)।

शिक्षा की गुणवत्ता में अभिभावकों एवं शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है यदि माता–पिता एवं शिक्षक साथ मिलकर इस ओर ध्यान दें तो अच्छी शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकता है। बालक के शैक्षिक विकास में शिक्षकों एंव अभिभावकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है परन्तु दोनो की भूमिकाएं अलग–अलग होती है, बच्चे की समस्या को शिक्षक जिस दृष्टिकोण से देखता है जरूरी नही की अभिभावक भी उसी दृष्टिकोण से बच्चे की समस्या को देखे। शिक्षक जहां प्रत्येक बच्चे के विकास के बारे में सोचता है वही अभिभावक अपने बच्चे के अधिकाधिक शैक्षिक विकास की अपेक्षा शिक्षकों से करते हैं, इन भिन्नताओं के कारण ही। बालक की क्षमताओं, रूचियों के बारे में अभिभावको की सोच शिक्षकों से भिन्न होती है। छात्रो को स्कूल में माता–पिता की भागीदारी द्वारा प्रेरित किया जा सकता है, जिसमें बच्चे की पढ़ने में रूचि बढ़ेगी, स्कूलों में माता–पिता की भागीदारी, माता–पिता एवं शिक्षकों के बीच सेतु का कार्य करेगी, अभिभावक एवं शिक्षकों के लगातार संवाद द्वारा न केवल कक्षा में छात्रो का दायित्व बढ़ेगा बल्कि बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगा। कक्षा में छात्रों के प्रदर्शन को प्रभावी करने के अनेक कारक है जैसे, परिवार की भागीदारी, छात्र व्यक्तिगत प्रोफाइल, शिक्षकों की अभिवृत्ति। (पालीवाल, 2010) शिक्षक अभिभावक महत्व के सन्दर्भ में बताती है बच्चों की शिक्षा में उन्नयन के लिए बच्चों को प्रोत्साहन देना बहुत ही आवश्यक है। बच्चों की कमजोरियों को अभिभावक से मिलकर पता लगाया जा सकता है। अशिक्षित अभिभावकों का असर बच्चे की शिक्षा पर पड़ता है, इस असर को कम करने के लिए शिक्षक एवं अभिभावक का समय–समय पर आपसी संपर्क बनाये रखना जरूरी है। कभी–कभी शिक्षकों को अभिभावकों के संवाद हेतु गाँवों में जाना चाहिए जिससे जो अभिभावक स्कूल नहीं जा पाते उन अभिभावकों से शिक्षक मिल सके ताकि बच्चे की शैक्षिक समस्या का समाधान किया जा सकें।

विद्यालय में बच्चों को जिम्मेदार नागरिक बनने के लिए प्रेरित करना होगा, शिक्षकों को छात्रो के सम्मुख आदर्श व्यक्तित्व प्रस्तुत करना होगा क्योंकि बच्चे शिक्षकों द्वारा किये गये व्यवहार का अनुसरण करतें है। आज बढ़ती तकनीको के कारण विद्यार्थियों का अधिकांश समय टी. वी., मोबाइल इत्यादि पर व्यतीत होता है जिससे बच्चे में अवसाद, चिड़चिड़ापन अपना जगह बना रहे हैं जो बच्चे के शैक्षिक विकास को अवरूद्ध कर रहा है, इस कारण से अभिभावकों से यह उम्मीद की जाती है कि वे अपने बच्चों को टी.वी., इंटरनेट इत्यादि का सही प्रयोग करना सिखाएं, इन तकनीको के माध्यम से विद्यार्थी का शैक्षिक विकास किस तरह हो सकता है इसकी जिम्मेदारी अभिभावकों के साथ–साथ शिक्षकों की भी है। आज अभिभावक अपने बच्चों को हर सुख–सुविधाएं उपलब्ध करा रहें हैं लेकिन बच्चों को समय नहीं दे पा रहें हैं अतः शिक्षा के प्रति लापरवाही बच्चों में बढ़ती जा रही है, इन परिस्थितियों से निपटने के लिए अभिभावकों की भूमिका बच्चों के शैक्षिक विकास मे बहुत ही महत्वपूर्ण है।

बच्चों के अन्दर अच्छे अंक पाने की बढ़ती उम्मीदें बच्चों में मानसिक तनाव एवं अवसाद उत्पन्न करती है, जो बच्चे के शैक्षिक विकास पर बुरा प्रभाव डाल रहा है इसके लिए जरूरी है कि शिक्षक एवं अभिभावक दोनो बच्चों का समय–समय पर मार्गदर्शन करते रहें ऐसी परिस्थिति का सामना करने के लिए अभिभावक एवं शिक्षक दोनों का सहयोग बहुत जरूरी है।

माता–पिता एवं शिक्षक का एक ही लक्ष्य होता है बच्चें का शैक्षिक विकास करना, ऐसा युवा बनाना जो आगे चलकर संतुलित व्यस्क बने, अच्छे इन्सान बने जो हमारे देश के विकास में बहुत महत्वपूर्ण है इसके लिए शिक्षको एवं माता–पिता की तरफ से विशेष प्रयत्न करने की आवश्यकता है। जैसे कि बच्चे के व्यवहार के ठीक ढंग से समझने के लिए बच्चों के मनोविज्ञान का ज्ञान होना अति आवश्यक है, बच्चों द्वारा अनुभव की जाने वाली कठिनाइयों एवं समस्याओं का ज्ञान होना शिक्षक एवं अभिभावक दोनो के लिए आवश्यक है तभी बच्चे का उचित एवं सही दिशा में शैक्षिक विकास सम्भव होगा।

बच्चे बहुत भावुक एवं संवेदनशील होते है हमारे द्वारा अनजाने मे किया गया मामूली सा गलत व्यवहार बच्चों के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। बच्चों को

आलोचको की आवश्यकता नही है बल्कि ऐसे आदर्श शिक्षक की आवश्यकता है जिनके व्यवहार का अनुसरण बच्चे करें, उन्हें ऐसे शिक्षक एवं अभिभावक की आवश्यकता है जो उनकी आवश्यकताओं एवं समस्याओं पर ध्यान दे सकें और उनका मार्गदर्शन कर सकें (कुमारी, 2020)। चूंकि बच्चे के जन्म से ही परिवार में उसकी शिक्षा आरम्भ हो जाती है इस दृष्टि से बालक के शैक्षिक विकास मे परिवार का वातावरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बच्चे के जीवन में शिक्षा की प्रथम आवश्यकता उसे उत्पादक बनाने की होती है जिसके लिए उनमे शैक्षिक रूचियों का विकास आवश्यक हो जाता है इस दृष्टिकोण से बालक की शैक्षिक महत्ता बढ़ जाती है। दूसरी आवश्यकता बालक को सामाजिक प्राणी बनाने की होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु सामाजिक दक्षता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। तृतीय आवश्यकता व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों रूपों में संतुलित रखने की है इस संदर्भ में बच्चे के मानसिक स्वास्थ्य की कठिन परीक्षा होती है। इस प्रकार पारिवारिक पर्यावरण, शैक्षिक रूचि, सामाजिक दक्षता और मानसिक स्वास्थ्य चारो चर बच्चे की सफलता एवं असफलता से जुड़े है, इसके लिए विशेष रूप से जरूरी है बच्चे का शैक्षिक विकास अच्छे से हो इस कार्य की सफलता के लिए माता–पिता एवं शिक्षा दोनों को बच्चे के शैक्षिक विकास पर मिलकर ध्यान देना आवश्यक है (कुमार, 2017)।

निष्कर्ष : किसी भी बच्चे के जीवन में उसके अभिभावक, शिक्षक एवं आस–पास के समाज का महत्वपूर्ण योगदान होता है अभिभावक एवं शिक्षक वह कड़ी है जिसके सम्पर्क में बच्चा सबसे ज्यादा समय व्यतीत करता है। अभिभावक एवं शिक्षक के साथ रहकर ही बच्चा समाजीकरण करना सीखता है। बच्चों की शिक्षा में अभिभावक एवं शिक्षक ऐसे स्तम्भ है जिसके आपस में न जुड़ पाने से बच्चे का शैक्षिक विकास सुचारू रूप से नहीं हो पायेगा। सभी बच्चों की अपनी विशेष परिस्थितियां, प्रकृति एवं अलग–अलग समस्याएं होती है, ऐसे में माता–पिता एवं शिक्षक बच्चों पर उचित ध्यान देकर, एवं उचित परामर्श द्वारा बच्चे की शैक्षिक विकास मे सहयोग कर सकते हैं। अभिभावको की विद्यालयी शिक्षा में भागीदारी बढ़ाने में अभिभावक संपर्क कार्यक्रम की महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *कुमारी, मन्जु, कन्सल, हरीश (2017) : अभिभावक शिक्षक संघ का शैक्षिक प्रदर्शन पर प्रभावः दिल्ली शहर के सन्दर्भ में इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ कामर्स, सोशल साइंसेस (इम्पैट फैक्टर–4.218) वाल्यूम–04, इश्यू–07 (जूलाई–2017), ISSN No: 2394-5702, O.P.J.S, विश्ववि., चूरू (राजस्थान) भारत, शिक्षा विभाग, उद्दत दिनांक 19.04.22,*
2. *कुमारी, गायत्री (2020) : किशोरो के लिए शिक्षक एवं अभिभावक की भूमिका, वाल्यूम–10, इश्यू–1, नं0–2, जनवरी–दिसम्बर 2020, https://blog.neadschool. in /how-can-parent-teacher interactor-remain-untindered-hindi उद्दत दिनांक 19.04.2022।*
3. *गुप्ता, मंजु (2016) : भारतीय तथा वैश्विक परिप्रेक्ष्य में अध्यापक शिक्षा, नवीन पाठ्यक्रमानुसार राखी प्रकाशन प्रा.लि. आगरा, पृ.सं.–135।*
4. *नागर, देवेन्द्र (2019) : प्रभावशाली शिक्षण में शिक्षक की भूमिका https://drdeendrangar.bilogspot.com/2019 /10/blog-post-intml/m=1 उद्दत दिनांक 7/4/22*
5. *पालीवाल, रश्मि (2010) : राह बनाते शिक्षक, प्राथमिक शिक्षक, अंक 3–4, वर्ष 34, (जूलाई–अक्टूबर, 2010) एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली पृ.सं.–21।*
6. *यादव, अखिलेश (2021) : बच्चों की शिक्षा में शिक्षक अभिभावक संबंध की भूमिकाः एक विश्लेषण, प्राथमिक शिक्षक, शैक्षिक संवाद की पत्रिका, वर्ष 42,अंक 4, अक्टूबर 2018, उद्दत दिनांक 11.04. 2022।*
7. *सिन्हा, पवन (2019) : प्राथमिक शिक्षक, शैक्षिक संवाद की पत्रिका, वर्ष 43, अंक 1, जनवरी 2019 उद्दत दिनांक 13.04.22।*
8. *शेते, मंजरी (2021) : अभिभावक शिक्षक के बीच सूचनाओं के आदान–प्रदान का बेहतर होना क्यों महत्वपूर्ण है, https://leadschool.in/blog/how-can-parent-teacher-interaction-remain-unhindered-hindi उद्दत दिनांक 12.04.22।*

भारतीय संगीत के परिपेक्ष्य में सारंगी वादन

मयंक राठौर
शोधार्थी,मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर

डॉ. सीमा राठौड़
सह आचार्य, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

सारांश :– भारतीय संगीत गायन, वादन एवं नृत्य से मिलकर संगीत कहलाता है। सबसे पहले गायन की शुरुवात हुई उसके बाद गायन को सुमधुर एवं व्यवस्थित बनाने के लिए वाद्यों का आविष्कार किया गया। भारतीय संगीत में वाद्यों को चार प्रकार की श्रेणी मे रखा गया है जिसे अवनद्ध वाद्य, सुषिर वाद्य, तंतु वाद्य एवं घन वाद्य कहा जाता है। तंतु वाद्य की श्रेणी में सारंगी बहुत ही प्राचीन वाद्य माना गया है। इस वाद्य की उत्पत्ति रावण काल की मानी जाती है। समय–समय पर इसका स्वरूप , आकार एवं बजाने का ढंग बदलता रहा। गायन, वादन एवं नृत्य के साथ संगत के लिए इस वाद्य का उपयोग किया जाता है। संगत के साथ ही यह वाद्य एकल वादन मे भी अपनी विशेष पहचान रखता है। इस आलेख के माध्यम से सारंगी का परिचय, सारंगी की उत्पत्ति एवं विकास, सारंगी की वादनशैली, सारंगी के प्रकार, सारंगी के एकल वादन एवं संगत पर प्रकाश डाला गया है।

संकेताक्षर : *भारतीय संगीत, तंतु वाद्य, सारंगी, संगत, एकल वादन।*

भारतीय संगीत में चार प्रकार के वाद्यों का उल्लेख देखने को मिलता है। इन चार प्रकार के वाद्यों में तंतु वाद्य का उपयोग एकल वादन एवं संगत के लिए किया जाता है। तंतु वाद्य दो प्रकार के होते हैं,तत वाद्य एवं वितत वाद्य। वितत वाद्यों में प्राचीन समय से सारंगी का उपयोग किया जाता रहा है। गायन, वादन एवं नृत्य के साथ संगत के लिए सारंगी का उपयोग किया जाता है। आधुनिक समय में संगत वाद्य के रूप में सारंगी बहुत ही महत्वपूर्ण वाद्य माना गया है, किसी भी प्रकार के संगीत के साथ सारंगी की उपयोगिता हमेशा रहती है।

सारंगी का प्रयोग संगत के लिए होता है, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है की सारंगी केवल संगत का ही वाद्य है। क्यूंकि सारंगी में एकल वादन भी किया जाता है, इसीलिए यह कहा जा सकता है कि सारंगी संगत एवं एकल वादन दोनों के लिए उपयुक्त है। सारंगी को अन्य तंतु वाद्यों की तुलना में कठिन माना गया है क्यूंकि अन्य तंतु वाद्य उंगलियों के पोरों से बजाये जाते हैं, परन्तु सारंगी एक मात्र ऐसा वाद्य है जो उंगलियों के पिछले भाग के नाखून एवं चमड़ी से घिसकर बजाया जाता है।

भारतीय संगीत में सारंगी बहुत महत्वपूर्ण वाद्य है, सारंगी को पहले ''सौरंगी'' भी कहा जाता था। जिसका अर्थ बुजुर्गों ने यह बताया है कि इस वाद्य में संगीत के सभी रंगों का समावेश है एवं इस वाद्य में संगीत के सौ रंगों को बजाकर दर्शाने की क्षमता है। वर्तमान में अन्य स्वर वाद्यों की भांति सारंगी भी बहुत प्रचलित है। किसी भी प्रकार का संगीत हो चाहे शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, लोक संगीत अथवा ध्रुपद यह वाद्य संगत के साज़ के रूप में हमेशा उपयोग में आता है। सारंगी को इस प्रकार बनाया गया की वह हर तरह के संगीत के साथ संगत के लिए उपयुक्त हो। सारंगी एकमात्र ऐसा वाद्य है जो मनुष्य की आवाज़ के सबसे नज़दीक माना गया है। सारंगी पर गायकी की हर छोटी से छोटी हरकत जैसे खटका, मुरकी, मींड़, ज़मज़मा, गमक, सपाट आदि हूबहू बजाना संभव है। संगत के साथ–साथ सारंगी पर एकल वादन भी किया जाता है। जब सारंगी को बनाया गया तब सिर्फ संगत के लिए ही इसका उपयोग किया जाता था, किन्तु समय के साथ सारंगी वादकों ने सारंगी के एकल वादन को लेकर गहन विचार किया और सारंगी के एकल वादन की विधा को स्थापित करने के लिए शुरुआत में बहुत संघर्ष किया। कुछ सारंगी

वादकों ने गायकी अंग को अपनाया और कुछ सारंगी वादकों ने गत अंग को प्राथमिकता दी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सारंगी एकल वादन और संगत दोनों के लिए उपयुक्त है।

ऐसी मान्यता है कि सारंगी का आविष्कार ऋषि श्रृंगी ने किया था। ऋषि श्रृंगी ने यह वाद्य पुलस्त्य को प्रदान किया, पुलस्त्य ने यह वाद्य विश्रवस को प्रदान किया एवं विश्रवस ने यह वाद्य रावण को प्रदान किया। एक मान्यता ऐसी भी है कि इस वाद्य को रावण के द्वारा बनाया गया था। जिसे रावनहत्था कहते है। सारंगी लोक संगीत और शास्त्रीय संगीत दोनों ही विधाओं में कई वर्षो से उपलब्ध है। इसीलिए सारंगी की उत्पति में अनेक मान्यताएं हैं, जैसे प्राचीन समय में भारत का एक हकीम जंगल के रास्ते पैदल जा रहा था। कुछ देर विश्राम करने के लिए वह एक वृक्ष की छांव में बैठ गया, तब उसे सुरीली ध्वनि सुनाई दी। उस ध्वनि का स्त्रोत खोजने पर उसने पाया के एक बंदर का मृत शरीर एक पेड़ पर तना हुआ है और हवा आने पर शाखाओं के घर्षण से सूखी हुई आंतों से ध्वनि उत्पन्न हो रही है। वहीं से उस हकीम ने आंतों एवं शाखाओं को उतारकर उनके उचित समन्वय से सारंगी वाद्य का आविष्कार किया। उस्ताद अब्दुलहलीम जाफर के अनुसार सारंगी का आविष्कार प्रसिद्ध गायक सदारंग द्वारा किया गया था आदि।

समय के अनुसार इस वाद्य के स्वरूप, आकार एवं वादन शैली में परिवर्तन होते चले गए। धीरे–धीरे विकसित होते हुए यह वाद्य इस आधुनिक युग में अपने पूर्ण स्वरूप में आ चुका है। भारत के अलग–अलग प्रांत में भिन्न–भिन्न बनावट, आकार एवं वादन शैली के साथ यह सुमधुर वाद्य बहुत लोकप्रिय रहा है। अफगानिस्तान, ईरान आदि देशों में भी यह वाद्य अलग–अलग नामों से प्रचलित रहा है जैसे चिकारा, सारंदा आदि। वर्तमान में संगीत के क्षेत्र में उपयोग होने वाली तरबदार सारंगी तीन रूप में पाई जाती है, जिसे टोंटा, डेढ़ पसली एवं दोमगजा कहते हैं।

सारंगी के प्रकार

टोंटाः– इस सारंगी में 11 तार और 3 तांत होती है। इसे गज की सहायता से बजाया जाता है।

डेढ़ पसली :– इस सारंगी के मध्यभाग में 11 या 13 तार होते है, 3 तांत होती है और बगल में 9 तार होते हैं। यह आकार में छोटी होती है।

दोमगजा :– इस सारंगी के मध्य भाग में 15 तार होते है, बगल में 11 तार होते हैं एवं मस्तक के भाग में 10 या 11 तार होते हैं। इस सारंगी का आकार टोंटा और डेढ़ पसली सारंगी से बड़ा होता है।

जिस तरह हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में सारंगी का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है उसी तरह लोक संगीत में भी सारंगी का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। लोक संगीत के अलग अलग प्रांत में बिना तख वाली सारंगी जोगियों द्वारा बजाई जाती है। पश्चिमी राजस्थान के भील समुदाय में प्रचलित रावण हत्था, अलबर के मेयो वर्ग में प्रचलित मेयो का चिकारा, जोगिया सारंगी, राजस्थान के लंगा जाति में प्रचलित गुजरातन सांरगी, मंगा जाति में प्रचलित कमायचा, निहालदे के जोगियों में प्रचलित धानी सारंगी, भील और गरसिया जाति में प्रचलित अपंग, भीलों में प्रचलित सुरिन्दा, जैसलमेर के मंजीनिया जाति में प्रचलित अलायु सारंगी, बिहार के संस्थाल परगना (वासियों) में (रावण हत्या वर्ग के समान) प्रचलित बनाम, महराष्ट्र एवं आन्ध्र के प्रधानों में प्रचलित किंगरी, मणिपुर के पेन, केरलीय पल्लवों में प्रचलित कुंज, उड़ीसा प्रान्त में प्रचलित केनरा एवं वानम आदि उपर्युक्त विभिन्न प्रान्तों में विभिन्न नामों से प्रचलित सारंगी के समान कन्धें से सटाकर कमानी या गज से बजाये जाते रहे है। भारतीय शास्त्रीय संगीत के परिपेक्ष्य में गायकी क्षेत्र में सारंगी का महत्व वीणा के समानान्तर रहा है, लेकिन कर्नाटक संगीत में उसकी पूर्णतः उपेक्षा हुई है किन्तु कहीं–कहीं पर पाया जाता है। आश्चर्य है कि इसके प्रयोग के कहीं–कहीं उदाहरण भी ओडुवारों में उपलब्ध है, जहाँ वे संगीतकार है जो प्राचीन तालिम भक्तिगीत तेवरम गाते थे। इस प्रकार के अपवादों को छोड़ दक्षिण के बहुत से क्षेत्रों ने सारंगी को नहीं अपनाया है। सारंगी को तीन भागों में विभाजित किया गया है, जिनमें से सबसे ऊपरी भाग को मगज कहा जाता है। मध्य भाग को छाती कहा जाता है एवं निचले भाग को पेट कहा जाता है। इन्ही तीनों भागों के अंदर सारंगी के विभिन्न अंग होते हैं। जिनका वर्णन निम्नलिखित है :–

मगज :– मगज में सबसे ऊपर एवं सामने की तरफ छोटी खूँटिया होती हैं जिसमें तरब लगाई जाती है। यह तरब स्टील के तार की होती है। इन खूँटियों के ठीक नीचे तार गहन होता है। इस तार गहन के अंदर छोटे छोटे छेद होते हैं ओर उन्ही में पिरोकर तरब को खूंटी पर चढ़ाया जाता है। क्योंकि तार गहन बनावट में बालों

को बनाने वाली कंघी की तरह होता है इसलिए बहुत से कलाकारों द्वारा तार गहन को कंघी भी कहा जाता है। तार गहन के ठीक नीचे दाईं ओर बाईं तरफ छोटी-छोटी ब्रिज होती है जिनके ऊपर से तरब को चढ़ाया जाता है। यह दोनों छोटी ब्रिज सामने से देखने में आँखों के समान दिखाई देती है। इसीलिए इन्हें आँखें कहा जाता है। बाईं तरफ की आँख के ऊपर 3 या 4 तरब चढ़ाई जाती है। जिसे मिलाने का क्रम आरोहात्मक होता है। जैसेः सा, रे, ग, म। दाईं तरफ की आँख पर 6 या 7 तरब चढ़ाई जाती है। जिसे मिलाने का क्रम अवरोहात्मक होता है। जैसेः सां, नी, ध, प, म, ग, रे। आँखों के दाईं ओर बाईं तरफ दो-दो बड़ी खूँटियाँ होती है, जिन्हें मोरना भी कहा जाता है। इन चार मोरनों में से तीन पर तो तांत चढ़ाई जाती है ओर एक पर पीतल का तार या गिटार का तार चढ़ाया जाता है। तांत को मध्य सप्तक से मंद्र सप्तक की ओर सा-प-सा में मिलाया जाता है ओर गिटार के तार को भी मंद्र सप्तक के सा स्वर मे मिलाया जाता है। किसी किसी सारंगी में दाईं तरफ के मोरनों के ऊपर दो छोटी खूँटियाँ और रहती है, जिन पर तांबे या पीतल के तार चढ़ाये जाते हैं। आँखों के नीचे मेहराब होती है, जिसके अंदर से तांत निकाल कर मोरनों पर चढ़ाई जाती है।

छाती :- सारंगी के मध्य भाग एवं मगज से नीचे के भाग को छाती कहा जाता है। मेहराब के ठीक नीचे ब्रिज होती है जिसके ऊपर से तांत गुज़रती है उसे पिलक भी कहा जाता है। पिलक के नीचे फिंगर बोर्ड होता है। फिंगर बोर्ड में भी तरब लगी होती है। जिसे फिंगर बोर्ड पर छोटे-छोटे छेद करके एवं हड्डी की गोल सुन्दरियाँ लगाकर छाती की दाईं ओर निचली खूँटियों से जोड़ा जाता है। इन तरबों को अचल थाट में मिलाया जाता है। छाती की दाईं ओर ऊपर की तरफ 9 तरब और होती है, जिन्हें राग के स्वरों के अनुसार आरोहात्मक मिलाया जाता है।

पेट :- छाती से नीचे के भाग को पेट कहा जाता है। पेट पर चमड़ा मढ़ा जाता है। चमड़ा मढ़ने से पहले लंगोट लगाई जाती है बाद में चमड़ा मढ़ने के बाद उस पर तस्मा लगाया जाता है। उस तस्मे पर घुड़च लगाई जाती है। घुड़च के छेदों मे से तरबों को निकालकर खूँटियों से जोड़ा जाता है एवं तांत को घुड़च के ऊपर से लगाया जाता है। सबसे नीचे की तरफ तार गहन होता है जो की सभी तरब एवं तारों को ऊपर से नीचे की और जोड़े रखता है। कुछ कलाकार तार गहन की मजबूती के लिए उसमें पीतल का उपयोग भी करते हैं। स्टील की मोटी तरब को फाइन ट्यून करने के लिए उसमें मनके का उपयोग किया जाता है।

मोचनी :- सारंगी के तारों को स्वर मे मिलाने के लिए मोचनी का उपयोग किया जाता है जिसे ट्युनर भी कहा जाता है। मोचनी का पिछला भाग लकड़ी का बना होता है एवं अगला भाग पीतल का बना होता है।

गज :- सारंगी को बजाने के लिए गज का उपयोग किया जाता है। इसमें घोड़े के बालों को लकड़ी के ऊपर लकड़ी के बनें सिंघाड़े की मदद से बांधा जाता है।

सारंगी संगत करते समय वादक को दूसरे कलाकार जिसके साथ संगत की जा रही है उस कलाकार के संगीत एवं उसके मिजाज़ को समझकर संगत करना ही उत्तम माना जाता है। जिस स्वर एवं राग में मुख्य कलाकार गायन कर रहा है उसी अनुसार सारंगी की संगत भी की जाती है। इसके लिए यह आवश्यक है की सारंगी वादक का स्वरों पर एवं विलम्बित, मध्य और द्रुत तीनों लयों पर नियंत्रण होना चाहिए। यह कार्य बहुत ही चुनौतीपूर्ण होता है क्योंकि संगतकार को यह अनुमान नहीं होता है की गायक कौनसे राग पर अधिक रियाज़ करके आया है और कौनसा राग गाने वाला है या फिर तबला वादक कौनसे ताल पर अधिक रियाज़ करके आया है और वह कौनसा ताल बजाने वाला है। यह संगतकार की परीक्षा ही होती है कि वह तुरन्त अपने मिज़ाज एवं संगीत को मुख्य कलाकार के अनुरूप ढाल लेता है। कभी-कभी संगतकार को संगीत के विद्वान पंडितों एवं उस्तादों के साथ संगत करने का अवसर मिलता है तो कभी-कभी नोसिखियों के साथ भी बजाना पड़ता है। मुख्य कलाकार सुरीला हो या कंसुरा, संगतकार को उसके साथ सुर में सुर मिलाकर बजाना पड़ता है। इसीलिए उस्तादों ने संगतकारों को दर्जी की सूई कहा है जो कभी रेशम के कपड़े पर चलती हे तो कभी सूती पर, कभी लिनन पर तो कभी टेरीकॉट पर। संगतकार को संगत करने पर सम्मान भी बहुत प्राप्त होता है किन्तु कई बार अपमान का सामना भी करना पड़ता है। जैसे कई बार मंच पर गायक चुनौतीपूर्ण ढंग से कोई विकट तान गाकर संगतकार की ओर इशारा कर के उसे वही तान बजाने को कहते हैं जो उनकी कई सालों की मेहनत से सधी हुई तान होती है। ऐसे में संगतकार से अगर वो तान वैसी की वैसी उसी समय मंच पर बज गई तो दाद भी बहुत मिलती है ओर नहीं बज पाई तो अपमान का भी सामना करना

पड़ता है। गायन वादन और नृत्य तीनों के साथ संगत अलग अलग प्रकार से की जाती है। संगत के लिए गुरु द्वारा तालीम नहीं दी जाती।

जो तालीम गुरु द्वारा एकल वादन के लिए दी जाती है उसी तालीम को संगत में उपयोग किया जाता है। सारंगी एकल वादन को स्वतंत्र वादन एवं सोलो सारंगी वादन भी कहा जाता है। एकल वादन में वादक अपने गुरु से प्राप्त की हुई शिक्षा को प्रस्तुत करता है। जब भी किसी शागिर्द को तालीम दी जाती है तो उसे एकल वादन ही सिखाया जाता है। एकल वादन के अंतर्गत उसे अलंकार, थाट, राग, आलाप, तान, गमक, सपाट, विलंबित खयाल, छोटा खयाल सिखाया जाता है। प्रभावी एवं सही संगत वही कहलाती है जिसमें मुख्य कलाकार की प्रस्तुति में आनन्द की वृद्धि हो और सारंगी की वजह से कोई बाधा ना उत्पन्न हो।

सारंगी में संगत को लेकर इस प्रकार से विचार किया गया है कि जिस प्रकार के संगीत के साथ सारंगी बजायी जा रही है उसी रस के अनुकूल सारंगी वादक भी संगत करे। यदि शास्त्रीय संगीत के साथ संगत की जा रही तो सारंगी भी शास्त्रीय अंदाज़ में ही बजायी जाएगी और यदि गज़ल, ठुमरी, दादरा के साथ संगत की जा रही है तो सुगम संगीत के अंदाज़ में सारंगी बजायी जाएगी।

गायन की संगत :– गायन की संगत करते समय सारंगी वादक को यह ध्यान रखना चाहिए कि गायक किस तरह की संगत चाहता है। जैसे कई गायकों को हूबहू अपने गायन के साथ संगत करवाना पसंद होता है। वे यह चाहते हैं की सारंगी वादक एक मिनिट के लिए भी ना रुके। जैसे आलाप, तान, मुरकी, खटके जो गायक गा रहा है वह हूबहू साथ के साथ बजाता चला जाये। किन्तु कुछ गायक ऐसी संगत से परेशान होते हैं ऐसी संगत से उनका ध्यान भंग होता है और गाने में असुविधा होती है, इसीलिए वे यह चाहतें हैं की सारंगी वादक बीच बीच में कभी कभी बजाये। उन्हें यह लगता है की सारंगी निरंतर साथ बजने से कहीं उनका गायन दब ना जाये। इसीलिए सारंगी वादक को हमेशा गायक से एक पायदान नीचे रहकर एवं उसके मिज़ाज को समझकर संगत करना चाहिए। सारंगी वादक को ऐसा कतई नहीं करना चाहिए की गायक अगर गंधार तक ही स्वर विस्तार कर रहा है तो वह खुद पंचम या निषाद को दर्शाकर लौट आए या फिर गायक अगर एक तान गा रहा है तो सारंगी वादक उसके जवाब में दो या तीन तान बजाने लगे। ऐसा करना संगत की दृष्टि से ठीक नहीं माना जाता।

तबले की संगत :– तबले के साथ संगत करते समय यह नितांत आवश्यक है कि सारंगी वादक लय का पक्का हो और उसे तबला समझ में आता हो। क्योंकि टुकड़े, तिहाई, चक्रदार का कुछ भाग बीट पर आता है और कुछ भाग ऑफ बीटपर आता है। इसकी समझ सारंगी वादक को होना आवश्यक है कि कौनसी भाग बीट पर आएगा और कौनसा भाग ऑफ बीट पर आएगा। सारंगी वादक को विभिन्न तालों के लहरे खंड के हिसाब से आना अति आवश्यक है।

नृत्य की संगत :– नृत्य की संगत करते समय सारंगी पर अधिकतर लहरा ही बजाया जाता है। किन्तु कभी कभी नृत्य में भाव को दर्शाने के लिए सारंगी पर भावपूर्ण, सुरीले एवं मीठे आलाप बजाये जाते हैं। लय की समझ नृत्य के साथ भी उतनी ही आवश्यक है जितनी की तबले के साथ संगत करते समय होनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *सारंगी की उत्पत्ति और सारंगी के प्रकार (scotbuzz-org)*
2. *जोशी उमेश, भारतीय संगीत का इतिहास, मानसरोवर प्रकाशन महल फिरोजाबाद (उत्तर प्रदेश) 1957*
3. *परांजपे सरचंद्र, संगीत बोध, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल (मध्य प्रदेश) 1972*
4. *वसंत, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय हाथरस (उत्तर प्रदेश)*
5. *'यमन' कुमार अशोक, संगीत रत्नावली, अभिषेक पब्लिकेशन्ज (नई दिल्ली) 2015*
6. *(186) Dhruba Ghosh demonstrates the sarangi & YouTube*
7. *(186) UstadAbdul Latif Khan Sarangi Interview on DD National & YouTube*
8. *(187) Ustad Sarwar Hussain (Sarangi) I SPIC MACAY Infoanalytica & YouTube*

जोधपुर राज्य में साहित्यिक विकास की रूपरेखा : 17 वी – 18 वी शताब्दी के विशेष संदर्भ में

डॉ. वीरेन्द्र शर्मा
सहायक आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

शोध सारांश : जोधपुर राज्य न केवल अपने पराक्रम के गौरवशाली इतिहास के लिए जाना जाता है बल्कि इसकी पहचान उत्कृष्ट साहित्य की विरासत के रूप में भी है। आरंभ से ही जोधपुर राज्य मे कवियों और लेखकों को राजकीय संरक्षण उपलब्ध करवाया गया जिसके चलते लेखन में दोहा, सोरठा, कवित्त, सवैया, छप्पय आदि प्रसिद्ध छन्दों के साथ साथ सार्दूल विक्रीडित, अनुष्टुप् आर्या, मनोहर, नाराच, हरिगीतिका, भुजंगी आदि का व्यापक प्रयोग दिखाई देता है। तत्कालीन साहित्य लेखन में लौकिक, ऐतिहासिक और धार्मिक विषयों पर विशेष बल दिया गया था। साहित्य की इस विरासत को आगे बढ़ाने में जसवंत सिंह और अजीत सिंह का विशेष योगदान रहा है।

संकेताक्षर : *ख्यात, चरित, दूहा, विगत, कथा, ख्याल, दवावैत, इतिवृत।*

राजपूताना के जोधपुर राज्य में साहित्य की उन्नत व समृद्ध परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। इस परम्परा का प्राचीनतम और महत्त्वपूर्ण प्राप्य ग्रन्थ ‘वीरमायण’ है, जिसकी रचना दाढी जाति के बादर या बहादर नामक व्यक्ति ने की थी। इसमें राव वीरमजी राठौड़ का शौर्य–वर्णन है। राठौड़ों की ख्यातों में “वीरमायण” के अनेक दोहों तथा उक्तियों का प्रयोग हुआ है। जिन्होंने आगे चल कर कहावतों का रूप ले लिया महाराजा गजसिंह से पूर्व बारहठ माशानन्द, दुरसा जी आढा, ईसरदास तथा माधोदास दधवाडिया आदि अनेक कवि यहाँ हुए, परन्तु सर्वाधिक ख्याति राजरानी मीरा को ही प्राप्त हुई। गजसिंह के समय में इस क्षेत्र में अधिक प्रगति हुई। गाउण शाखा के चारण कवि केशवदास, हेम कवि, हरिदास बानावत तथा बारहठ राजसी उसके समय के प्रसिद्ध कवि थे। महाराजा की प्रशंसा में केशवदास ने ‘गुण–रूपक’ तथा हेमकवि ने ‘गुण भाषा चरित्र’ की रचना की थी।

जोधपुर राज्य की यह साहित्यिक परम्परा महाराजा जसवन्तसिंह के समय में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई। जसवन्त सिंह स्वयं एक उत्कृष्ट कवि थे और उनका स्थान रीतिकालीन कवियों में बहुत ऊंचा है। ‘भाषा–भूषण’ उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति है जिसमें अलंकारों का बहुत सुन्दर वर्णन किया गया है और अलंकारों के लक्षण के साथ–साथ उदाहरण भी प्रस्तुत किए गये है। ‘भाषा भूषण’ के अतिरिक्त ‘अपरोक्ष सिद्धान्त’, ‘अनुभव–प्रकाश’, ‘आनन्द–विलास’, ‘इच्छा–विवेक’, ‘प्रबोध–चन्द्रोदय’, ‘पूली जसवन्त संवाद’, ‘फुटकर दूहा संग्रह’, ‘सिद्धान्त–सार’, और ‘सिद्धान्त–बोध’ नामक वेदान्त और तत्वज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ भी उन्होंने लिखे ।

जसवन्त सिंह के मन्त्री मुहणोत नैणसी राजस्थान के साहित्यकारों में उच्च स्थान प्राप्त है। उनके द्वारा रचित ‘ख्यात’ में राजपूताना, गुजरात, काठियावाड, बघेलखण्ड एवं बुन्देलखंड का महत्तवपूर्ण इतिहास है। ख्यात के अन्तिम भाग ‘‘जोधपुर रा परगना री विगत’ में जोधपुर राज्य के परगनों व गाँवों का ऐतिहासिक भौगोलिक वर्णन तथा राठोड़ों की विभिन्न जातियों का विस्तृत वर्णन है। जसवन्तसिंह के आश्रित कवियों में से दलपति मिश्र ने ‘जसवन्त उद्योत’ की रचना की, जो ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। नरहरिदास बारहठ, नवीन एवं निधान महाराजा के अन्य आश्रित कवि थे। इनमें से प्रथम नरहरिदास ने अवतार चरित्र, ‘दसम स्कन्ध भाषा’, ‘रामचरित्र कथा’, ‘अवतार–गीता’, ‘नरसिंह अवतार कथा’ आदि अनेक भक्ति सम्बन्धी ग्रन्थों की रचना की और उसे काफी ख्याति प्राप्त हुई। जसवन्तसिंह के आश्रय से बाहर भी जोधपुर में कई कवि हुए, जिनमें से वृन्द का नाम उल्लेखनीय है। उसकी ‘सतसई’ साहित्य की अमूल्य निधि है।

साहित्य विकास की यह धारा महाराजा अजीतसिंह के शासन काल तक पूर्ण पल्लवित हो चुकी थी। चूँकि अजीत सिंह का सम्पूर्ण जीवन युद्ध एवं संघर्षों में ही व्यतीत हुआ था, अतः इस काल में हमें साहित्य की प्रगति में वह तीव्रता दृष्टिगत नहीं होती जो उसके पिता के समय में थी यद्यपि इस काल के साहित्यकारों में कोई भी उच्चकोटि का विद्वान न था, तथापि अजीत सिंह अपने वंशानुगत साहित्य–प्रेम से वंचित नहीं थे। उसने यथासम्भव इस साहित्यिक परम्परा के विकास में योगदान दिया और अपने पिता की भांति कई ग्रन्थों को रचना की। यद्यपि उसकी रचनाओं को मीराबाई, जसवन्त सिंह तथा महाराजा मानसिंह की कृतियों की भांति प्रसिद्धि प्राप्त न हो सकी, तथापि उसकी साहित्य–साधना अपना विशेष महत्त्व रखती है।

महाराजा अजीतसिंह की सर्वश्रेष्ठ रचना 'गुणसार' है। यह रचना एक वृहद् ग्रन्थ न होकर अनेक रचनाओं का संग्रह है। आरम्भिक चौबीस दोहों में कवि ने गणेश एवं शक्ति की वंदना की है। इसके उपरान्त हिंगुलाज देवी की स्तुति की गई है। गुणसार की अगली रचना 'देवी चरित्र शुभ–निशुंभ वध' में शुंभ व निशुंभ नामक राक्षसों के विरुद्ध देवताओं का हिंगुलाज देवी से सहायता मांगना, देवो का उनकी सहायता के लिये जाना तथा राक्षसों को मारना वर्णित है। चौथी रचना 'सर्वांग–रक्षा–कवच' में देवी की स्तुति, उसकी सर्वव्यापकता तथा कृपा का वर्णन है। 'भवानी सहस्त्रनाम' गुणसार ग्रन्थ की पांचवी रचना है। इसमें अजीतसिह ने देवी को अन्य सभी देवताओं में श्रेष्ठ बताकर उसके सहस्त्र नामों का वर्णन किया है। अगली रचना केवल पन्द्रह छन्दों की है, जिसका नाम 'भवानी–स्तुति' है। सातवी रचना 'दुहा श्री ठाकुरां' में अजीत सिंह ने कृष्ण चरित्र के दो प्रसंगों – यमुना तट पर गोपियों का चीर हरण तथा कंस वध का सुन्दर वर्णन 171 दोहों में किया है। अगली रचना 'दुहा श्री अजयीतसिंह जी रा कहया' में कवि ने 128 दोहों में अपने जन्म की कथा का वर्णन किया है और स्वयं को देवी का अवतार बताया है। गुणसार की नवीं व अन्तिम पद्य–रचना है 'निर्वाण दुहा'। इसमें मोक्ष प्राप्त करने से सम्बन्धित दोहे हैं और भक्ति को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना गया है।

इन नौ रचनाओं के अतिरिक्त गुणसार में 'रतना कॅवर रतनावतीरी बात' नामक एक कथा भी संगृहित है। यह मुख्यतः गद्य में है, परन्तु बीच–बीच में दोहे भी लिखे हुए हैं। इसमें निम्नलिखित शीर्षकों में अनेक प्रसंगों का वर्णन है जैसे रागों का वर्णन,राजा सुमति का ऋषिवरों को उपदेश, गीता का दसवां अध्याय, पापी की गति, ध्रुव वर्णन, भागवत का चौथा स्कंध, एक धार्मिक नृप की कथा, महाभारतीय राज्य स्थिरता, एकादशी कथा, हेमाद्रि प्रयोग, हास्य–विनोद, माता का सतीत्व, पिता की अन्तिम स्वराज्य क्रिया, ऋतुओं के दोहे, स्वप्नों के दोहे, पखवाड़े के दोहे, परस्पर दम्पति पत्री, कृतज्ञ लक्षण पुत्र–पाठन, पुत्र को विविध शिक्षा,पति आगमन, वसंत वर्णन, सिंहादि गुण वर्णन, हिंगलाज स्तुति, गंगा स्तुति एवं पपीहे के दोहे।

'गज–उद्धार–ग्रन्थ' अजीतसिंह की द्वितीय महत्त्वपूर्ण रचना है। यह भागवत की कथा पर आधारित है। मध्यकालीन भक्ति साहित्य में भगवान के नाना रूपों और चमत्कारों का वर्णन करने की जो परिपाटी पाई जाती है, 'गज–उद्धार ग्रंथ उसी परम्परा की एक कड़ी प्रतीत होता है। कवि ने गम के माध्यम से अत्यन्त मार्मिक आत्मनिवेदन किया है।

अजीत सिंह की अन्य उल्लेखनीय रचना 'भाव–विरही' है। 1711–12 ईå में इसकी रचना हुई थी। इसमें नायक व नायिका के विरह सम्बन्धी तिरासी दोहे है। प्राप्य प्रतिलिपि में इन दोहों के बाद कुछ पृष्ठ रिक्त है, जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि यह रचना अपूर्ण है । इन रचनाओं के अतिरिक्त अजीत सिंह जी ने बहुत से दोहो की रचना भी की।

उसके लिखे हुये लगभग दो सो चौतीस दोहे 'अजीत सिंह रे बिरवे रे दोहे' के नाम के प्रसिद्ध है। इन दोहों में अजीत सिह के संकट के दिनों में सहायता करने वाले तथा विरोधी बने रहने वाले सरदारों का उल्लेख किया गया है। प्रसंगवश कहीं कहीं घटनाओं का भी संकेत मिलता है। यह कृति भी अपूर्ण प्रतीत होती है क्योंकि इसमें मोहकम सिंह द्वारा जालोर पर अधिकार करने का उल्लेख है, परन्तु अजीतसिंह का पुनः वहाँ अधिकार कर लेना वर्णित नहीं है।

'दुर्गासप्तशती का भाषानुवाद', 'महाराजा श्रीअजीतसिंह जी री कविता व महाराजा अजीतसिंह जी रा गीत' नामक तीन अन्य रचनाएँ भी अजीतसिंह द्वारा लिखित कही जाती हैं। ''मिश्र–बन्धुओं ने 'राजारूप का ख्याल' नामक एक अन्य कृति का उल्लेख भी किया हैं।" परन्तु ये सभी रचनाएँ अप्राप्य हैं। अजीतसिंह का सर्वाधिक रुचिकर विषय हिंगुलाज देवी की स्तुति था।

सम्भवतः इसका कारण यह था कि वह स्वयं को देवी का अवतार समझता था और शक्ति की उपासना किया करता था। इसके अतिरिक्त उसने विविध विषयों पर रचनाएं की थीं। अजीतसिंह ने विषयों का चुनाव एवं प्रतिपादन बड़ी कुशलता से किया है। धर्म सम्बन्धी विषय प्राचीन होने पर भी, अभिव्यक्ति की सुन्दरता के कारण अपने में एक नवीनता रखते है अजीत सिंह में किसी प्रसंग का वर्णन करने की अद्‌भुत क्षमता है। 'ठाकुरां रा दुहा' में 'चीरहरण' प्रसंग में यह प्रत्यन्त स्पष्ट है। व्यग्य एवं उपालम्भ का सुन्दर वर्णन 'कंस वध' प्रसंग में दृष्टिगत होता है। 'गज-उद्धार' में हथिनियों का करुण विलाप, गज और ग्राह का युद्ध, गज की आर्त पुकार आदि स्थलों पर अभिव्यक्ति अत्यन्त मार्मिक है। श्रंगार रस के दोनों पक्षों-संयोग व वियोग- करुण, शान्त एवं वीर रस के सुन्दर उदाहरण महाराजा अजीतसिंह की रचनाओं में पाये जा सकते हैं।

अजीतसिंह की भाषा साहित्यिक स्तर की होते हुए भी कठिन नहीं है। भाषा सर्वत्र विषय एवं प्रसंग के अनुकूल है। उसमें इतना प्रवाह है कि रचनाओं को पढ़ते समय कहीं भी दुरुहता का सामना नहीं करना पड़ता। उसकी भाषा में प्रसाद गुण का प्रभाव है। अजीतसिंह ने गद्य व पद्य दोनों में रचनाएँ की थीं। राजस्थानी गद्य पर भी उसका पूर्ण अधिकार था।

अजीतसिंह ने अपनी रचनाओं में विभिन्न छन्दों का प्रयोग किया। उसकी रचनाओं में दोहा, सोरठा, कवित्त, सवैया, छप्पय आदि प्रसिद्ध छन्दों के अतिरिक्त सार्दूल विक्रीडित, अनुष्टुप् आर्या, मनोहर, नाराच, हरिगीतिका, भुजंगी आदि का प्रयोग भी सफलतापूर्वक किया गया है। अलंकारों का भी कहीं कहीं सुन्दर प्रयोग दिखाई पड़ता है। इस प्रकार अजीतसिंह ने अपनी रचनाओं में भावपक्ष व कलापक्ष का जो सुन्दर समन्वय किया उसके आधार पर उसे एक उच्च कोटि का साहित्यकार स्वीकार करना होगा।

अजीतसिंह ने स्वयं रचना करने के साथ-साथ विभिन्न कवियों को अपने आश्रय में रखकर साहित्य की उन्नति में सहयोग भी दिया। भट्ट जगजीवन उसके दरबार का प्रमुख कवि था। उसने संस्कृत भाषा में 'अजितोदय' नामक एक वृहद् ग्रन्थ की रचना की इस ग्रन्थ में बत्तीस सर्गों में अजीतसिंह के जन्म से लेकर मृत्यु तक की सम्पूर्ण घटनाओं का विवरण है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण महाकाव्य है।

बालकृष्ण दीक्षित नामक एक अन्य कवि ने भी अजीतसिंह की प्रशंसा में 'अजितचरित्र' नामक संस्कृत भाषा का ग्रन्थ लिखा। इसमें अजीत सिंह के जीवन की कुछ मुख्य घटनाओं का प्रशंसायुक्त विवरण है। यह भी सम्भवतः अजीतसिंह का दरबारी कवि था।

इन दोनों संस्कृत के कवियों के अतिरिक्त द्वारकादास दधवाड़िया, हरीदास तथा श्यामराम अजीतसिंह के अन्य प्रमुख आश्रित कवि थे। द्वारकादास, जोधपुर राज्य के प्रसिद्ध कवि माधोदास दधवाड़िया का पुत्र था। उसने 'महाराजा अजीतसिंह री दवावैत' नामक ग्रन्थ की रचना की थी, जिसमें महाराजा के शौर्य, पराक्रम और वैभव का सुन्दर वर्णन है। इसके साथ ही इसमें महाराजा की शासन व्यवस्था सम्बन्धी सूचनाएं तथा जोधपुर के पूर्ववर्ती कवियों का संकेत भी मिलता है। इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से यह ग्रंथ महत्वपूर्ण है। अजीत सिंह ने इस रचना पर प्रसन्न होकर द्वारकादास को जैतारण परगने में स्थिति बासनी नामक गाँव प्रदान किया था। इस ग्रन्थ के अतिरिक्त द्वारकादास के फुटकर गीत भी पाये जाते हैं। द्वारकादास की भाषा सरल है, तथा उसकी रचनाओं में सर्वत्र प्रसाद गुण पाया जाता है।

हरिदास भाट का जीवन सम्बन्धी इतिवृत अंधकार में है। केवल इतना निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि वह महाराजा का आश्रित कवि था। हरिदास ने अपने आश्रयदाता की प्रशंसा में अजीतसिंह-चरित्र' नामक ग्रन्थ की रचना की, जिसमें अजीतसिंह के जीवन के प्रारम्भिक अठाईस वर्षों की घटनाओं का वर्णन है। इसके अतिरिक्त 'अमर बत्तीसी' तथा 'राव अमरसिंह गजसिंगहोत रा रूपक सवैया उसकी अन्य रचनाएँ हैं। डिंगल भाषा का यह एक अच्छा कवि था।

श्यामराम प्रथवा रामश्याम कायस्थ भी अजीतसिंह का एक अन्य आश्रित कवि था। इसका रचना काल सन् 1720-21ई. के लगभग माना जाता है। 'ब्रह्माण्ड-वर्णन' इसका प्रमुख ग्रंथ है, जिसमें भूगोल, खगोल, स्वर्ग, पाताल आदि का वर्णन है ।

अजीतसिंह के समय में उसके आश्रय से बाहर भी कई कवियों का प्रादुर्भाव जोधपुर में हुआ। इन कवियों में से रामस्नेही पंथ की रैण शाखा के प्रवर्तक दरियाव जी का नाम प्रमुख है। दरियाव जी ने सन् 1712-13 ई. के लगभग अपने गुरु तेम दास से दीक्षा ली थी और तदुपरान्त रैण नामक स्थान पर अपनी गद्दी स्थापित की जो आज तक विद्यमान है। यहाँ पर दरियाव जी का एक बड़ा सा चित्र रखा है, और चैत्र के महिने की

पूर्णिमा को बहुत से लोग इनके दर्शन के लिये आते हैं। कुछ लोग इन्हें मुसलमान मानते है, परन्तु इनके शिष्य इसे स्वीकार नहीं करते हैं। इन्होंने लगभग दस हजार पद के 'वाणी' नामक एक वृहद ग्रन्थ की रचना की थी। दरियावजी की भाषा सुव्यवस्थित एवं कवित्वपूर्ण है।"

अजीतसिंह के समय में मेड़ता परगने में माधवराम, रूपजी एवं तिलोकराम नामक कवि हुये। माधवराम ने 'शक्ति-भक्ति प्रकाश', 'शंकर-पचीसी' एवं 'माधवराम-कुण्डली' नामक ग्रन्थों की रचना की। रूपजी ने सन् 1692 -93 के लगभग नायिका भेद से सम्बन्धित 'रसरूप' तथा तिलोकराम ने सन् 1710- 11 के लगभग 'रस-प्रकाश' व 'भावदीपक' नामक ग्रन्थ लिखे । सन् 1722-23 ई. के लगभग पीपाड़ के जागीरदार राठौड़ माधोसिंह के आश्रय में बेनीराम नामक एक जैन मतावलम्बी कवि हुआ, जिसने 'जिनरस' नामक ग्रन्थ की रचना की। एक अन्य कवि सतीभाटदास द्वारा रचित सोलह दोहे मिलते हैं। यह दोहे सन् 1707 ई. में जब अजीतसिंह ने जोधपुर पर अधिकार किया था, उस समय के हैं, और इनमें महाराजा के यश का वर्णन तथा राजा द्वारा विभिन्न व्यक्तियों को गांव दिये जाने का उल्लेख है। इसके अतिरिक्त इस कवि का न तो कोई उल्लेख मिलता है, न अन्य कोई रचना।

इस प्रकार अजीतसिंह ने अपनी व्यक्तिगत साहित्य-साधना द्वारा तथा विभिन्न कवियों को प्रश्रय देकर जोधपुर राज्य की साहित्यिक परम्परा को बनाए रखने के साथ साथ आगे बढ़ाने में भी पूरा योगदान दिया ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *लाइफ एंड टाइम्स ऑफ महाराजा जसवंत सिंहः डॉ एन सी राय, यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन, 1974*
2. *महाराजा अजीत सिंह की अन्य रचनाएंः अगरचंद नाहटा, राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर, 1995*
3. *परंपरा, अंक 17 : नारायण सिंह भाटी, राजस्थानी शोध संस्थान, 2008*
4. *गुणसार : संख्या 15 : पुस्तक प्रकाश, जोधपुर, 2000*
5. *राजस्थान का ऐतिहासिक गद्य साहित्य : ओम प्रकाश शर्मा, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर 2000*

ज्योतिषशास्त्र में राशिचक्र का जातक पर प्रभाव

डॉ. हरकेश बैरवा
सह–आचार्य, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा

SHODH SHREE ज्ञानं भारः क्रियां विना ISSN 2277-5587 RNI RAJHIN/2011/40531
shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्रत्येक राशि की अपनी ताकत और कमजोरियाँ, अपने स्वयं के विशिष्ट गुण, इच्छा एवं जीवन तथा लोगों के प्रति रवैया होता है। जन्म के समय ग्रहों की स्थिति के विश्लेषण के आधार पर जन्मांगचक्र व्यक्ति की बुनियादी विशेषताओं, प्राथमिकताओं और कमियों की एक झलक प्रस्तुत करता है। ज्योतिष हमें सकारात्मक गुणों की एक बेहतर समझ देने में सहायक और नकारात्मकता से उबारने में मदद करता है। राशि चक्र, नक्षत्रों का एक घेरा या समूह है जिसके माध्यम से सूर्य, चंद्रमा और ग्रह आकाश में पारगमन करते हैं। यदि हम राशिफल की 12 लग्नों के विशिष्ट तत्त्वों को जान लें तो वास्तव में लोकयात्रा बहुत सफल हो सकती है। हम सभी में वायु, अग्नि, पृथ्वी और जल ये चार राशि चक्र तत्त्व मौजूद हैं, जो हमारे भीतर कार्यरत एक अनिवार्य प्रकार की उर्जा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

संकेताक्षर *: ज्योतिष, लग्न, राशिचक्र, क्रान्तिवृत, क्षितिज, जातक, जन्मांगचक्र, अहोरात्र, सत्त्वसम्पन्न, विहितकर्म आदि।*

ज्योतिषशास्त्र या एस्ट्रोलॉजी (ग्रीक भाषा में 'तारा समूह का अध्ययन' अर्थ लिया है) प्रणालियों, प्रथाओं और मतों का वो समूह है, जिसके जरिये आकाशीय पिण्डों की तुलनात्मक स्थिति और अन्य सम्बंधित विवरणों के आधार पर मनुष्य के व्यक्तित्व एवं उसके जीवन से जुड़े मामले, सांसारिक विषयों को समझकर उनकी व्याख्या करना और इस सन्दर्भ में सूचनाएँ एकत्रित करना रहा है। राशिचक्र वह तारामण्डलों का चक्र है जो क्रान्तिवृत्त में आते हैं और जिसको सूर्य एक साल में खगोलीय गोले में लेता है। ज्योतिषी में इस मार्ग को बारह बराबर के हिस्सों में बाँट दिया जाता है, जिन्हें राशियाँ कहा जाता है। प्रत्येक राशि का नाम उस तारामण्डल पर डाला जाता है जिसमें सूर्य उस माह में मौजूद होता है। प्रत्येक वर्ष में सूर्य इन बारहों राशियों का दौरा पूरा करके फिर शुरू से आरम्भ करता है।

राशियाँ – किसी भी समय क्रान्तिवृत का जो बिन्दु पूर्व क्षितिज का स्पर्श करता है, उस समय उस राशि अंश आदि को स्पष्ट लग्न कहते हैं। अहोरात्र (एक दिन–रात) में 12 लग्नों की आवृत्ति होती है जैसे शरीर की दसों इन्द्रियाँ (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ व पाँच कर्मेन्द्रियाँ) मन के अधीन होकर अपना विहित कार्य करती है, वैसे ही काल के दसों अवयव लग्न के अधीन होकर अपना शुशाशुभ फल देते हैं। अतः काल निर्धारण में लग्न को सबसे महत्त्वपूर्ण कालावयव मानकर उसका सूक्ष्मता से विचार किया जाता है। लग्न के बारह भेद बताये गये हैं– 1. मेष, 2. वृषभ, 3. मिथुन, 4. कर्क, 5. सिंह, 6. कन्या, 7. तुला, 8. वृश्चिक, 9. धनु, 10. मकर, 11. कुम्भ, 12. मीन।

राशियों के चिन्ह स्वरूप – मेष राशि का स्वरूप मेढ़ा या भेड़ा के सदृश होता है, यह राशि साहस, वीरता एवं अहंकार का प्रतीक मानी जाती है। वृषभ राशि की आकृति बैल या साँड़ के सदृश होती है। बैल स्वभाव से ही अधिक परिश्रमी और बहुत अधिक वीर्यवान होता है। साधारणतः वह शांत रहता है, किन्तु क्रोध आने पर वह उग्र रूप धारण कर लेता है। हाथ में वीणा धारण किये स्त्री के साथ गदा धारण किये पुरुष युगल के सदृश मिथुन राशि का स्वरूप है। जलचर एवं केकड़ा के सदृश कर्क राशि का स्वरूप है। शेर के सदृश सिंह राशि का स्वरूप है। हाथों में शस्य और अग्नि लिये

हुए नौका में बैठी युवती के सदृश कन्या राशि का स्वरूप है, इसका निवास हरी घास, भूमि, स्त्री, रतिस्थान एवं चित्रशाला में होता है। तराजू से तौलते हुए पुरुष के समान तुला राशि का स्वरूप है, इसका निवास स्थान हाज, बाजार एवं व्यावसायिक स्थलों में रहता है। बिच्छू के सदृश वृश्चिक राशि का स्वरूप है। हाथों में धनुष बाण धारण किए मनुष्य सदृश, जिसका अद्योभाग घोड़े के समान है, वह धनु राशि का स्वरूप है। मकर राशि का स्वरूप उस मगर के समान है जिसका सिर हरिण के समान है। अपने कन्धे पर रिक्त घड़ा रखे हुए पुरुष के समान कुम्भ राशि का स्वरूप है। मीन राशि परस्पर एक-दूसरे की पूँछ-मुँह में पकड़े हुए दो मछली के समान है।[1] उक्त राशियों में जन्में जातकों का स्वभाव एवं जीवन शैली कैसी रहेगी उसका विवेचन किया जा रहा है-

1. मेष राशि – मेष राशि का अधिपति मंगलग्रह का शरीर के मस्तिष्कीय क्रिया-कलापों एवं चेहरा प्रदेश पर आधिपत्य रहता है। यह राशि पुरुष संज्ञक, चर संज्ञक, पित्त संज्ञक, बसन्त ऋतु संज्ञक, अग्नितत्त्वी, अल्पसन्तति, रजोगुणी, क्षत्रियवर्णी, पृष्ठोदयी, चतुष्पदी, जलचरी, उष्ण प्रकृति, लालवर्णी, उत्तरायणी, भूमि निवासनी, पूर्व दिशा की स्वामिनी, रात्रिबली एवं क्रूर स्वभाव वाली होती है। जिस राशि में चन्द्रमा होता है, वही जातक की राशि होती है। इस राशि में जन्म लेने वाला जातक दुबला पतला शरीर वाला, अधिक बोलने वाला, उग्र स्वभावी, अहंकारी, चंचल, बुद्धिमान, धर्मात्मा, बहुत चतुर, अधिक पित्त वाला, सब प्रकार के भोजन करने वाला, उदार, कुलदीपक, स्त्रियों से अल्प स्नेही, इनका शरीर कुछ लालिमा लिये होता है। मानसागरी के अनुसार मेष राशि स्थित चन्द्र में जन्मा जातक प्रायः गम्भीर प्रकृति वाला, अल्पभाषी, चंचल नयनों वाला, धर्म एवं अर्थ का संचयन करने वाला, बड़ी जंघाओं वाला, किसी के उपकार को न मानने वाला, निष्पापी, राजा द्वारा पूजित, कामिनियों को आनन्दित करने वाला, दान करने वाला, पानी से डरने वाला कठिन कार्य को करने वाला और अन्त में मृदुभाषी होता है-

लोलनेत्रः सदा रोगी धर्मार्थकृतनिश्चयः। पृथुजंघः कृतघ्नश्च निष्पापो राजपूजितः।
कामिनीहृदयानन्दो दाता भीतो जलादपि। चण्डकर्मा मृदुश्चान्ते मेषराशौ भवेन्नरः।।[2]

2. वृषभ राशि – वृषभ राशि का अधिपति शुक्रग्रह का शरीर के मुख से कण्ठ प्रदेश तक आधिपत्य रहता है। यह राशि स्त्री संज्ञक, स्थिर संज्ञक, वात संज्ञक, ग्रीष्म ऋतु संज्ञक, मध्यसन्तति, भूमितत्त्वी, वैश्यवर्णी, रजोगुणी, पृष्ठोदयी, गौरवर्णी, उत्तरायणी, जलाश्रयी, चतुष्पदी, शीत प्रकृति, सम आवासी, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, रात्रिबली एवं सौम्य स्वभाव वाली होती है। इस राशि में उत्पन्न जातक सजावटी स्वभाव वाला, जीवन साथी के साथ मिलकर कार्य करने की वृत्ति वाला, अपने नाम को दूर-दूर तक फैलाने वाला, उदार स्वभाव वाला, भोजन का शौकीन, बहुत ही शांत प्रकृति वाला, मगर जब क्रोध आ जाये तो मरने मारने के लिये तैयार रहने वाला, बचपन में बहुत शैतान, जवानी में कठोर परिश्रमी, बुढापे में अधिक चिंताओं से घिरे रहने वाला, जीवन साथी से वियोग के बाद दुःखी रहने वाला और अपने को एकांत में रखने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार वृष राशि स्थित चन्द्र में जन्म लेने वाला जातक दानवीर, स्वच्छ प्रवृत्ति वाला, विद्याव्यसनी, सत्त्वसम्पन्न, महाबलशाली, धनवान, भोग विलासी, तेजस्वी और अच्छे मित्रों वाला होता है-

भोगी दाता शुचिर्दक्षो महासत्त्वो महाबलः। धनी विलासी तेजस्वी सुमित्रश्च वृषे भवेत्।।[3]

3. मिथुन राशि – मिथुन राशि का अधिपति बुधग्रह का शरीर के कन्धों, वक्षःस्थल और फेफड़ा प्रदेश पर आधिपत्य रहता है। यह राशि पुरुष संज्ञक, त्रिधातु संज्ञक, मध्यसन्तति, द्विस्वभावी, वायुतत्त्वी, शीर्षोदयी, शूद्रवर्णी, सत्त्वगुणी, उत्तरायणी, हरितवर्णी, समवर्णी, द्विपदी, उष्ण प्रकृति, जलाश्रयी, वनचरी, पश्चिम दिशा की स्वामिनी, रात्रिबली एवं क्रूर स्वभाव वाली होती है। मानसागरी के अनुसार मिथुन राशि में जन्मा जातक मृदुभाषी, चंचल दृष्टि वाला, दया करने वाला, संभोग में आसक्त, संगीतप्रेमी, कण्ठरोगी, यश को बढ़ाने वाला, धनवान, गुणवान, गौरवर्णी, लम्बे शरीर वाला, प्रखरवक्ता, शिल्पकला के कार्य में कुशल, विद्याध्ययन से तीव्रबुद्धि वाला, दृढ़संकल्पी, न्याय प्रिय और सभी प्रकार से समर्थ होता है-

मिष्टवाक्यो लोलदृष्टिर्दयालुमैथुनप्रियः। गान्धर्ववित्कण्ठरोगी कीर्तिभागी धनी गुणी।
गौरो दीर्घः पटुर्वक्ता मेधावी च दृढ़व्रतः। समर्थो न्यायवादी च जायते मिथुने नरः।।[4]

4. कर्क राशि – कर्क राशि का अधिपति चन्द्रग्रह का शरीर के हृदय पर आधिपत्य रहता है, इसके अलावा

उदर, वक्ष एवं गुर्दे पर भी रहता है। यह राशि स्त्री संज्ञक, चर संज्ञक, कफ संज्ञक, वर्षा ऋतु संज्ञक, बहुसन्तति, पृष्ठोदयी, जलतत्त्वी, सत्त्वगुणी, विप्रवर्णी, पाटलवर्णी, दक्षिणायनी, शीत प्रकृति, जलचरी, अपदी, उत्तरदिशा की स्वामिनी, रात्रिबली एवं सौम्य स्वभाव वाली होती है। कर्क लगन में जन्म लेने वाला जातक भौतिक सुखों में लगा रहने वाला, श्रेष्ठ बुद्धि वाला, जलविहारी, लज्जालु, कामुक, कृतज्ञ, ज्योतिषी, सुगंधित पदार्थों का सेवी व भोगी, उत्कृष्ट आदर्श वादी, स्थिरगति वाला, सचेतक, निष्ठावान, मातृ-भक्ति प्रेमी और समयानुसार निर्णय लेने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार कर्क राशि में चन्द्रमा के स्थित होने पर जन्मा जातक सभी कार्य करने वाला, धनवान, शूरवीर, धर्म में आस्था रखने वाला, गुरू का प्रिय, सिर से रोगी, महान बुद्धि वाला, दुबले-पतले शरीर वाला, सभी कार्यों का धनी, विदेश में भ्रमण करने वाला, क्रोध में अन्धा होने वाला, निर्बल, दुःखी, अच्छे मित्रों वाला, घर में अरुचि रखने वाला और कुटिल स्वभावी होता है-

कार्यकारी धनी सूरो धर्मिष्ठो गुरुवत्सलः। शिरोरोगी महाबुद्धिः कृशांग कृत्यवित्तमः।

प्रवासशीलः कोपान्धोऽबलो दुःखी सुमित्रकः।
अनासक्तो गृहे वक्रः कर्कराशौ भवेन्नरः।।[5]

5. सिंह राशि – सिंह राशि का अधिपति सूर्यग्रह का शरीर के उदर, पीठ एवं रीढ़ प्रदेश पर आधिपत्य होता है। यह राशि पुरुष संज्ञक, स्थिर संज्ञक, पित्त संज्ञक, वर्षा ऋतु संज्ञक, अल्पसन्तति, अग्नितत्त्वी, शीर्षोदयी, क्षत्रियवर्णी, तमोगुणी, धूमवर्णी, दक्षिणायनी, उष्ण प्रकृति, चतुष्पदी, वन एवं पर्वत निवासनी, पूर्व दिशा की स्वामिनी, दिवाबली एवं क्रूर स्वभाव वाली होती है। इस लग्न में जन्म लेने वाला जातक जीवन के पहले दौर में सुखी, दूसरे में दुखी और अन्तिम अवस्था में पूर्ण सुखी होता है। मानसागरी के अनुसार सिंह राशि में चन्द्रमा के विद्यमान होने पर जन्मा जातक उदार व क्षमाशील, कार्य करने में समर्थ, मद्य-मांस में सदैव आसक्त रहने वाला, स्वतन्त्रताप्रिय, देश में भ्रमण करने वाला, शीत से डरने वाला, अच्छे मित्रों वाला, विनम्र रहने वाला, शीघ्र क्रोध करने वाला, माता-पिता का प्रिय, भोग विलास में आसक्त रहने वाला तथा संसार में प्रख्यात होता है-

क्षमायुक्तः क्रियाशक्तो मद्यमांसरतः सदा।
देशभ्रमणशीलश्च शीतभीतः सुमित्रकः।
विनयी शीघ्रकोपी च जननीपितृवल्लभः। व्यसनी प्रकटो लोके सिंहराशौ भवेन्नरः।।[6]

6. कन्या राशि – कन्या राशि का अधिपति बुधग्रह का शरीर के कटि एवं लीवर प्रदेश पर आधिपत्य होता है, इसके अलावा हाथ, आँतें एवं विसर्जन तन्त्र पर भी रहता है। यह राशि स्त्री संज्ञक, वात संज्ञक, शरद ऋतु संज्ञक, पृथ्वीतत्त्वी, द्विस्वभावी, शीर्षोदयी, अल्पसन्तति, तमोगुणी, वैश्यवर्णी, पिंगलवर्णी, दक्षिणायनी, शीत प्रकृति, द्विपदी, सम आवासी, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, दिवाबली एवं सौम्य स्वभाव वाली होती है। इस राशि के जातक संकोची और शर्मीले प्रभाव के साथ झिझकने वाले, मकान, जमीन और सेवाओं का कार्य करने वाले होते हैं। मानसागरी के अनुसार कन्या राशि में चन्द्रमा स्थित होने पर जन्मा जातक भोग-विलासी, सज्जनों को आनन्दित करने वाला, सौभाग्यशाली, धर्म से परिपूर्ण, दानवीर, प्रवीण, कवि, वृद्ध व वैदिक मार्ग का अनुसरण करने वाला, संसार में लोक प्रिय, नाटक, नृत्य व संगीत की धुन में आसक्त, विदेश में भ्रमण करने वाला एवं स्त्री से दुःखी होता है-

विलासी सुजनाह्लादी सुभगो धर्मपूरितः। दाता दक्षः कविर्वृद्धो वेदमार्गपरायणः।

सर्वलोकप्रियो नाट्यगान्धर्वव्यसने रतः। प्रवासशीलः स्त्रीदुःखी कन्याजाते भवेन्नरः।।[7]

7. तुला राशि – तुला राशि का अधिपति शुक्रग्रह का शरीर के नाभि एवं चर्म प्रदेश पर आधिपत्य होता है। यह राशि पुरुष संज्ञक, चर संज्ञक, त्रिधातु संज्ञक, शरद ऋतु संज्ञक, शीर्षोदयी, अल्पसन्तति, वायुतत्त्वी, शूद्रवर्णी, रजोगुणी, श्यामवर्णी, दक्षिणायनी, द्विपदी, उष्ण प्रकृति, पश्चिम दिशा की स्वामिनी, दिवाबली एवं क्रूर स्वभाव वाली होती है। इस राशि के जातक विचारशील, शास्त्रों में अभिरुचि रखने वाले, जिज्ञासु, राजनीतिपटु, सदैव अच्छे मित्रों वाले, रोग प्रतिरोधक क्षमता की कमी वाले तथा अपना कार्य सिद्ध करने के साथ साझेदारी से व्यापार करने में दक्ष होते हैं। इनका शरीर दुबला पतला और अच्छे गठन वाला होने के कारण विपरीत योनि वाले सहज आकर्षित होते हैं। मानसागरी के अनुसार तुला राशि में जन्मा जातक अकारण क्रोध करने वाला, दुःखी, मधुरभाषी, जीवों पर दया करने वाला, चंचल नेत्र वाला, अस्थिर धन वाला, घर में ही पराक्रम दिखाने वाला, व्यापार करने में चतुर, देवों को पूजने वाला, विदेश में रहने वाला तथा अच्छे मित्रों का प्रिय पात्र होता है-

अस्थानरोषणो दुःखी मृदुभाषी कृपान्वितः।
चलाक्षश्चललक्ष्मीको गृहमध्येऽतिविक्रमः।

वाणिज्यदक्षो देवानां पूजको मित्रवत्सलः। प्रवासी सुहृदामिष्टस्तुलाजातो भवेन्नरः।।[8]

8. वृश्चिक राशि – वृश्चिक राशि का अधिपति मंगलग्रह का शरीर की जननेन्द्रिय प्रदेश पर आधिपत्य होता है। यह राशि स्त्री संज्ञक, स्थिर संज्ञक, कफ संज्ञक, हेमन्त ऋतु संज्ञक, बहुसन्तति, जलतत्त्वी, शीर्षोदयी, विप्रवर्णी, रजोगुणी, शुभ्रवर्णी, दक्षिणायनी, बहुपदी, शीतप्रकृति, जल आवासी, उत्तर दिशा की स्वामिनी, दिवाबली एवं सौम्य स्वभाव वाली होती है। मानसागरी के अनुसार वृश्चिक राशि में उत्पन्न जातक बाल्यावस्था से ही विदेश में रहने वाला, क्रूर एवं तीक्ष्ण स्वभाव वाला, शूरवीर, पीले नेत्रों वाला, परस्त्री में आसक्त रहने वाला, स्पष्टवक्ता व स्वाभिमानी, अपने भाई–बन्धुओं के प्रति निर्दयी, अपने साहस से लक्ष्मी प्राप्त करने वाला, अपनी माता के प्रति भी दुष्टबुद्धि वाला, धूर्तता और चोरी की कला का अभ्यास करने वाला हेाता है–

बालप्रवासी क्रूरात्मा शूरः पिंगललोचनः। पारदाररतो मानी निष्ठुरः स्वजने भवेत्।

साहसप्राप्तलक्ष्मीको जनन्यामपि दुष्टधीः।
धुर्तश्चौरकलारम्भी वृश्चिके जायते नरः।।[9]

9. धनु राशि – धनु राशि का अधिपति गुरूग्रह का शरीर के उरु एवं कमर प्रदेश पर आधिपत्य रहता है, इसके अलावा नितम्ब तथा यकृत पर भी रहता है। यह राशि पुरुष संज्ञक, पित्त संज्ञक, हेमन्त ऋतु संज्ञक, द्विस्वभावी, अल्पसन्तति, अग्नितत्त्वी, पृष्ठोदयी, सत्त्वगुणी, क्षत्रियवर्णी, दक्षिणायनी, सुवर्णी, द्विपदी, उष्ण प्रकृति, पर्वत निवासनी, पूर्व दिशा की स्वामिनी, रात्रिबली एवं क्रूर स्वभाव वाली होती है। इस राशि के जातक अच्छे चेहरे वाले, सुगठित शरीर वाले, लम्बा चौड़ा ललाट वाले, ऊँची और घनी भौंहों वाले, आकर्षक व्यक्तित्व के धनी, मर्यादित, ईश्वरभक्त, अधिकारप्रिय, दयालु, परोपकारी, निडर, साहसी, महत्वाकांक्षी, अति लोभी, आक्रामक और मित्रता को लम्बे समय तक निभाने वाले होते हैं। मानसागरी के अनुसार धनु राशि में जन्मा जातक शूरवीर, शुचिता बुद्धि से युक्त, मनुष्यों के हृदय को आनन्दित करने वाला, शिल्पकला विज्ञान का विशेषज्ञ, धन से सम्पन्न, अलौकिक स्त्री वाला, स्वाभिमानी, चरित्र का सच्चा, ललित शब्दों को बोलने वाला, तेज से सम्पन्न, मोटे शरीर वाला और कुल का नाश करने वाला होता है–

शूरः सत्यधिया युक्तः सात्त्विको जननन्दनः।
शिल्पविज्ञानसम्पन्नो धनाढ्यो दिव्यभार्यकः।

मानी चरित्रसम्पन्नो ललिताक्षरभाषकः। तेजस्वी स्थूलदेहश्च धनुर्जातः कुलान्तकः।।[10]

10. मकर राशि – मकर राशि का अधिपति शनिग्रह का शरीर के दोनों घुटनों एवं अस्थि प्रदेश पर आधिपत्य रहता है। यह राशि स्त्री संज्ञक, चर संज्ञक, वात संज्ञक, शिशिर ऋतु संज्ञक, दृढ़ संज्ञक, बहुसन्तति, पृथ्वीतत्त्वी, वैश्यवर्णी, तमोगुणी, पृष्ठोदयी, उत्तरायणी, पिंगलवर्णी, शीतप्रकृति, जल आवासी, चतुष्यपदी, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, रात्रिबली एवं सौम्य स्वभाव वाली होती है। इस राशि के जन्में जातक मितव्ययी, नीतिज्ञ, विचारशील, अंतर्मुखी, व्यावहारिक बुद्धि वाले, असाधारण सहनशील, स्थिर प्रवृत्ति वाले एवं विशिष्ट संगठन खड़ा करने की क्षमता वाले होते हैं। इस राशि का स्वामी अनुकूल होने पर जातक ईमानदार, सजग और विश्वसनीय होते हैं प्रतिकूल होने पर अहंकारी, निराशावादी, अत्यधिक अपरिश्रमी व चिंतन पक्षाघात की समस्या वाले होते हैं। मानसागरी के अनुसार मकर राशि में जन्मा जातक अपने कुल को नष्ट करने वाला, स्त्रियों के वशीभूत, विद्वान, दूसरों की निन्दा करने वाला, गीत–संगीत का विशेषज्ञ, सुन्दर स्त्रियों का प्रियपात्र, बहुपुत्रों से युक्त, माता का प्रिय, धनवान, त्याग करने वाला, अच्छे नौकरों वाला, बहुत भाई–बन्धुओं पर दया करने वाला तथा सुख के लिए अधिक चिन्ता करने वाला होता है–

कुल नष्टो वशः स्त्रीणां पण्डितः परिवादकः। गीतज्ञो ललिताग्राह्यो पुत्राढ्यो मातृवत्सलः।

धनी त्यागी सुभृत्यश्च दयालुबहुबान्धवः।
परिचिन्तितसौख्यश्च मकरे जायते नरः।।[11]

11. कुम्भ राशि – कुम्भ राशि का अधिपति शनिग्रह का शरीर की दोनों पिण्डलियों तथा आँत प्रदेश पर आधिपत्य रहता है। यह राशि पुरुष संज्ञक, स्थिर संज्ञक, त्रिधातु संज्ञक, शिशिर ऋतु संज्ञक, बहुसन्तति, शीर्षोदयी, वायुतत्त्वी, शूद्रवर्णी, तमोगुणी, विचित्रवर्णी, उत्तरायणी, सम आवासी, उष्ण प्रकृति, अपदी, पश्चिम दिशा की स्वामिनी, दिवाबली एवं क्रूर स्वभाव वाली होती है। कुंभ राशि में जन्में जातक शर्मीले, शांतचित्त, ऊर्जावान, गहन विचारक, श्रेष्ठ बौद्धिक, दूसरों की

मदद करने में तत्पर, वैज्ञानिक, शिल्पकला में प्रवीण, अन्वेषणशील एवं आसानी से समस्याओं का समाधान करने वाले होते हैं। मानसागरी के अनुसार कुम्भ राशि में जन्मा जातक दान करने वाला, आलसी, कृतज्ञ, हाथी, घोड़ा व धन के स्वामी, शुभदृष्टि वाला, सदैव कोमल स्वभाव वाला, धन व विद्या के लिए प्रयत्नशील, पुण्य कर्म करने वाला, लोगों से प्रेम करने वाला, यश को बढ़ाने वाला, अपनी शक्ति से धन का उपभोग करने वाला, मेंढ़क की तरह उदरवाला तथा निर्भिक होता है–

दातालसः कृताश्च गजवाजिधनेश्वरः। शुभदृष्टिः सदा सौम्यो धनविद्या कृतोद्यमः।

पुण्याढ्यः स्नेहकीर्तिश्च धन भोगी स्वशक्तितः। शालूरकुक्षिर्निर्भिकः कुम्भे जातो भवेन्नरः।।[12]

12. मीन राशि – मीन राशि का अधिपति गुरुग्रह का शरीर के दोनों पैरों तथा एड़ी प्रदेश पर आधिपत्य रहता है। यह राशि स्त्री संज्ञक, स्थिर संज्ञक, कफ संज्ञक, बसन्त ऋतु संज्ञक, द्विस्वभावी, जलतत्त्वी, उभयोदयी, सत्त्वगुणी, विप्रवर्णी, उत्तरायणी, पिंगलवर्णी, अपदी, शीत प्रकृति, जल आवासी, उत्तर दिशा की स्वामिनी, रात्रिबली एवं सौम्य स्वभाव वाली होती है। इस राशि के जातकों में दार्शनिकता, परोपकारिता, सज्जनता, दयालुता, दानशीलता, विचारशीलता, साहस के साथ स्पष्टवक्ता, दूसरों की सहायता करने में तत्पर एवं करुणा की भावना होती है। मानसागरी के अनुसार मीन राशि में जन्मा जातक गम्भीर चेष्टा करने वाला, शक्तिशाली, बोलने में चतुर, मनुष्यों में श्रेष्ठ, क्रोध करने वाला, लोभी लालची कंजूस, ज्ञानवान, श्रेष्ठ गुणों से युक्त, कुल में प्रिय, सदैव सेवाभाव रखने वाला, शीघ्र चलने वाला, नृत्य गीतादि में कुशल, शुभ दर्शन वाला तथा भाई–बन्धुओं का प्रेमी होता है–

गम्भीरचेष्टितः शूरः पटुवाक्यो नरोत्तमः। कोपनः कृपणो ज्ञानी गुणश्रेष्ठः कुलप्रियः।

नित्यसेवी शीघ्रगामी गान्धर्वकुशलः शुभः। मीनराशौ समुत्पन्नौ जायते बन्धुवत्सलः।।[13]

राशियों में जन्में जातकों के विहितकर्म – प्राचीन भारतीय तत्त्ववेता ज्योतिष और नक्षत्र विद्यादि से पूर्णतया परिचित थे। जब वे सूर्य–चन्द्रमा के मार्ग निश्चित कर सकते थे तो उन्हें यह भी ज्ञात रहा होगा कि विविध राशियों में उत्पन्न जातक का करणीय कार्य एवं जन्मफल कैसा होगा ? मुहूर्तगणपति अनुसार मेष राशि में जन्मा जातक को परकोटा बनाना, खदानों से धातु आदि निकालने सम्बन्धी कार्य करना, राजा का अभिषेक करना, प्रतिरोध एवं साहसिक कार्य करना चाहिए। वृषभ राशि में जन्मा जातक को कृषि कार्य, जलाशय बनाना, निर्माण–प्रतिष्ठा करना, दान देना, कन्यावरण, स्थिर कार्य करना, गृहारम्भ व प्रवेशादि कार्य करना, विवाहादि मांगलिक कर्म करना चाहिए। मिथुन राशि में जन्मा जातक को कला, आभूषण बनाने का कार्य, विज्ञान सम्बन्धी कार्य और वृष लग्न में विहित समस्त कार्य करने चाहिए, ऐसा होराशास्त्र के विद्वानों का कथन है। कर्क राशि में जन्मा जातक को शान्तिक–पौष्टिक कर्म करना, चरसम्बन्धी कार्य तथा जल संरक्षण के लिए बांध–वापी–कूप–तड़ागादि बनाना चाहिए। सिंह राशि में जन्मा जातक को राजकीय सेवा, कृषि करना, व्यापार करना, बाजार बनवाना एवं मेष राशि में कथित सभी कार्य करने चाहिए। कन्या राशि में जन्मा जातक को अलंकार, चित्रकारी, विज्ञान–औषधि, चर एवं स्थिर सम्बन्धी कार्य करने चाहिए। तुला राशि में जन्मा जातक को व्यापार करना, कृषि करना, परसेवा करना, आवागमन, वर्तन सम्बन्धी कार्य एवं तोलने का कार्य करने को तत्त्व दर्शक ऋषियों ने कहा है। वृश्चिक राशि में जन्मा जातक को राजकीय सेवा, अभिषेक करना, साहसिक कार्य करना, क्रूर, उग्र, चौर्य एवं स्थिर कार्य करने चाहिए। धनु राशि में जन्मा जातक को विवाह, पौष्टिक, यात्रा, सवारी, अग्नि ग्रहण एवं चर कार्य करने चाहिए। अगर किसी व्यक्ति की धनु लग्न की कन्या से विवाह हो तो उसे भाग्यशाली समझना चाहिए, क्योंकि ऐसी कन्या अपने पति को समझाने और सही परामर्श देने वाली होती है। मकर राशि में जन्मा जातक को दासी, चौपाये ऊँट आदि का कार्य, जल का बांधना व छोड़ना, कृषि करना एवं यात्रा सम्बन्धी कार्य करना चाहिए। कुम्भ राशि में जन्मा जातक को बीज संग्रह, नौका सम्बन्धी कार्य, जलगमन, ध्रुव एवं चर सम्बन्धी कार्य करने चाहिए। मीन राशि में जन्मा जातक को विवाह करवाना, अभिषेक करवाना, विद्या, अलंकार बनाना, पशु पालना तथा जल सम्बन्धी कार्य करने चाहिए।[14]

निष्कर्ष :– उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि राशियों के जो स्वाभाविक गुण एवं विहितकर्म पाये जाते हैं, वे सभी इन राशियों में जन्म लेने वाले जातकों में देखा जाता हैं। किंचित इनमें कुछ बदलाव भी पाया जाता हैं, जिसका कारण जन्मांगचक्र में ग्रहों की स्थिति एवं

दृष्टिपात से होता है। ज्योतिषियों ने समय के साथ-साथ नक्षत्रों की विशिष्टताओं को ध्यान में रखकर उस पर आधारित बारह राशिचक्रों की एक प्रणाली बनाई। बारह राशि चक्रों की सर्वनिष्ठता है की सूर्य और चंद्रमा की अंतःक्रिया को ही ज्योतिष के सभी रूपों में केन्द्र माना गया है। ज्योतिष विज्ञान एक सांख्यिकीय अध्ययन है। प्रस्तुत अध्ययन सांख्यिकी के सिद्धान्तों की परिकीया में लागू होगा अर्थात् निष्कर्ष सदैव प्रायिकता के शब्दों में दिया जायेगा। अतः अपवाद होना भी असंभव नहीं होगा। अध्ययन का अनुसरण किया जाये तो उचित राशियों पर उत्पन्न जातक का विहितकर्म एवं जन्मफल अपेक्षित परिणाम दे सकते हैं। विज्ञान भी सदैव प्रायोगिक परिणामों की व्याख्या करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *हरिशंकर पाठक, जातक पारिजात (1.9) प्रकाशक- चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी 2015*
2. *रामचन्द्र पाठक, मानसागरी (1.266-67) प्रकाशक- चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी 2007*
3. *मानसागरी (1.268)*
4. *मानसागरी (1.269-70)*
5. *मानसागरी (1.271-72)*
6. *मानसागरी (1.273-274)*
7. *मानसागरी (1.275-76)*
8. *मानसागरी (1.277-78)*
9. *मानसागरी (1.279-80)*
10. *मानसागरी (1.281-82)*
11. *मानसागरी (1.283-84)*
12. *मानसागरी (1.285-86)*
13. *मानसागरी (1.287-88)*
14. *मुरलीधर चतुर्वेदी, मुहूर्तगणपति (10.11-12) प्रकाशक- मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली 1988*

ISSN 2277-5587

सर्वेश्वर की कविता में ग्राम्य-संस्कृति के विविध आयाम

डॉ. प्रतिभा शुक्ला
सह आचार्य, श्री रकंपा राज. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किशनगढ़

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

नयी कविता सम्पूर्ण जीवन की कविता है। इसलिए जीवन के सुखद एवं भव्य चित्रों का वर्णन करने में वह अपने आप को सीमित नहीं करती है। कई बार आलोचकों ने नयी कविता पर समाज-विमुखता का आरोप लगाते हुए कहा है कि यह कविता समाज-सापेक्ष नहीं है। नई कविता के प्रतिष्ठित कवि सर्वेश्वरजी की कविताओं का अध्ययन करने पर यह आरोप निराधार सिद्ध होता है, क्योंकि सर्वेश्वरजी की कविताओं की मूल चेतना का एक बहुत बड़ा अंश लोक-जीवन और लोक-संस्कृति से सम्बद्ध है। कवि का यही लोक-जीवन और लोक-संस्कृति से सम्बद्धता उनको वृहद् संस्कृति से जोड़ता है। ग्राम्य संस्कृति को गहनता देने में प्राकृतिक जीवन और प्राकृतिक रंगों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। लोक-धुन, लोक-राग और लोक-भाषा का प्रयोग करके कवि ने संस्कृति को और भी अधिक जीवन्त और प्रामाणिक बनाया है।

संकेताक्षर : *नई कविता, लोक संसक्ति, काठ की घंटियाँ, बाँस का पुल, एक सूनी नाव, गर्म हवाएँ, कुआनो नदी, चरवाहों का युगल गान, पाहुन, जुहार, खटिकनें, पीला-पाग, चँवर, अंजलि, शंख, बेदरदी।*

हिन्दी साहित्य में नयी कविता का अभ्युदय प्रमुख रूप से नवीन काव्य आन्दोलन के रूप में हुआ था। इस नाम का सर्वप्रथम प्रयोग अज्ञेय जी ने किया था। ऐतिहासिक दृष्टि से **'नई कविता'** दूसरा सप्तक (1951) के बाद की कविता को कहा जा सकता है। नई कविता का लक्ष्य को बताते हुए डॉ. नगेन्द्र का विचार है ''अपने परिवेश के यथार्थ बोध और भोगे हुए जीवन क्षण की सान्द्रित अभिव्यक्ति कविता की चरमसिद्धि है, और इसका रूप नई कविता में ही मिलता है।''[1]

नयी कविता सम्पूर्ण जीवन की कविता है। केवल महिमाशाली अंशों तक वह अपने को सीमित नहीं रखती। सर्वेश्वरजी की नयी कविता की आरम्भिक रचना 'लिपटा रजाई' में यह चिन्ता अच्छी तरह से अभिव्यक्त की गई है। इस रचना में कविता और जीवन के द्वैत की व्यंग्यपूर्ण चर्चा करके कवि ने मूलः रूप से उसके अद्वैत को रेखांकित किया है-

''लिपटा रजाई में
मोटे तकिए पर धर कविता की कॉपी।
ठंड़क से अकड़ी ऊँगलियों से कलम पकड़,
मैंने इस जीवन की गली-गली नापी;
हाथ कुछ लगा नहीं,
कोई भाव कमबख़्त जगा नहीं।''[2]

एक साथ दो भावस्थितियों को आमने-सामने रखकर उनके तनाव से अर्थ को झंकृत करना नयी कविता की विशिष्ट प्रक्रिया है, जो मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय, लक्ष्मीकान्त वर्मा, जैसे कवियों की रचना में शक्ति का उत्स है। तनाव का

आरम्भिक सरल और आत्मीय रूप सर्वेश्वर में मिलता है।''[3] नयी कविता के ऊपर लगाया जाने वाला समाज विमुखता का आरोप कितना आधारहीन है, यह ऐसी कविताओं के माध्यम से अच्छी तरह समझा जा सकता है। लोक संसक्ति के इस मूल तत्व को ध्यान में रखकर कहा जा सकता है कि ''सर्वेश्वर ने नई कविता में वह किया जो आधुनिक खड़ी बोली काव्य के आरम्भिक युग में मैथिलीशरण गुप्त ने किया था। तद्भवता सार्वजनीनता और व्यापकता उनके कृतित्व के मूल गुण है।''[4]

संस्कृत शब्द संसक्ति शब्द का अर्थ है– सटे रहना, घनिष्ठ मिलन या संगम, घनिष्ठ सम्पर्क, सामीप्य, आपसी मेलजोल, घनिष्ठता, घनिष्ठ परिचय आदि।[5] वहीं लोक शब्द का अर्थ है संसार, जगत, धरती, परिवेश आस–पास आदि। इन शब्दों का अर्थ जान लेने के पश्चात् सर्वेश्वरजी की कविताओं का अवलोकन और अध्ययन करने पर कहा जा सकता है कि सर्वेश्वरजी की कविताओं में यह लोक संसक्ति–ग्राम्य संस्कृति, ग्राम्य परिवेश के रूप में सर्वत्र विद्यमान है।

यद्यपि नई कविता में लोक–जीवन और लोक–संस्कृति की विविध छवियाँ और विविध रूप वर्णित है। किन्तु सर्वेश्वर जी की कविताओं की मूल चेतना का एक बहुत बड़ा अंश लोक–जीवन और लोक–संस्कृति से सम्बद्ध है। यही लोक–जीवन सर्वेश्वर एवं उनके काव्य को संस्कृति से जोड़ता हैं। कवि ने जहाँ भी लोक–जीवन और संस्कृति को वर्ण्य–विषय बनाया है, उन कविताओं में लोक–धुन, लोक–राग और लोक–भाषा का प्रयोग करके संस्कृति को और भी अधिक जीवन्त और प्रामाणिक बना दिया है। संस्कृति को गहनता देने में प्रकृति–जीवन और प्रकृति रंगों की भी अहम भूमिका रही है। **''काठ की घंटियाँ''** से रचना–यात्रा प्रारम्भ करके **''धूप की लपेट''** तक की सतत् रचना–यात्रा में कवि कहीं भी लोक–संसक्ति और संस्कृति से अलग नहीं हुआ है।

उनके प्रत्येक काव्य–संकलन में कुछ ऐसी कविताएँ निश्चित रूप से मिलती है, जो ग्राम्य–संवेदना और संस्कृति को सूक्ष्मता, तन्मयता, आत्मीयता और सहजता से प्रकट करती है। जिनको पढ़ते समय हमें कहीं भी यह आभास नहीं होता कि यह रचनाएँ दिल्ली जैसे महानगर में रहते हुए रची गई हैं। सर्वेश्वर जी की मृत्यु के पश्चात् सर्वेश्वर जी के अन्तरंग मित्र भगवतीशरण सिंह जी ने लिखा था–''सर्वेश्वर जी एक ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें एक अन्तरंग स्नेह की तलाश शुरू से थी और बराबर बनी रही। उनके काव्य में देसी मिट्टी की सुगन्ध थी और देसी मिट्टी की सुगन्ध से सनी उनकी काव्य–प्रतिभा लगातार उर्जस्वित होती रही।''[6]

यह सत्य है कि सजग कवि अपने युग से प्रभावित होता है और युग को भी प्रभावित करता है। सर्वेश्वर की काव्य–यात्रा का प्रारम्भ भले ही रोमांटिक रहा हो, किन्तु वे अपने समय के समाज और परिवेश को न कभी उपेक्षित कर सके हैं, और न ही कभी उन्होंने ऐसा किया है। यथार्थतः श्रेष्ठ और सच्चा साहित्य वही होता है जो साहित्यकार की अनुभूति की सच्ची उपज हो और रचनाकार ने अपने लेखन में उसे सत्यता और पूर्णता से वर्णित किया हो। सर्वेश्वर जी की मूल चेतना लोक–जीवन से सम्बद्ध है, यही कारण है कि उनकी कविताओं में ग्राम्य संवेदना, ग्राम्य–संस्कृति, और ग्राम्य–जीवन का सूक्ष्मता और आत्मीयता के साथ वर्णन हुआ है। उन्होंने प्रकृति के व्यापक और विशाल दृश्यों द्वारा संस्कृति को जीवन्त किया है। 'आए महन्त बसन्त', 'जाड़े की धूप', 'मेघ आए', 'राग डींग' 'कल्याण' 'पढ़ी लिखी मुर्गियाँ', 'कुआनो नदी', 'भुजनियाँ का पोखरा', 'बाँस गाँव', 'झाड़ै रौ मँहगुआ', 'गरीबा का गीत', 'चरवाहों का युगलगान', 'सुहागिन का गीत', 'चुपाई मारो दुलहिन', 'आँधी पानी आया', 'बनजारे का गीत', 'झूले का गीत', 'सावन का गीत', 'सिपाहियों का गीत', 'गीत रह गया लेकिन– कोई', 'युग जागरण का गीत' आदि अनेक कविताओं में कवि की लोक संसक्ति के द्वारा ग्राम्य–संस्कृति और हमारा सांस्कृतिक पक्ष अभिव्यक्त हुआ है। यहाँ यह बात ध्यान रखने की है कि इनको सहज और विश्वसनीय बनाये रखने के लिए कवि ने लोक–धुनों और लोक–भाषा को ही अपनाया है। कहा जा सकता है कि जो लोग सांस्कृतिक धरोहर से परिचित होना चाहते है, लोक संस्कृति को जानना चाहते है उनके लिए सर्वेश्वर की कविताओं में बिखरी हुई ये धरोहर एक कोश का काम करती है। **'झूले का गीत'** शीर्षक की प्राकृतिक संवेदना अनुभवजन्य हैः–

'मोर पिया बदरा बन हेरे, झाँकू फिर छिप जाऊँ रे।
धरती डोलूँ अम्बर डोलूँ, हाथ न उनके आऊ रे।
बेदरदी परदेस बसे हैं, हूक करेजवा छाई रे।''[7]

इन पंक्तियों में वर्णित परिवेश, यह ललक, यह कसक हमारे सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का जीवन्त पक्ष है, जो यह

हमें यह बताता है जब घर का पुरूष आजीविका के लिए परदेश गया हो तब स्त्री पर क्या बीतती है। इस अभिव्यक्ति में न कोई बनावट है और न कोई कृत्रिमता। सावन के महीने की वर्षा और उसका त्वरित प्रभाव की संवेदना ही इस गीत की आत्मा है। इसी प्रकार **''आँधी पानी आया''** कविता में कवि की लोक संसक्ति इतनी सूक्ष्म है कि इस संवेदना को वही समझ सकता है, जिसने बहुत निकटता से इसका अनुभव किया हो –

''आँधी पानी आया, चिड़ियों ने ढ़ोल बजाया।
काली छोपी पहन दिशाएँ, बजा रही शहनाई।
अमराई की पहन घघरिया, नाच रही पुरवाई।
तरू–तरू ने शंख बजाया, धरती ने मंगल गाया।''[8]

यहाँ वर्षा ऋतु आते ही कैसे चहुँ ओर जीवन ही जीवन दिखाई देने लगता है के सुन्दर दृश्यों को कवि ने मांगलिक अवसरों पर प्रयुक्त होने वाले वाद्ययन्त्रों– ढ़ोल, शहनाई, शंख और मंगलगान के द्वारा भारतीय संस्कृति की सजीव कर दिया है। **'चरवाहों का युगलगान'** में जहाँ पुरूष और नारी के गीतमय संवाद से ग्राम्य परिवेश के रोमांटिक जीवन का मिठास भरा चित्रण है, वहीं प्रकृति और स्त्री–पुरूष की पारस्परिक सम्बद्धता, अनिवार्यता और जीवन की पूर्णता को भी अभिव्यक्ति मिली है। नारी के निषेध और पुरूष के आग्रह में जीवन का सार है, जीवन की पूर्णता है। नारी स्वर में आकाँक्षाओं का प्रेमपूर्ण आग्रह है, वही पुरूष साथी का सामीप्य लाभ पाने के लिए किया गया मीठा मनुहार है–

पुरूष स्वर – नदिया किनारे हरी–हरी घास/जाओ मत, जाओ मत।
यहाँ आओ पास बया घोंसला, मोर घरौंदा, बैठे चित्र उरेहो।

नारी स्वर – नदियाँ किनारे/सोने की खान/छुओ मत–छुओ मत।
बड़ी बुरी बान/बिछिया, मुंदरी तरकी/लाओ कहाँ धरे हो।''[9]

'आए महन्त बसन्त', और **'मेघ आए'** शीर्षक कविताओं में प्रकृति संवेदना के द्वारा लोक जीवन के सांस्कृतिक पक्ष को कवि ने सजीवता के साथ वर्णित किया। कवि अपने परिवेश और संस्कृति से बहुत गहरे जुड़ा था। प्रायः यह देखने में आता है कि जब शहर से कोई मेहमान गाँव में आता है, तो वह किसी एक विशेष घर का मेहमान नहीं होता बल्कि पूरा गाँव ही उसके आतिथ्य में जुट जाता है। स्त्रियाँ किवाड़ की ओट से घूँघट के भीतर से मेहमान को चोरी–चोरी देखती हैं। कवि ने अपनी सांस्कृतिक सम्बद्धता के प्रमाणस्वरूप इस दृश्य को अत्यन्त सार्थक शब्दावली में अभिव्यक्ति दी है –

आगे–आगे नाचती गाती बयार चली
दरवाजे खिड़कियाँ खुलने लगी गली–गली
पाहुन ज्यों आए हो गाँव में शहर के
मेघ आए बड़े बन–ठन के, संवर के
बूढ़े पीपल ने आगे बढ़कर जुहार की,
बरस बाद सुधि लीन्हीं–
बोली अकुलायी लता ओट हो किंवार की
हरषाया ताल लाया पानी परात भर के।[10]

मेघरूपी पाहुन के द्वारा सर्वेश्वरजी ने अपनी सांस्कृतिक संवेदना को जो सूक्ष्मता और गहनता दी है, वह सर्वेश्वर जी ही नहीं अपितु नयी कविता की भी महान उपलब्धि है। 'घूँघट का सरकना', 'आगे बढ़कर जुहार करना', 'बरस बाद सुधि लेना' 'परात को पानी से भरना आदि शब्द या वाक्यांश हमारी संस्कृति के बोलते शब्द और चरित्र है, जिन्होंने भारतीय संस्कृति को सहज और विश्वसनीय बना दिया है। कुछ ऐसा ही सांस्कृतिक दिग्दर्शन 'आए महन्त बसन्त' शीर्षक कविता में भी है जिसमें 'पीला पाग', 'चँवर', 'अंजलि से झरते पत्ते', 'अगरू के सुगन्धित धुँए से झूमते दिगदगन्त', 'बेसुध हवा की करताल' जैसे शब्द कवि के सांस्कृतिक बोध के जीवन्त प्रमाण है।

इनके अतिरिक्त कवि की कुछ ऐसी भी कविताएँ है जो सांस्कृतिक बोध को वैचारिक धरातल पर प्रस्तुत करती है। इनमें ग्राम्य संवेदना को नगर बोध की तुलना में व्यापकता दी गई है। यह ग्राम्य संवेदना **'कुआनो नदी'** शीर्षक रचना में विस्तारपूर्वक वर्णित किया है। इस रचना में बाढ़ के कारण पेड़ों पर बंधे खटोलों, उन पर बैठे बच्चे, नीचे कीचड़ में खड़े चौपाए, बस्ती जिले की गरीबी का दृश्य, कच्ची सड़क पर चलती बैलगाड़ियाँ, रंगे सींगो वाले बैल, गाँव के पोखरा, तालाब, पोखरों में सिंघाड़े तोड़ती खटिकनें व खटिक, लोहार, बढ़ई, फेरी वाले बिसाती, पानी में बैठकर खाना पकाती औरतें और बच्चे, काँसे की चूड़ियाँ खनकाती निराई–बुवाई के गीत गाती औरतें, सूरज डूबने पर 'लाली हो लाली की'

आवाज आदि के अनेक बिम्बों ने ग्राम्य परिवेश की संस्कृति के साथ वहाँ के निवासियों की जीवन–विसंगतियों को भी साकार कर दिया है।

''बहुत गरीब जिला है वह बस्ती,
जहाँ मैंने इस पहली बार देखा था।''[11]

इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि सर्वेश्वरजी का तन शहर में और मन गाँव में बसता था। ग्राम्य–संवेदना और संस्कृति को उन्होंने अपनी **'भुजैनियाँ का पोखरा'**, **'बाँस गाँव'** और **'झाडे रौ महँगुआ'** शीर्षक कविताओं में भी अभिव्यक्त किया है।

इन रचनाओं की भाषा शैली भी वर्ण्यविषय के अनुकूल है। जिससे लोक–जीवन और परिवेश का रंग और भी पक्का और चमकदार हो गया है। सर्वेश्वरजी का सांस्कृतिक पक्ष अत्यन्त दृढ़ है इसमें लोक संस्कृति के बिम्ब है, वे शब्द हैं, जिनका प्रयोग कहीं प्रतीक तो कहीं अभिधात्मक अर्थ में हुआ हैं। वस्तुत सर्वेश्वरजी के काव्य में संस्कृति बोध को प्रकट करने वाले अनेक तत्व है, जिनका और भी गहनता और सूक्ष्मता से अध्ययन किया जा सकता है। अन्त में डॉ.रघुवंश के शब्दों में कह सकते है कि ''सर्वेश्वर समसामयिक होकर भी युग जीवन की संपृक्ति को गहन अनुभव के स्तर पर ग्रहण कर सके हैं। उनके अनुभव में व्यक्ति और युग जीवन इस प्रकार संपृक्त है कि चरम संवेदना में भी युग का यथार्थ व्यंजित हुआ है।''[12] इसी बात को रेखांकित करता हुआ डॉ.कल्पना अग्रवाल का कथन है कि लोक संपृक्ति से तात्पर्य लोक–चेतना से है। नयी कविता में लोक–जीवन की विविध छवियाँ अंकित हुई है। सर्वेश्वर की मूल चेतना लोक–जीवन और लोक–संस्कृति से सम्बद्ध है उनकी काव्य रचनाओं में ग्राम्य–संस्कृति को पूरी सूक्ष्मता और आत्मीयता के साथ व्यक्त किया गया है।''[13]

यही नहीं संस्कृति और वह भी ग्राम्य संस्कृति से अटूट रूप से जुड़ा कवि ग्राम्य संस्कृति को विकास के नाम पर नष्ट होते देख कर वेदना से भर जाता है। अपनी इसी पीड़ा को कवि ने निम्न पंक्तियों में अभिव्यक्ति दी है–

सुनो! सुनो!
यहीं कहीं एक कच्ची सड़क थी
जो मेरे गाँव को जाती थी।
अब वह कहाँ गयी ?
किसने कहा उसे पक्की सड़क में बदल है।[14]

इस कविता में कवि ने समाप्त होती संस्कृति का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। आज पक्की सड़क पर घरघराती हुई मोटरों, ट्रकों के शोर के बीच अब नीम की निबौली, आम के टिकोरे, महुआ, इमली और जामुन नहीं बीने जाते, और तो और अब कोई सुरमई लहँगा नहीं पहनता, न हबेल और हँसुली पहनकर बकरी के पीछे भागता है। पक्की सड़की बनने के बाद बैलों के गले की बँधी घंटियाँ भी अब नहीं बजती है, न रामायण बाँची जाती है, और न ठाकुरद्वारे में कीर्त्तन होते हैं। विकास की अन्धाधुन्ध दौड़ में समाप्त होती हुई संस्कृति ने कवि के हृदय को पीड़ा से भर दिया है। इस कविता की अन्तिम पंक्ति में प्रयुक्त 'आह' शब्द ने कवि की पीड़ा को और अधिक व्यापक और गहन बनाया है–

''आह! वह कहाँ गयी।''[15]

''आह! वह कहाँ गयी'', पंक्ति की 'आह' ने विलुप्त होती संस्कृति को गहनता दी है। ''गँवई संवेदना का प्रकृति–राग तोड़ने में यान्त्रिक सभ्यता की विकृत आधुनिकता का हाथ है। इसी विकृत आधुनिकता के विकृत बाजारवाद ने आर्थिक शोषण के ढँग ईजाद किए हैं और ग्रामीण को चूसकर बर्बाद कर दिया है।''[16] पालीवालजी के इस कथन से स्पष्ट है कि इस विकासवाद और आधुनिकता ने ग्रामीण ही नहीं ग्रामीण–संस्कृति को भी तहस–नहस कर दिया है। विकास और प्रगति के नाम पर गाँव की कोख, गाँव की प्रकृति और गाँव की संस्कृति को जिस तरह उजाड़ा गया है और उजाड़ा जा रहा है, वह दर्द सर्वेश्वर कभी नहीं भूलते हैं। वे सर्वत्र इसी चिन्ता को अभिव्यक्त करते हैं, लेकिन हताश नहीं है–

''प्रश्न जितने बढ़ रहे हैं
घट रहे उतने जवाब
होश में भी एक पूरा देश बेहोश है
खूँटियों पर टंगा रह जाएगा क्या आदमी ? ''[17]

ग्राम्य–संस्कृति की यही सूक्ष्मता और आत्मीयता ने कवि को सांस्कृतिक बोध से परिपूर्ण कर दिया है। जो कवि और उनकी रचनाओं को कालजयी बनाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. नगेन्द्र का मत, डॉ.ललिता अरोड़ा- नई कविता का अनुशीलन, पृष्ठ-33
2. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना- कविताएँ-1, काठ की घंटियाँ, पृष्ठ-77
3. डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी-हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृष्ठ-236
4. डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृष्ठ-237
5. वामन् शिवराम आप्टे-संस्कृत हिन्दी कोश, पृष्ठ-1050
6. डॉ. महेश दिवाकर- सर्वेश्वर का कवितालोक, परिशिष्ट से उद्धृत
7. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना-कविताएँ-1, काठ की घंटियाँ, पृष्ठ-96
8. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना-कविताएँ-1, काठ की घंटियाँ, पृष्ठ-99
9. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना-कविताएँ-1, काठ की घंटियाँ, पृष्ठ-67-68
10. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना-कविताएँ-1, पृष्ठ-227
11. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना- कुआनो नदी, पृष्ठ-13
12. डॉ. रघुवंश- समसायिकता और आधुनिक हिन्दी कविता, पृष्ठ-31
13. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना- व्यक्ति और साहित्य, पृष्ठ-64
14. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना - कविताएँ-1, बाँस का पुल, पृष्ठ-216-218
15. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना कविताएँ-1, बाँस का पुल, पृष्ठ-220
16. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना - कृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ-33

भारतीय वैदिक वाङ्मय में महिला शिक्षा

डॉ. रजनी मीना
सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, राजगढ़ (अलवर)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

महिला शिक्षा किसी भी समाज के विकास का प्रतीक है नारी परिवार और समाज की मेरूदण्ड होती है। किसी भी राष्ट्र की स्थिति उस देश की महिलाओं की स्थिति से ज्ञात होती है। प्राचीनकाल से ही भारतीय समाज में महिलाओं को पुरूषों के समान महत्व प्राप्त था। उनकी शिक्षा-दीक्षा की समुचित व्यवस्था वैदिककाल से ही समाज द्वारा की जाती थी। वैदिक साहित्य में महिला शिक्षा के बारे में स्पष्टतः कहा गया है कि ''लड़कों के साथ लड़कियों को उचित देखभाल के साथ पोषित और प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।'' इस युग में सह शिक्षा भी सौम्य रूप में प्रचलित थी। सामाजिक, धार्मिक कृत्यों के समान शिक्षा प्राप्ति के निमित्त वे पुरूषों के समान अधिकार रखती थी। इस युग में कई महिला दृष्टाओं और विचारकों की उत्पत्ति हुई। वैदिककालीन साहित्य की अनेक ऋचाओं का सृजन महिला विदुषियों ने किया। स्त्रियों के समग्र एवं संतुलित विकास के लिए शिक्षा एक माध्यम थी। वैदिक एवं बौद्धकालीन स्त्री शिक्षा प्राचीन भारतीय वाड्मय में महिलाओं की सर्वोत्कृष्ट स्थिति को स्पष्ट करती है परन्तु कालान्तर में इस्लामिक आक्रान्ताओं के आगमन से महिलाओं की सामाजिक स्थिति के साथ उनकी शैक्षणिक स्थिति में लगातार गिरावट आई।

संकेताक्षर : *वैदिक काल, वाड्मय, ब्रह्मवादिनी, सद्योवधू, काशकृत्सनी।*

भारत देश आदिकाल से ही विश्व को अपने ज्ञान से आलोकित करता रहा है जब सारा विश्व अज्ञान रूपी अंधकार में भटक रहा था तब भारत के मनीषी उच्चतम ज्ञान का प्रसार करके मानव को पशुता से मुक्त कर श्रेष्ठ संस्कारों से युक्त कर उन्हें सच्चा मानव बना रहे थे। ज्ञान के क्षेत्र में भारत विश्व भर में अग्रणी रहा है। यहां के मनीषियों ने उद्घोष किया था किः-

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं चरित्र शिक्षेरन् पृथ्विंयां सर्वमानवाः।।

(मनुस्मृति 2.20)

विश्व के सभी देशों से विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करने भारत आते रहे हैं और विभिन्न विषयों का ज्ञान लेकर पृथ्वी के हर भाग को प्रकाशित करते रहे हैं। भारतीय शिक्षा प्रणाली के आदर्श वाक्य के रूप में वेद का अनुशासन है कि **''विशेष ज्ञानी, ज्ञानामृत से प्रतिष्ठित व्यक्ति अज्ञानियों में बैठकर उन्हें ज्ञान प्रदान करें।'' (ऋग्वेद-7.4.4)**

भारत में प्राचीन काल से शिक्षा का स्वरूप अत्यंत ज्ञानपरक, सुव्यवस्थित और सुनियोजित रहा है जिसके लिए बड़े-बड़े शिक्षा केंद्रों की स्थापना की गई थी। भारत की प्राचीन शिक्षा ने बौद्धिक एवं आध्यात्मिक दोनों क्षेत्रों में ऐसे ज्ञान आविष्कृत किये जिनके ऋणी आज भी विश्व में वैज्ञानिक तथा दार्शनिक हैं। प्राचीन विश्व में भारत को भौतिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में जो गौरव प्राप्त था उसका श्रेय भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति को ही है। अपनी विशिष्ट शिक्षा पद्धति एवं महिलाओं की श्रेष्ठ सामाजिक एवं शैक्षणिक स्थिति के कारण ही भारत ने अनेक शताब्दियों तक न केवल विश्व का सांस्कृतिक नेतृत्व किया, अपितु आर्थिक, व्यापारिक एवं वाणिज्यिक क्षेत्रों में साथ ही कला-कौशल और विज्ञान के क्षेत्रों में भी अग्रणी रहा। प्राचीन भारतीय महिला शिक्षा व्यवस्था का निर्धारण हम महिलाओं की सामाजिक स्थिति के आधार पर कर सकते हैं। वैदिक साहित्य वेद, उपवेद, पुराण, न्याय शास्त्र, मीमांसा दर्शन, धर्मशास्त्र,

शिक्षा, कल्प, व्याकरण छन्द, ज्योतिष, निरूक्त (वेदांग), उपनिषद् आदि तथा मनु, याज्ञवल्क्य बृहस्पती आदि की रचनाओं के आधार पर हम प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली को जान सकते हैं। हमारे आरण्यक और उपनिषद ऐसे आध्यात्मिक रहस्य से भरे हुए हैं जिन्हें समझ पाना आज के फलकवादी मनुष्य के लिए बड़ा ही कठिन होगा। प्राचीन भारत में शिक्षा के संतुलित विकास में वैदिक साहित्य का बहुत बड़ा हाथ रहा है। अतः प्राचीन कालीन शिक्षा की सामग्री वैदिक साहित्य पर आधारित है। प्राचीन भारतीय जीवन दर्शन को जानने का स्त्रोत वेद है। वेदों में ही मानवीय जीवन का वर्चस्व सृष्टि के प्रारंभ से आज तक सुरक्षित है। प्राचीन समाज व्यवस्थाकारों ने आश्रम व्यवस्था एवं संस्कारों के माध्यम से शिक्षा प्रणाली की व्यवस्थित आधारशिला रखी जिसमें बिना किसी भेदभाव के स्त्री और पुरूष को समान रूप से अधिकार मिला हुआ था। प्राचीन भारत में महिला शिक्षा की स्थिति को हम निम्नानुसार समझ सकते हैंः–

वैदिक काल में महिला शिक्षा

वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति सम्मानीय थी। ऋग्वेद काल एवं उत्तरवैदिक काल में महिला शिक्षा पर काफी जोर दिया गया। ऋग्वैदिक काल में नारी शिक्षा अपने चरम उत्कर्ष पर थी। **"इला सरस्वती मही तिस्त्रो देवीमयो भुवः''** ज्ञान का विस्तार करने वाली वाणी, ज्ञान की अधिष्ठात्री देवी मां सरस्वती तथा पावन शक्ति को आश्रय देने वाली पृथ्वी तीनों ही मानव कल्याणकारिणी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित की गई है। स्त्री को पुरूष की अर्द्धांगिनी इसलिए कहा गया है कि वह पुरूष की शक्ति तथा पुरूष की स्वाभाविकी ज्ञान, बल, तथा क्रिया भी है। इसलिए स्त्री को लौकिक तथा पारलौकिक उभय कल्याणों का अक्षय स्त्रोत माना गया है। पुरूष का कोई भी यज्ञ स्त्री के बिना पूर्ण नहीं होता था। ऋग्वेद मातृशक्ति का गुणगान करते हुए यहां तक उल्लेख करता है की स्त्री जिस पुरूष पर प्रसन्न होती है उसको उग्र ब्रह्म, ऋषि तथा सुर्मधा बना देती है **"यं कामये तन्तमुग्रं कृणोति तं ब्रह्म तमृषिं तं सुर्मधाम।''** अतः नारी को पारिवारिक जीवन का अक्षय स्त्रोत तथा पारलौकिक स्वर्ग–सुख का द्वार उन्मुक्त करने वाला कहकर समादृत किया गया है। ऋग्वैदिक काल में पुरूष के इस अविभाज्य अंग की शिक्षा का दिग्दर्शन 'ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्' वाजसनेयी संहिता की श्रुति के आधार पर पूर्ण रूप से लक्षित होता है। ब्रह्मचार्य व्रत से संम्पन्न शिक्षिता कन्या को ही गृहस्थ आश्रम में प्रवेश का अधिकार था। विवाह में भी 'इमं मंत्र पत्नी पठेत' इससे भी स्त्री शिक्षा की स्पष्ट प्रतीती होती है। इसके अतिरिक्त सूर्या, शची, वाक् आदि ऋषिकाओं को मंत्र की दृष्टा भी बताया गया है। ऋग्वैदिक नारी धार्मिक शिक्षा ग्रहण करती थी। अनेक सूक्तों के निर्माता के रूप में भी स्त्रियों का उल्लेख है। आत्रेयी, अपाला, विश्ववारा, सिकता, निवावरी, घोषा, काक्षीवती, लोपामुद्रा, रोमशा आदि विदुषियों का नाम हम प्रमुखतः ले सकते हैं। यहीं तक नहीं वरन उषा, अदिति, इंद्राणी, इडा, भारती, श्रद्धा आदि कितनी ही देवियों का उल्लेख अनेक तत्वों की अधिष्ठात्री देवी के रूप में आता है। इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि ऋग्वैदिक समाज में पुत्रियाँ भी धार्मिक शिक्षा ग्रहण करती थी। पुत्र की तरह पुत्री का भी विद्यारम्भ से पूर्व उपनयन संस्कार संम्पन्न किया जाता था तथा वह भी ब्रह्मचर्य का पालन करती हुई विभिन्न विषयों का अध्ययन करती थी। उसे यज्ञ संपादन और वेदाध्ययन का पूर्ण अधिकार था तथा दर्शन और तर्कशास्त्र में भी वह निपुण थी। सभा व गोष्ठियों में वें ऋग्वेद की ऋचाओं का गान किया करती थी। पति के साथ समान रूप से वे यज्ञ में सहयोग करती थी। वैदिक युग की स्त्रियाँ मंत्रविद् और पंडिता होती थी तथा बह्मचर्य व्रत का अनुगमन करती हुई उपनयन संस्कार भी कराती थी। वैदिक ज्ञान के अतिरिक्त वह ललित कलाओं में भी निपुण होती थी। ऋग्वेद में एक स्थान पर स्त्री सेना एवं कृषि में सहायता करने वाली कन्याओं का उल्लेख है। अध्ययन तथा मनन के क्षेत्र में 'स्त्रियों' की रूचि बराबर बढ़ती गई। दर्शन जैसे गम्भीर और गूढ विषय में भी वे पारगंत होने लगी। याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी विख्यात दार्शनिका थी जिसकी रूचि सांसारिक वस्तुओं और अंलकारो में न होकर दर्शन शास्त्र में थी। यही नही उसने अपने पति की संपत्ति में अपने अधिकार को याज्ञवल्क्य की दूसरी पत्नी कात्यायनी के हितार्थ त्यागकर केवल ज्ञान प्राप्त करने की याचना की थी। वैदिक कालीन विदुषी विश्ववारा को "बह्मवादिनी'' तथा "मंत्रदृष्टि'' कहा गया है।

वैदिक युग में छात्राओं के दो वर्ग थे – एक सद्योद्वाहा और दूसरा ब्रह्मवादिनी। सद्योवधू वे छात्राएं थी जो विवाह के पूर्व तक कुछ वेद मंत्रों और याज्ञिक प्रार्थनाओं का ज्ञान कर लेती थी। ये प्रमुखत वेद मंत्र, संगीत, नृत्य तथा अन्य प्रचलित ललित कलाओं का अध्ययन करती थी। तथा ब्रह्मवादिनी वे थी जो आजीवन धर्म तथा दर्शन का अध्ययन करती थी। ऋषि कुशध्वज की पत्नी वेदवती ऐसी ही ब्रह्मवादिनी स्त्री थी। ऐसी स्त्रियाँ बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न होती थी जो ज्ञान

और बुद्धि में पारंगत ही नहीं बल्कि अनेक मंत्रों की उद्गात्री होती थी। वे दर्शन, तर्क, मिमांसा, साहित्य आदि विभिन्न विषयों की पंडिता होती थी। काशकृत्सनी नामक स्त्री ने मीमांसा जैसे क्लिष्ट और गूढ़ विषय पर बहुचर्चित पुस्तक का प्रणयन किया था जो बाद में उसी के नाम पर विख्यात हुई। इस वर्ग के अध्येता 'काशकृत्सनी' ही कहे गये। ऋगवैदिक युग में छात्र-छात्राओं के लिए सहशिक्षा की व्यवस्था थी। लड़कियां लड़कों की भांति समान रूप से ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करती। उपनयन संस्कार एवं समावर्तन संस्कार के नियम दोनों पर समान रूप से लागू होते थे। अथर्ववेद में उल्लेख है कि लड़कियाँ लड़कों के समान ब्रह्मचर्य को धारण करके शिक्षा ग्रहण करें। ऋग्वेद में वर्णित 24 और अथर्ववेद में 05 वैदिक विदुषियों का उल्लेख है जिन्होंने 422 मंत्रों की रचना की। इनमें सूर्यासावित्री ने 47 मंत्र, घोषा ने 28 मंत्र, सिकता निवावरी ने 20 मंत्र, इद्रांणी 17 मंत्र, यमी वैवस्वती ।। मंत्र, दक्षिणा प्रजापात्या।। मंत्र, अदिति 10 मंत्र, वाक आम्मृणी 08 मंत्र, अपाला आत्रेयी 07 मंत्र, जुहू ब्रह्मजायो 07 मंत्र, अगस्त्यस्वसा 06 मंत्र, विश्ववारा आत्रेयी 06 मंत्र उवर्वी 06 मंत्र, सरमा देवशुनी 06 देवजामयः इंद्रमातरः 05 मंत्र, श्रद्धा कामायनी 05 मंत्र, नदी 04 मंत्र, सर्पराज्ञी 03 मंत्र, गोधा 22 मंत्र, शाश्वती आंगिरसी 23 मंत्र,। वसुक्रपत्नी 24 मंत्र, रोमशा ब्रह्मवादिनी 05 मंत्र ऋग्वैदिक विदुषियों द्वारा रचित है। इसी तरह अथर्ववेदानुसार सूर्यासावित्री ने 139 मंत्र, मातृनामा 40 मंत्र, इद्रांणी 11 मंत्र, देवजामयः 05 मंत्र तथा सर्पराज्ञी 03 मंत्रों की रचना की। वेदों में नारी को ज्ञान विज्ञान में निपुण होने के कारण ब्रह्म बताया गया है। अथर्ववेद में नारी को सरस्वती के तुल्य प्रतिष्ठित होने की कामना की है। ब्राह्मण ग्रंथों में उसे सावित्री कहा गया है। ऋग्वेद (2-19-17) में वर्णित है कि स्त्रियो पर ही जीवन आधारित है और वे शिक्षा प्रदान करती है। इसी प्रकार गृहिणी ही गृह है, वह परिवार की स्वामिनी है, समाज में अग्रणी है। इन सब उल्लेखों से भी वैदिककालीन नारी की समाज में उच्च प्रतिष्ठा की जानकारी होती है। वैदिक युग की उत्तम शिक्षा व्यवस्था से ही यह संभव हो पाया।

वैदिककाल में परिवार का वरिष्ठ सदस्य स्त्रियों को शिक्षा दिया करता था। आचार्यो द्वारा भी उत्तम शिक्षा समान रूप से दी जाती थी। माता-पिता अपनी पुत्रियों को शिक्षा प्राप्ति के निमित्त उनके पास भेजते थे हालांकि स्त्री शिक्षिकाओं की संख्या अधिक नहीं थी परन्तु उनके द्वारा भी अध्ययन अध्यापन का कार्य कराया जाता था। वैदिककालीन स्त्री की विदुषिता का प्रमाण उनके विद्वता भरे शास्त्रार्थ में दिखाई देता है। वृहदारण्यक उपनिषद में विदेह के राजा जनक के दरबार में याज्ञवल्क्य ऋषि एवं ऋषि वचक्रु की पुत्री गार्गी के मध्य विद्वता भरा शास्त्रार्थ का उदाहरण है जिससे हमें वैदिक कालीन विदुषियों की विद्वता एवं समाज में महिलाओं की स्थिति एवं उनकी शिक्षा व्यवस्था का ज्ञान होता है। वैदिक विदुषियों के इसी क्रम में ब्रह्मवादिनी वाक्र जो अम्भृण ऋषि की कन्या थी। ये प्रसिद्ध ब्रह्मज्ञानी थी और इन्होंने भगवतीदेवी के साथ अभिन्नता प्राप्त कर ली थी। ऋग्वेदसंहिता के दशम् मण्ड़ल के 125 वें सूक्त में 'देवी सूक्त' के नाम से जो आठ मंत्र है वे इन्हीं के रचे हुए हैं। चण्डीपाठ के साथ इन आठ मंत्रों के पाठ का बड़ा महात्म्य माना जाता है। इतिहासकार शकुन्तला राव शास्त्री ने ऋग्वैदिककालीन महिला विदुषियो द्वारा रचित सूक्तों को तीन कोटियों में विभाजित किया है। महिला ऋषि द्वारा लिखे गए श्लोक, आंशिक रूप से महिला ऋषि द्वारा लिखे गए श्लोक एवं महिला ऋषिकाओं को समर्पित श्लोक।

वेदों में शिक्षा को आश्रम व्यवस्था एंव सोलह संस्कारो के साथ जोड़ा गया है। औपचारिक शिक्षा उपनयन संस्कार के साथ प्रारम्भ होकर समावर्तन संस्कार के साथ समाप्त होती थी। उपनयन संस्कार (जनेऊ धारण) शिक्षारम्भ का प्रतीक था। इस संस्कार के बाद शिष्य और शिष्याएं वेद और शास्त्रों का अध्ययन करते थे। लडकों के समान लड़कियों का भी यज्ञोपवीत होता था। वे भी मेखला धारण करती थी। लड़कियों को ललित कलाओं की शिक्षा दी जाती थी।

स्नातक होने के पश्चात् ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश होता था। सद्योवात् बालिका जब तक विवाह नहीं होता था शिक्षा प्राप्त करती थी इन्हें वैदिक मंत्रों के साथ संगीत तथा नृत्य की शिक्षा दी जाती थी।

ब्रह्मवादिनी को यज्ञकार्य, वेदाध्ययन एंव भैष्यचर्या के अधिकार प्राप्त थे। विदुषी घोषा ने सार्वजनिक तौर पर स्वीकार किया है "मैं राजकन्या घोषा, सर्वत्र वेद की घोषणा करने वाली, वेद का सर्वत्र संदेश पहुँचाने वाली स्तुतिपाठिका हूँ।'' वैदिककालीन ऋषिकाओं ने वेदाध्ययन, रचना, त्याग, तपस्या द्वारा ऋषिभाव को प्राप्त किया। साधारण साहित्यिक और सांस्कृतिक शिक्षा ग्रहण करने वाली नारियों की संख्या भी उस काल में पर्याप्त रही होगी। वृहदरण्यकोपनिषद में सोम

का गायन स्त्रियों का विशेष कार्य बताया गया है। जो उनकी गान विद्या मे प्रवीणता निर्दिष्ट करने के साथ–साथ इस तथ्य का भी निर्देश करती है कि वे वैदिक मंत्रों का विधिवत तथा विशुद्ध उच्चारण के साथ पाठ करती थी। सामान्यरूपेण स्त्रियों की प्रशंसा सूचक कई उल्लेख मिलते हैं और यह कहा गया है कि उसके बिना पुरूष पूर्ण नहीं होता। स्त्री और पुरूष दोनों समान रूप से यज्ञ अनुष्ठान आदि धार्मिक कार्यो को सम्पन्न करते थे। डॉ. राधाकुमुद मुकर्जी ने हेमाद्री का उदाहरण देते हुए लिखा है "कुमारी अर्थात् अविवाहित कन्या को विद्या और धर्मनीति का अध्ययन कराना चाहिए। एक शिक्षिता कुमारी अपने पिता तथा पति दोनों का कल्याण करती है अतः उसका विवाह एक विद्वान पति अथवा मनीषी से करना चाहिए क्योंकि वह विदुषी है।''

वैदिकोत्तर काल (सूत्र/स्मृतिकाल, महाकाव्य काल)

वैदिक युग में स्त्रियों की सामाजिक और शैक्षणिक स्थिति उच्चकोटि की थी। उन्हें पुरूषों के समान शिक्षा प्राप्ति का अधिकार मिला हुआ था परन्तु उत्तर वैदिक काल में अनेक प्रतिबधं लगने से महिलाओं की स्थिति गिरने लगी थी। धर्म सूत्र में बाल विवाह का निर्देश दिया गया जिससे स्त्रियों की शिक्षा में बाधा पहुँची और उनकी शक्ति को सीमित कर दिया गया था। वे घर की चारदीवारी में कैद हो गई जिससे वे शिक्षा प्राप्त करने से वंचित होती चली गई। सूत्र तथा स्मृति युग में स्त्रियों की स्थिति पहले से ज्यादा बदतर हो गई क्योंकि उस समय बाल विवाह तथा बहुपत्नी प्रथा प्रचलन और बढ़ गया। इस युग में विवाह की आयु 12–13 वर्ष कर दी गई जिससे महिला शिक्षा में गिरावट आई। स्त्रियों के उपनयन पर प्रतिबंध और केवल द्विजों के ही उपनयन योग्य होने का चिंतन किया गया जो परिवर्तन का संकेत देता है। वैदिक परम्परा के विपरीत स्त्रियों को उपनयन से वंचित कर विद्याध्ययन से वंचित किया जो स्त्रियों को पुरूषों के समान न होने के चिन्तन का परिणाम है। विवाह के अतिरिक्त उनसे संबंधित अन्य संस्कारों में वैदिक मंत्रों का उच्चारण नहीं होता था। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री को पुरूष के नीचे ही स्थान मिलता है अतः वैदिकोत्तर काल में स्त्रियों के समस्त अधिकारों का अपहरण कर लिया गया। स्मृतिकारों ने यह निर्देश दिया कि "स्त्रियों को किसी भी अवस्था में स्वतंत्र न रखा जाए बचपन में उन्हें पिता के संरक्षण मे युवावस्था में पति के संरक्षण में रहने के साथ उनका परम कर्त्तव्य पति की सेवा माना जाता था, चाहे वह पति किसी भी तरह का हो तथा वृद्ध होने पर पुत्र के संरक्षण में रहना पड़ता था।'' विधवाओं पर कठोर प्रतिबंध लगाने तथा महिलाओं की सामाजिक दशा में हुई अवनति उनके बौद्धिक पतन की ओर इशारा करती है।

हांलाकि सूत्र युग में भी स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का निषेध नहीं था। वे वैदिक साहित्य का अध्ययन करती थी। इस युग में स्त्री शिक्षिकाएं 'उपाध्याया' या 'आचार्या' कहलाती थी। पिता की यह अभिलाषा रहती थी कि उसकी पुत्री पण्ड़िता हो। स्त्रियों को सैनिक शिक्षा दिए जाने का भी उदाहरण मिलता है, जैसा कि 'शक्तिकी' शब्द से प्रतीत होता है जिसका उल्लेख पंतजलि ने किया है, जिसका अभिप्राय 'भाला धारण किए हुए स्त्री' से है। पाणिनी ने भी वैदिक काल की नारियों का वर्णन किया है। वैदिक ज्ञान रखने वाली विदुषी महिलाओं का वर्णन 'बाल मनोरमा' में मिलता हे। वार्तिक में प्रयुक्त 'उपाध्यायी' और 'उपाध्याया' शब्द स्त्री शिक्षा के प्रमाण है। उपनिषदों में ऐसी महिलाओं का उल्लेख किया गया है जो कि अध्यापिका के रूप में कार्य करती दृष्टिगोचर होती है। इन शब्दों का प्रचलन सिद्ध करता है कि प्राचीन भारत में नारियां अध्यापन कार्य करती थी और उनकी संख्या पर्याप्त मात्रा में रही होंगी। पाणिनी के अनुसार कुछ छात्रालय थे जिनमें केवल छात्राएं ही निवास करती थी तथा इन छात्रावासों का निरीक्षण स्त्री शिक्षिकाओं के ही हाथ में था।

'गोभिल गृहसूत्र' की यदि चर्चा करे तो यह स्पष्ट होता है कि 'यज्ञानुष्ठान में भाग लेने के लिए पत्नी का शिक्षित होना अनिवार्य था।' जैमिनी पूर्व मीमांसा के अनुसार यज्ञानुष्ठान में पुरूष के समान ही स्त्री का स्थान भी निर्धारित किया गया था। सूत्र काल में ब्रह्मवांदिनी स्त्रियां उपनयन ग्रहण करती थी। ब्राह्मण बालकों की भांति 8 वर्ष में बालिकाओं को भी उपनयन ग्रहण करने का अधिकार था। उस समय बालिकाओं के लिए भी उपनयन अनिवार्य समझा जाता था। अत्यन्त शुष्क कहे जाने वाले मीमांसा साहित्य के अध्ययन की ओर नारियों की रूचि उनकी योग्यता की द्योतक थी। इस काल में कई विदुषी महिलाओं ने ग्रंथ रचना भी की जैसे– रेवा, रोहा, माधवी, अनुलक्ष्मी, शशिप्रभा, विजया, सीलो भट्टारिका तथा विद्या आदि।

महाकाव्य युग में स्त्री शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया गया। रामयण और महाभारत दोनों में कुछ विदुषी महिलाओं का उल्लेख किया गया है। फलतः यह सिद्ध हैं कि उस समय स्त्रियां शिक्षित अवश्य रही

होगी। रामायण में वर्णित शबरी पम्पापुर के आश्रम में रहकर गुरू मतंग ऋषि से उच्च आध्यात्मिक शिक्षा ग्रहण करती थी। रामायण में कौशल्या व तारा को 'मंत्रीविद' कहा गया है। इसी ग्रंथ में 'अत्रेयी' को वेदान्त का अध्ययन करते हुए बताया गया हें। राजा जनक के साथ सुलोमा भिक्षुणी दार्शनिक वाद-विवाद करती थी। महाभारत में एक वृद्धा ब्रह्मचारिणी का अष्टावक्र से धार्मिक संवाद का वर्णन मिलता है। शांडिल्य और गार्ग्य ऋषि की पुत्रियां भी ब्रह्मचारिणी थी। महाभारत में द्रौपदी को 'पंडिता एंव ब्रह्मवादिनी' कहा गया है। कुंती, माद्री, कैकयी, मन्धोदरी, सीता, देवयानी ये सभी महाकाव्ययुग की महान, आदर्श महिलाएं है जिन्होंने स्त्री समाज का शिक्षा के क्षेत्र में पथ प्रदर्शन किया। लड़कियों को व्यावहारिक व नैतिक शिक्षा के साथ साथ राजधर्म, युद्धों, संगीत, नृत्यललित कलाओं आदि की शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा के प्रमुख संस्थान घर एवं परिवार ही थे, फिर भी कुछ स्त्रियां आश्रम में शिक्षा प्राप्त करती थी।

प्राचीन भारत में सह-शिक्षा का यथेष्ट प्रचलन नहीं था, किन्तु सह शिक्षा वर्जित भी नहीं थी। प्राचीन साहित्य एंव महाकाव्यों में कुछ प्रमाण ऐसे मिलते है जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि सह शिक्षा के प्रति लोग आशंकित नहीं थे। भवभूति की रचना मालती माधव के अनुसार 'कामन्दकी' भूरिवसु तथा देवरात के साथ शिक्षित हुई थी। उत्तर रामचरित में 'ऐतरेयी' का लव-कुश के साथ शिक्षा ग्रहण करने का उल्लेख है। महाभारत में अम्बा तथा शंखवत्य के साथ-साथ पढ़ने का उल्लेख आया है। पुराणों में सुजात, कहोद, रूरू तथा प्रमदवरा की कक्षाओं का वर्णन सह-शिक्षा के प्रचलित होने का प्रमाण है। छात्र-छात्राओं में उत्तम नैतिक, आध्यात्मिक एवं दार्शनिक गुणों का विकास करना गुरूजनों का परम लक्ष्म था। इन सभी से यह स्पष्ट होता है कि लड़कियों की शिक्षा पर भी विशेष ध्यान प्राचीन काल में दिया गया जिससे आदर्श सामाजिक व्यवस्था स्थापित हो सके।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत में जिस शिक्षा पद्धति ने भारतवर्ष को विश्व में मूर्धन्य स्थान प्रदान किया था, जिसका अवलोकन और अध्ययन कर विश्व चमत्कृत हो गया था उसका संतुलित विकास नारी समाज की शिक्षा से भी हुआ। भारतीय शिक्षा का सम्बन्ध मानव जीवन के लौकिक और पारलौकिक दोनों स्तरों के विकास से था। शिक्षा का वैज्ञानिक ढांचां था जिसमें बिना किसी भेदभाव के लड़के और लडकियों को समान रूप से शिक्षा दी जाती थी। विद्यार्थी का भौतिक, आध्यात्मिक, चारित्रिक ओर सामाजिक विकास इसके माध्यम से होता था जिसमें सहशिक्षा का भी महत्वपूर्ण स्थान था। प्राचीन भारत की संस्कृति का विकास उसकी उत्कृष्ट सामाजिक स्थिति के कारण संभव हो पाया। महिला शिक्षा के माध्यम से प्राचीन भारत में अनेक उच्चकोटि की साहित्यिक रचनांए हुई। स्वस्थ परिवेश में बालिकाओं को जीवनपथ पर अग्रसर होने का अवसर प्राचीन भारत में मिला जिससे शिक्षा प्राप्ति से वे अपना चहुमुखी विकास कर पाई। बहुत समय तक स्त्रियों के लिए शिक्षा के क्षेत्र में पूर्ण अवसर रहे थे। वैदिक एवं बौद्धकालीन शिक्षा पद्धति में महिला शिक्षा का समुचित विकास हुआ। बौद्धकालीन शिक्षा पद्धति में तो नारियाँ भिक्षुओं के समान ही संघों में रहती और अध्ययन करती थी। उस समय अनेक विदुषी स्त्रियों थी जिनकी समाज सेवाएं इतिहास प्रसिद्ध थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *चौबे, सरयू प्रसाद, भारतीय शिक्षा का इतिहास, रामनारायण लाल, इलाहाबाद 1959*
2. *कृष्ण कुमार, प्राचीन भारत की शिक्षा पद्धति, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 1999*
3. *लज्जाराम तोमर, प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति, सुरूचि प्रकाशन, देशबन्धु गुप्ता मार्ग, नई दिल्ली, 2000*
4. *अल्तेकर, अनंत सदाशिव, एजुकेशन इन एशिएंट इंडिया, 1948*
5. *सत्यपाल रूहेला, भारतीय शिक्षा का समाजशास्त्र, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, 1992*
6. *माथुर, वी.एस. स्टडीज इन इंडियन एजुकेशन, आर्य बुक डिपो, दिल्ली,2001*
7. *हॉर्नर, विमेन अंडर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, दूसरा अध्याय*
8. *अग्रवाल, जे.सी.: भारत में नारी शिक्षा, विद्या विहार, नई दिल्ली, 2009*
9. *गुप्त, एन.एल., वीमेनस् एजुकेशन थ्रू एजेज, कनसप्ट पब्लिकेशनस् कंपनी, नई दिल्ली, 2003*
10. *अल्तेकर, ए.एस., द पोजिशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1956*
11. *श्रीवास्तव, कृष्ण चन्द्र, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड़ बुक डिपो, इलाहाबाद, 2004*
12. *मिश्रा, जयशंकर, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 2006*

दीदारगंज स्त्री प्रतिमा की सामाजिक उपादेयता

डॉ. सहदेव सिंह चौहान
शोध अधिकारी, श्री नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ (मध्यप्रदेश)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

पटना के दीदारगंज नामक स्थान पर 1917 ई. में गंगा के तट पर एक स्त्री की प्रतिमा मिली, जिसे इतिहासकारों ने यक्षी कहा और उसके बारे में लिखा भी। मूर्ति के वे भारतीय आदर्श जो इसमें दर्शनीय हैं, जिसमें इसकी सामाजिक उपादेयता परिलक्षित होती है का उद्देश्य तो समझा ही नहीं गया। इतिहासकार 'न्यायाधीश' के पद पर आसीन माना जाता है। किसी ने यह सोचने की कृपा न की, कि वह कितना ही दिग्गज विद्वान क्यों न हो, कैसा भी सतर्क क्यों न हो, भूल हो सकती है। यक्षी की मूर्ति है तो कैसे? और नहीं तो क्यों? आदि प्रश्नों–जवाबों और उस काल की कौनसी सामाजिक दशा, राजनीतिक दृष्टि ऐसी आन पड़ी कि इस मूर्ति से सामाजिक उपादेय के अभिप्राय प्रकाशन का अभिष्ट कार्य कराया गया। ऐसे ही शोध परक प्रश्नों का उत्तर है यह शोध पत्र।

संकेताक्षर : *कला, श्रृंगार, आभूषण, सामाजिक उपादेय, ओपदार चमक, सप्तरत्नी यज्ञस्तूप।*

भारतीय कला धार्मिक सत्य और नैतिक आदर्शो की वाहक रही है और सामाजिक जीवन के विभिन्न अंगों को उत्तेजित करती रही है। इस प्रकार यह सार्वजनिक तथा सामाजिक आन्दोलनों की प्रसारिका कही जा सकती है। भिन्न–भिन्न युगों और जातियों की संस्कृतियों के रूप रंग और मानव सभ्यता की प्रगति के ज्ञान के लिए प्रतिमाओं के मूल आदर्श और लाक्षणिक संकेत को समझना जरूरी है। अदभुत एवं सर्वोत्तम कृतियों को हमारे यहां देवी अथवा मानवेतर समझने की प्रथा रही है। स्वभावतः प्राचीन भारतीय शिल्पकारों ने जिन स्मारक प्रतिमाओं को उकेरा था उनका विषय देवी रहा होगा, मानवी तो वे समझे ही नहीं गये थे। स्मारक प्रतिमाओं के रूप में जिन कुषाणवंशी शासकों की प्रतिमाएँ देवकुल मथुरा में मिली थीं उन्हें 'देवपुत्र' की संज्ञा दी गई थी। सम्भवतः इस प्रथा के कारण पटना संग्रहालय में सुरक्षित विश्व प्रसिद्ध दीदारगंज की स्त्री प्रतिमा को विद्वानों ने यक्षी की संज्ञा दी है।

यह प्रसिद्ध मूर्ति सन् 1917 ई. में पटना के निकट दीदारगंज नामक ग्राम में गंगा तट पर मिली थी। विद्वत संसार के समक्ष इसे लाने का श्रेय पटना कालेज के भूतपूर्व प्राध्यापक समादार को है। यह नारी मूर्ति 5½ फीट ऊँची है और एक चौकी पर खड़ी है। चौकी के साथ पूरी मूर्ति एक ही पत्थर की बनी है और चुनार (मिर्जापुर उ.प्र.) की इस बलुआ पत्थर की मूर्ति पर विशिष्ट चमक है। यह मूर्ति चँहुमुख दर्शनीय है।

इस मूर्ति में नारी देहयष्टि का प्राणवान मूर्तन हुआ है। मुख की मुस्कराहट भौतिक तृप्ति व्यंजित करती है। माथे पर मांग टीका, कान में डमरू के आकार के कुण्डल, सिर पर दानों की माला, बाल का जूड़ा सिर की शोभा बढ़ा रहे हैं। गले में दानों की बनी एकावली के साथ दो लड़ियों का मुक्ताहार, पूर्ण विकसित दोनों स्तनों के बीच हृदय पर लहरा रहा है। दाहिने हाथ की कलाई में चूड़ियाँ और भारी कड़ा है तथा हाथ में चँवर लिये है, जिसके बाल बड़े स्वाभाविक

ढंग से गूंथे गये हैं। एक बड़ा ही महीन वस्त्र उत्तरीय शरीर के बांये कन्धे के ऊपर से दाहिने हाथ के नीचे पैर तक लटक रहा है। उत्तरीय से नाभि के नीचे का भाग पैर तक पूरी तरह से साड़ी से छिपा हुआ है। साड़ी की चून और सिलवटें (पटली) अत्यन्त सुन्दर रूप से चित्रित हैं। कमर में पाँच लड़ियों की कमरधनी शोभा बढ़ा रही है। पैर में कड़ा कृशोदरी, नाभि के नीचे त्रिबलियाँ अर्थात पेट की सिलवटें और मांसल देह, प्रत्यक्ष है। शिल्पकारों ने भी नारी की स्वभावगत लज्जा को दर्शाने के लिए मूर्ति को कमर के ऊपर के भाग को थोड़ा झुका हुआ सा बनाया है। साथ ही कुलवन्ती स्त्री के चरित्र की दृढ़ता और प्रभुता को दिखलाने के उद्देश्य से शिल्पकारों ने उसके मुख मण्डल को ऐसा गढ़ा है, जिससे वह प्रभा बिखेरती सी प्रतीत होती है।

नारी सौन्दर्य की स्वाभाविक अभिव्यक्ति आकर्षक रूप, तिरछी आँखें, पूर्ण विकसित उभरे स्तन, पतली कमर, विस्तृत पुष्ट नितम्ब, अंग प्रत्यंग का भराव तथा लज्जावनत चेष्टा उस समय के नारी सौन्दर्य के भारतीय आदर्श थे, जो इस मूर्ति में दर्शनीय हैं। सच पूछिए तो नारी रूप के आदर्श गुणों का इसी मूर्ति में पहले पहल सफल चित्रण हुआ है और अमरावती तथा सारनाथ की सुसंस्कृत गरिमामयी नारी मूर्तियों के लिए इसे अग्रदूती ही मानना चाहिए। बाद में बनी नारियों की मूर्तियों के लिए तो यह एक आदर्श ही बनी रही। डॉ. स्पूनर के शब्दों में, 'कमर के ऊपर का भाग इतनी निपुणता से गढ़ा गया है जिसमें नारी शरीर रचना के आधुनिक नियमों का पूर्ण रूप से पालन हुआ है।'[1]

इस प्रकार यदि किसी रूपवती स्त्री अथवा रूपवान पुरुष को कोई यक्षी अथवा यक्ष कहकर सम्बोधित करे तो आश्चर्य नहीं।[2] दीदारगंज की इस नारी प्रतिमा को यक्षी मानने वाले विद्वानों में काशीप्रसाद जायसवाल, वासुदेवशरण अग्रवाल, रामप्रसाद चन्द्रा, जे.एन. बनर्जी, राय सी. क्रावेन आदि किन्तु दूसरी ओर इसे यक्षी न मानने वालों में कुमार स्वामी हैं जो इसे यक्षी न कहकर मात्र चामर ग्रहिणी कहते हैं।[3] मूर्ति के पीछे सामाजिक चिंतन का कितना रहस्यमय संकेत है, के मूल उद्देश्य को तो समझा ही नहीं गया; क्यों कि शिल्पकार और चित्रकार, साहित्य पुराण और इतिहास की प्रेरणाओं को अपने ढंग से ढालकर प्रस्तुत करने का आयोजन और प्रयत्न करते हैं। अमूर्त भाव किस प्रकार सफलता से व्यक्त किये जा सकते हैं? इस प्रश्न से कभी-कभी शिल्पी को दीर्घकाल तक जूझना पड़ता है, तब कहीं जाकर कला की परिभाषाओं के वे सूत्र उसके हाथ आते हैं जिनके द्वारा कलाकार की भाषा राष्ट्र के गूढ़ चिन्तन को व्यक्त करने के योग्य बनती है। शिल्प की भाषा बड़ी अर्थवती होती है, जिसे बोलकर कुछ भी कहना नहीं पड़ता, फिर भी उसकी शिल्प लिपि के भाव सभी देश और काल में अपने अभिप्राय को व्यक्त करने में समर्थ होते हैं। जो इस मूर्ति से सामाजिक उपादेय की भूमिका परिलक्षित होती हैं।

फिर भी यक्ष-यक्षियों का सम्बंध जल और वनस्पतियों से बताया गया है और देखा गया है कि देवी अथवा यक्षी प्रतिमाओं के साथ उनका वाहन होता है। दीदारगंज की प्रतिमा एक तो चामरग्रहणी है दूसरे उसमें न वाहन का और न जल और वनस्पति का ही चिह्न दिखाई पड़ता है, जबकि मगध में ही बोधगया से प्राप्त यक्षी प्रतिमा वाहन पर खड़ी है।[4] फिर महाकाय की परम्परा में बनी यक्ष-यक्षियों की प्रतिमाओं से दीदारगंज से प्राप्त प्रतिमा भिन्न है क्यों कि प्रतिमा को महाकाय नहीं आदमकद कह सकते हैं अर्थात भारतीय नारी की औसत ऊँचाई की है। ऐसी स्थिति में दीदारगंज की प्रतिमा को यक्षी कहना उचित नहीं हैं।[5]

यदि मान भी लें कि यह प्रतिमा यक्षी की है तो लोकदेवी की स्वतंत्र खड़ी इस प्रतिमा के हाथ में चामर क्यों? भारतीय मूर्ति विज्ञान के अध्ययन से स्पष्ट है कि लक्ष्मी भी जहां चंवर ग्रहण किये हुए हैं वहां विष्णु होते हैं और उनके हाथ में कमल शोभायमान रहता है।[6] चामर प्रायः चक्रवर्ती सम्राटों, योगियों अथवा देवों की सेवा में डुलाये जाते हैं। समुद्रगुप्त के अश्वमेघ प्रकार के सिक्कों में पताका युक्त यज्ञस्तूप में बंधे हुए यज्ञीय घोड़े की मूर्ति और दूसरी ओर हाथ में चंवर लिए प्रधान महिषी को अंकित किया है।[7] इसी प्रकार विष्णु ब्राह्मण्ड के पालक के रूप में समस्त आयुधों के साथ चक्रवर्ती के रूप में अंकित होते हैं तो वहां लक्ष्मी उनके साथ स्त्रीरत्न के रूप में चंवर धारण किये हुए अंकित रहती हैं। दीदारगंज की स्वतंत्र खड़ी प्रतिमा के हाथ में चंवर स्पष्ट करता है कि प्रतिमा किसी महिषी की होगी जिसे लोगों ने 'स्त्रीरत्न के रूप में देखा। चंवर पकड़ने के ढंग से इसकी सेवा के प्रति मानसिक प्रतिबद्धता एवं शारीरिक दृढ़ता भी परिलक्षित होती है। यहां हम बता दें कि चंवर सेवा का प्रतीक है जो नारी का एक नैसर्गिक गुण है। वह स्त्रीरत्न जो अपने पति चक्रवर्ती सम्राट की सेवा में कल्याणकारी की तरह सदैव तत्पर रहती है। शिल्पकारों के लिए स्मारक प्रतिमा बनाने के लिए

इससे उत्तम विषय और क्या हो सकता था। स्त्रीरत्न को चक्रवर्ती सम्राटों के सप्तरत्नियों में स्थान भी दिया गया है।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस शुचिता की प्रतिमूर्ति अर्थात इस प्रतिमा को बनाने की क्या आवश्यकता आ पड़ी थी ? यहां यह कहना अपेक्षित होगा कि शिल्पकार अपने युग की विचार धारा से प्रभावित होता है। समाज में नैतिक स्तर को बनाये रखने के लिए अथवा राष्ट्रीय चरित्र के विकास में स्त्रियों का योगदान महत्वपूर्ण होता है। इसलिए 8 वीं शती में काश्मीर के राजा जयापीड़, जो कि बहुत विलासी हो गया था, के मंत्री पंडित दामोदर गुप्त ने, राज्य की दुर्दशा को देखकर राजा को सही दिशा की ओर प्रेरित करने के उद्देश्य से, अपने एकमात्र काव्य ग्रन्थ 'कुट्टनीमत' में पाटलिपुत्र के वैभव का वर्णन करते हुए (जिसमें राजा के मन में प्रतिस्पर्धा की भावना प्रस्फुटित हो) वहां की सदाचारिणी और शीलवन्ती नारियों का रोचक चित्रण प्रस्तुत किया है।[8] सदाचारिणी और शीलवन्ती स्त्रियों के कारण ही कदाचित पाटलिपुत्र भारत के चक्रवर्ती सम्राटों की बहुत दिनों तक राजधानी बना रहा।

इस प्रतिमा के बनाये जाने के पीछे कौन सा उद्देश्य कार्य कर रहा था, इसको समझने के लिए स्त्रियों की सामाजिक दशा का विवेचन करना होगा। छटी शती ई. पूर्व में पुराने सामाजिक और नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा था। जातक कथाओं के विवेचन से ज्ञात होता है कि स्त्रियाँ भी स्वेच्छाचारिणी हो गई थीं। तत्कालीन सामाजिक अवस्था का अनुशीलन करके ही उस काल में वैराग्य मूलक धर्मों का प्रचार किया गया और मौर्यों के काल में देश ने राजनीतिक दृष्टि से, जब सर्वप्रथम अखिल भारतीय रूप ग्रहण किया तब सम्राट अशोक के समय में जहां अन्य अनेक सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सुधार किये गये वहां स्त्रियों की दशा में सुधार लाने एवं उनके नैतिक चरित्र के विकास के लिए 'इथिधियख महामाता' (स्त्रयध्यक्ष महामाता)[9] के पद का भी सृजन किया गया। भ्रष्टाचार और व्यभिचार को समाप्त करने के लिए तथा शील और सदाचार की स्थापना के लिए सम्राट अशोक ने बौद्ध भिक्षु, भिक्षुणियों को भी निःसंकोच दण्डित किया। इस सम्बध में अशोक का सारनाथ स्तम्भ लेख उल्लेखनीय है। उसकी आज्ञा थी, 'देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहते हैं कि पाटलिपुत्र तथा प्रान्तों में कोई संघ में फूट न डाले। जो कोई चाहे वह भिक्षु हो या भिक्षुणी संघ में फूट डालेगा वह सफेद कपड़ा पहनाकर उस स्थान में छोड़ दिया जायेगा जो भिक्षुओं अथवा भिक्षुणियों के लिए उचित नहीं है।' अर्थात संघ से निकाल दिया जाएगा।[10] अशोक की धारणा थी कि नैतिक स्तरविहीन धार्मिक क्रियाएँ निरर्थक होती हैं। उनका परिणाम भी शुभ नहीं होता। जीवन में वास्तविक महत्व नैतिकता का है, उन गुणों का है जिनके आधार पर एक सुखी तथा समृद्धशाली कुटुम्ब का निर्माण होता है। अतः वह स्त्री समाज को अपना नैतिक स्तर ऊँचा उठाने का आदेश देता है और इसी कारण वह उनके संकुचित दृष्टिकोण की प्रत्यक्ष रूप से आलोचना करता है। इस कार्य के प्रति वह स्त्री अध्यक्ष महापात्रों की नियुक्ति भी करता है। संसार के इतिहास में सम्भवतः स्त्रियों की इतने महत्वपूर्ण पद पर नियुक्ति का यह पहला ही अवसर था। स्त्री अध्यक्ष महापात्रों के वे ही कार्य थे जो धर्म महापात्रों के थे।[11]

स्वाभाविक है कि सम्राट अशोक ने राजधानी में, राजगृह जाने वाले मार्ग में, दीदारगंज नामक स्थान में, गंगा किनारे, किसी आदर्शनारी की सौन्दर्यमयी प्रतिमा को खड़ा किया हो जो निःसंदेह उस काल की 'स्त्रीरत्न' रही होगी। इस आदमकद प्रतिमा पर वही ओपदार चमक है जो प्रायः सभी मौर्य युगीन पत्थर की बनी मूर्तियों पर मिलती है। विश्व विख्यात यह स्त्री प्रतिमा मौर्यकालीन सौन्दर्य बोध[12] की भावना की प्रतीक है।[13] इस मूर्ति के रूप में इतनी मानवता है कि ये देवयोनि की मूर्तियाँ नहीं हो सकती। इतना अवश्य है कि इनके निर्माण के पांच-छःसौ वर्ष बाद जब लोग इनके वास्तविक उद्देश्य को भूल गये थे तो इन्हें यक्षमूर्ति मानने लगे। सम्राट अशोक और तद्युगीन पाटलिपुत्र निवासियों में सौन्दर्य बोध की उच्च भावना के कारण ही अशोक विश्व का महान शासक कहलाया और पाटलिपुत्र को सबसे सुन्दर नगरी कहलाने का सम्मान मिल सका, जिसके सामने सूसा और एकबातना (Ecbatana) भी फीके थे।[14] फीके क्यों न पड़ते। क्योंकि दामोदर गुप्त ने 'कुट्टनीमत काव्यम' में पाटलिपुत्र नगर के सौन्दर्य के बारे में लिखा है कि 'वह पृथ्वी का तिलक, सरस्वती का कुलगृह और इन्द्र के स्थान अमरावती को परिभूत करने वाला है। जब ब्रह्मा ने त्रिभुवन के नगरों के निर्माण का कौशल विश्वकर्मा से पूछा तब मानों उन्होंने शिल्प दिखाने के लिए इस नगर को एक वर्णक के रूप में निर्माण किया।'

अतः हम कह सकते हैं कि दीदारगंज की उक्त प्रतिमा यक्षी की न होकर सामाजिक उपादेय के अभिप्राय प्रकाशन का अभिष्ट कार्य था।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *स्पूनर डी. बी., दी दीदारगंज इमेज नाउ इन दी पटना म्युजियम, जर्नल ऑफ दी बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी, 1919, भाग 5, पृ. 107–13*
2. *सुन्दर मनोहर रूपों के बारे में महाभारत में कुछ इस तरह से कहा गया है –*

   न देवेषु न यक्षेषु तादृग्रूपवती क्वचित्,

   मानेषुश्वपि चान्येषु दृष्टपूर्वा न च श्रुत्वा।

   – अरण्यक पर्व, 50, 13

   अहो रूपमहो कान्तिरहो धैर्यमहात्मनः

   कोऽयं देवो नु यक्षो नु गन्धर्वो नु भविष्यति।

   – अरण्यक पर्व, 52,16
3. *कुमारस्वामी, ए.के., 1927 हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियाइ आर्ट, लन्दन, क्रावेन राय.सी. 1976 ए कॅनसिस हिस्ट्री ऑफ इण्डियन आर्ट, न्युयार्क, पृ. 45; अग्रवाल वी.एस. 1966, इण्डियन आर्ट, वाराणसी, पृ. 12*
4. *जायसवाल काशीप्रसाद 1970, दी पॉलिटिकल एण्ड सोशियो रिलीजियस कण्डीसन ऑफ बिहार, वाराणसी, पृ. 153*
5. *स्पूनर. डी. बी., दीदारगंज इमेज नाउ इन दी पटना म्युजियम, जर्नल ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी, भाग 5, पृ. 113; चन्द्रा, आर पी, 1927, दी बिगनिंगस ऑफ आर्ट इन इस्टर्न इण्डिया विथ स्पेशल रिफरेन्स टू स्कल्पचर्स इन दी इण्डियन म्युजियम, कलकत्ता, MASI, नं. 30, पृ. 35; स्मिथ, वी. ए., ए हिस्ट्री ऑफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सीलोन (के. खंडेलवाल, तृतीय एडीशन), पृ. 20; रॉलेण्ड बेंजामिन, 1970, दी आर्ट एण्ड आर्चीटेक्चर ऑफ इण्डिया; पेंगुइन बुक्स, पृ. 100; राय एन.आर., 1945 मोर्या एण्ड शुंग आर्ट, युनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, पृ. 52–53, 103; धवलीकर, एम. आर. फ्रेश लाइट ऑन दी दीदारगंज यक्ष, नागपुर युनिवर्सिटी जर्नल, भाग 16, पृ. 216*
6. *पालकालीन विष्णु मूर्तियाँ, पटना संग्रहालय, पुरा. सं. 10610, 1594, 6045.*
7. *द अश्वमेध कॉयन्स ऑफ समुद्रगुप्त – जर्नल ऑफ दी एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, 1915, भाग 11, पृ. 477–78*
8. *गुप्त, पं. दामोदर कृत, कुट्टनीमत, सम्पा. नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, संवत् 2017, इलाहाबाद, पृ.40–44; प्रो. पीटर्सन ने इस काव्य को काम्बे मन्दिर पुस्तकालय से खोज निकाला था। उसके पूर्व लुप्त प्रायः था। काव्यमाला सिरीज बम्बई से प्रकाशित हुआ था – पीटर्सन रिपोर्ट ऑन दी सर्च ऑफ संस्कृत मैनस्क्रिप्टस 1883–84; पृ. 23; कल्हण कृत, राजतरंगिणी, अनु. रघुनाथसिंह 1973, हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, पृ. 180, 208–09*
9. *गोयल श्रीराम, 1982, प्राचीन भारतीय अभिलेख संग्रह, राजस्थानी, हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, खण्ड 1 (प्राक गुप्त युगीन) गिरनार लेख 12.9, पृ. 58*
10. *वही, लघुस्तम्भ (संघभेद) लेख, सारनाथ लेख, पृ. 113–15*
11. *वही. द्वादश शिलालेख, गिरनार, 12.9, पृ. 61*
12. *सौन्दर्यतत्व, अनु. डा. आनन्द प्रकाश दीक्षित, सं., 2017 इलाहाबाद, पृ. 181–82.*
13. *रस्किन ने अपने ग्रन्थ 'Lactures on Art' में कहा है कि ''समस्त कलाओं का उद्देश्य या तो मनुष्य के जीवन का रक्षण करना होगा या उसे उन्नत करना (All the gret Arts have Further Object either the support or Exaltation of human life ususally both, पृ. 41, सौन्दर्यत्व पृ. 174–75.*
14. *क्रंडले, एम.सी., 1901, एन्शियन्ट इण्डिया एज डिसक्राइब्ड इन क्लासिकल लिटरेचर, वेस्टमिन्स्टर, पृ. 141–42 – In the indian royal palace..... there are wonders with witch neither susa in all its glory nor Ecbatana with all its magnificence can hope to vie'*

राजस्थान में कलात्मक बावड़ियाँः जल, कला व स्थापत्य के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में

डॉ. पंकज गौर
सहायक आचार्य, इतिहास, राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

बावड़ी या बावली उन सीढ़ीदार कुँओं, तालाबों या कुण्डो को कहते हैं जिन के जल तक सीढ़ियों के सहारे आसानी से पहुँचा जा सकता है द्य भारत में बावड़ियों के निर्माण और उपयोग का लम्बा इतिहास है। कन्नड़ में बावड़ियों को कल्याणी' या पुष्करणी, मराठी में बारव' तथा गुजराती में वाद कहते हैं। संस्कृत के प्राचीन साहित्य में इसके कई नाम हैं, एक नाम है–वापी। इनका एक प्राचीन नाम 'दीर्घा' भी था जो बाद में गैलरी के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा। चापिका, कर्कन्धु, शकन्धु आदि भी इसी के संस्कृत नाम हैं। जल प्रबन्धन की परम्परा प्राचीन काल से है। हड़प्पा नगर में खुदाई के दौरान जल संचयन प्रबन्धन व्यवस्था होने की जानकारी मिलती है। प्राचीन अभिलेखों में भी जल प्रबन्धन का पता चलता है। पूर्व मध्यकाल और मध्यकाल में भी जल सरंक्षण परम्परा विकसित थी। पौराणिक ग्रन्थों में तथा जैन बौद्ध साहित्य में नहरों, तालाबों, बाधों, कुओं बावडियों और झीलों का विवरण मिलता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में जल प्रबन्धन का उल्लेख मिलता है। चन्द्रगुप्त मौर्य के जूनागढ़ अभिलेख में सुदर्शन झील और कुछ वापियों के निर्माण का विवरण प्राप्त है। इस तरह भारत में जल संसाधन की उपलब्धता एवं प्राप्ति की दृष्टि से काफी विषमताएँ मिलती है, अतः जल संसाधन की उपलब्धता के अनुसार ही जल संसाधन की प्रणालियाँ विकसित होती हैं। बावड़ियां हमारी प्राचीन जल संरक्षण प्रणाली का आधार रही है. प्राचीन काल, पूर्वमध्यकाल एवं मध्यकाल सभी में बावड़ियों के बनाये जाने की जानकारी मिलती है। दूर से देखने पर ये तलघर के रूप में बनी किसी बहुमंजिला हवेली जैसी दृष्टिगत होती है। बावड़ी को अलग–अलग प्रांतों में अलग–अलग नामों से जाना जाता है इसे स्टेपवेल, बओरी, बाओली, बावरी भी कहा जाता है इसको मराठी में बारव और गुजराती में वाद कहते हैं कन्नड़ में इसे कल्याणी कहते है।

संकेताक्षर : *बावड़ी, स्थापत्य, जल संरक्षण, कर्मकांड, पर्यटन, किवदंती।*

राजस्थान की शुष्क जलवायु में जल की कमी की समस्या के समाधान हेतु प्राचीन काल से ही जल संरक्षण की तकनीकें अपनाई जाती रही है। विभिन्न जिलों में बावड़ी, टांके, जोहड़ जैसी जल संरक्षण करने वाली संरचनाओं का पाया जाना इसका उदाहरण है। पहले समय में जल आपूर्ति के उद्देश्य से तकरीबन हर राज्य व कस्बों से बनाई गई यह बावड़ियां केवल जल उपयोग की चीज ही नहीं बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का एक अभिन्न अंग हुआ करती थीं। साथ ही, हिंदु धर्म में जल को देवता के रूप में पूजे जाने की वजह से भी इन बावड़ियों पर आकर महिलाएं पूजा–अर्चना किया करती थीं।

बावड़ी वास्तव में एक जल प्रबंधन की प्राचीन परंपरा है प्राचीन काल में यह पानी का बहुत बड़ा स्त्रोत् हुआ करती थी द्य बावड़ी को इस तरीके से बनाया जाता था कि ये जल संसाधन के साथ–साथ एक स्थापत्य कला की भी संरचना हुआ करती थी द्य यह बावडिया एक समुदायिक सम्मेलन का भी मुख्य स्थान हुआ करते थीद्य सबसे पहले बावडी का उल्लेख गुजरात और राजस्थान के क्षेत्रों में मिलता है।

बावड़ियों को सर्वप्रथम हिन्दुओं द्वारा (जनोपयोगी शिल्पकला के रूप में विकसित किया गया और उसके पश्चात मुस्लिम शासकों ने भी इस परंपरा को अपनाया। बावड़ी निर्माण की परम्परा न्यूनाधिक रूप से छठी शताब्दी में गुजरात के दक्षिण–पश्चिमी भाग में आरम्भ हो चुकी थी। धीरे धीरे ऐसे कई निर्माण कार्य उत्तर दिशा की ओर विस्तार

करते हुए राजस्थान में बढ़े। अपनी पुस्तक 'राजस्थान की रजत बूँद में अनुपम मिश्र ने राजस्थान की बावड़ियों के इतिहास, शिल्प-पक्ष और इनकी सामाजिक उपयोगिता पर विस्तृत प्रकाश डाला है। बावड़ी निर्माण का यह कार्य 11वीं से 16वीं शताब्दी में अपने पूर्ण चरम पर रहा।

बावडियों के परिसर में तरह तरह की तिबारियां, अलग अलग आकर प्रकार के कमरे, संपर्क-दालान, दीर्घाएं, मंदिर आदि अनेक प्रकार के निर्माण किये जाते थे क्यों कि बावड़ी केवल जल के उपयोग की चीज नहीं सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का लगभग केंद्र भी होती थी द्य यहाँ धार्मिक कर्मकांड जैसे पूजा-अर्चना भी की जा सकती थी, ब्याह-शादी और गोठ-ज्योनार (आज जिसे पिकनिक कहते हैं) भी दूर से आने वाले यात्री यहाँ बनी धर्मशालाओं में रुक सकते थे।

वास्तुशास्त्र के अनुसार बावड़ियां चतुष्टकोणीय, वर्तुल, गोल या दीर्घ प्रकारों की हो सकती हैं। इनके प्रवेश से मध्य भाग तक ईटों अथवा पत्थरों से पक्का और ठोस निर्माण होता है जिसके ठीक नीचे जल होता है जो प्रायः किसी भूगर्भीय निरंतर प्रवाहित जलस्रोत से जुड़ा होता है। आंगन से प्रथम तल तक सीढ़ियों, स्तंभों, छतरियों तथा मेहराबों आदि का निर्माण होता है। एक या अधिक मंजिल में निर्मित बावड़ियों में अनेकानेक दरवाजे, सीढ़ियाँ, दीवारें तथा आले आदि बने होते हैं जिनमें बेलबूटों, झरोखों, मेहराब एवं जल एवं स्थानीय देवताओं का अंकन होता है। जल देवताओं में अधिकांशत कश्यप, मकर, भूदेवी, वराड़, गंगा, विष्णु और दशावतार आदि का चित्रण किया जाता है। पर इन पर उत्कीर्ण कई स्थानीय देवी देवता भी देखे जाते हैं।

बावड़ी निर्माण को लेकर अनेक किवदंतिया भी प्रचलित रही है द्य भांडारेज की बावड़ी (दौसा) और दौसा की चाँद बावड़ी के विषय मे मान्यता है कि यह एक रात में ही बनी थी। इतना ही नहीं ये भी कहते है कि चाँद बावड़ी आलूदा की बावड़ी और भांडारेज की बावड़ी तीनो को ही एक रात में बनाया गया और ये तीनो सुरंग से एक-दूसरे से जुड़ी हैं।

चाँद बावडी

जयपुर-आगरा राष्ट्रीय राजमार्ग (राष्ट्रीय राजमार्ग - 21) पर स्थित दौसा जिले का हृदय कहे जाने वाले सिकंदरा कस्बे से उत्तर की ओर कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर स्थित है, आभानेरी गाँव। पुरातत्व विभाग को प्राप्त अवशेषों से ज्ञात जानकारी के अनुसार आभानेरी गाँव 3000 वर्ष से भी अधिक पुराना हो सकता है, इसी गाँव में स्थित है ''चाँद बावडी'' आभानेरी गाँव का शुरूआती नाम ''आभा नगरी'' था (जिसका मतलब होता है चमकदार नगर), लेकिन कालान्तर में इसका नाम परिवर्तित कर आभानेरी कर दिया गया। 9वीं शताब्दी में निर्मित इस बावडी का निर्माण राजा मिहिरभोज (जिन्हें कि चाँद नाम से भी जाना जाता था) ने करवाया था, और उन्हीं के नाम पर इस बावडी का नाम चाँद बावडी पड़ा।

दुनिया की सबसे गहरी यह बावडी चारों ओर से लगभग 35 मीटर चौड़ी है तथा इस बावडी में ऊपर से नीचे तक पक्की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं, जिससे पानी का स्तर चाहे कितना ही हो, आसानी से भरा जा सकता है। 13 मंजिला यह बावडी 100 फीट से भी ज्यादा गहरी है, जिसमें भूलभुलैया के रूप में 3500 सीढ़ियाँ (अनुमानित) है। इसके ठीक सामने प्रसिद्ध हर्षद माता का मंदिर है। बावडी निर्माण से सम्बंधित कुछ किवदंतियाँ भी प्रचलित है जैसे कि इस बावडी का निर्माण भूत-प्रेतों द्वारा किया गया और इसे इतना गहरा इसलिए बनाया गया कि इसमें यदि कोई वस्तु गिर भी जाये, तो उसे वापस पाना असम्भव है।

चाँदनी रात में एकदम दूधिया सफेद रंग की तरह दिखाई देने वाली यह बावडी अँधेरे-उजाले की बावडी नाम से भी प्रसिद्ध है। तीन मंजिला इस बावडी में नृत्य कक्ष व गुप्त सुरंग बनी हुई है, साथ ही इसके ऊपरी भाग में बना हुआ परवर्ती कालीन मंडप इस बावडी के काफी समय तक उपयोग में लिए जाने के प्रमाण देता है। इसकी तह तक जाने के लिए 13 सोपान तथा लगभग 1300 सीढ़ियाँ बनाई गई हैं, जो कि कला का अप्रतिम उदाहरण पेश करती है। स्तम्भयुक्त बरामदों से घिरी हुई यह बावडी चारों ओर से वर्गाकार है। इसकी सबसे निचली मंजिल पर बने दो ताखों पर महिसासुर मर्दिनी एवं गणेश जी की सुंदर मूर्तियाँ भी इसे खास बनाती हैं। बावडी की सुरंग के बारे में भी ऐसा सुनने में आता है कि इसका उपयोग युद्ध या अन्य आपातकालीन परिस्थितियों के समय राजा या सैनिकों द्वारा किया जाता था। लगभग पाँच-छह वर्ष पूर्व हुई बावडी की खुदाई एवं जीर्णोद्धार में भी एक शिलालेख मिला है। जिसमें कि राजा चाँद का उल्लेख मिलता है। चाँद बावडी एवं हर्षद माता मंदिर दोनों की ही खास बात यह है कि इनके निर्माण में प्रयुक्त पत्थरों पर शानदार नक्काशी की गई है, साथ ही इनकी दीवारों पर हिंदू धर्म के सभी 33 कोटि देवी-देवताओं के चित्र भी उकेरे गये हैं। बावडी की सीढ़ियों को आकर्षक एवं कलात्मक तरीके से बनाया गया है और यही इसकी

खासियत भी है कि बावडी में नीचे उतरने वाला व्यक्ति वापस उसी सीढी से ऊपर नहीं चढ़ सकता। आभानेरी गुप्त युग के बाद तथा आरम्भिक मध्यकाल के स्मारकों के लिए प्रसिद्ध है जिसके भग्नावशेष विदेशी आक्रमण के हमले में खण्डित होकर इधर–उधर फैले हुए हैं।रानी जी की बावड़ी (सीढ़ीदार कुओं) का निर्माण बूंदी में 1699 में रानी नाथावती द्वारा करवाया गया था जो राव की सबसे कम उम्र की रानी थी।

नीमराणा के अंदर स्थित नीमराणा की बावड़ी बहुत पुरानी और शानदार बहुमंजिला संरचना है। यह बावड़ी नीमराना के प्रमुख पर्यटक स्थलों में से एक है, जो पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र बनी हुई है।

यह बावड़ी नीमराना महल के नजदीक स्थित है जिसमे 170 चरण है, और जैसे–जैसे हम नीचे जाते हैं निर्माण छोटा होता जाता है। नीमराना बावड़ी पुरानी वास्तुकला की सुंदरता को दर्शाता है। जिसमे पुराने निर्माण कला की उत्कृष्टता देखी जा सकती है। नीमराणा की बावड़ी 9 मंजिला ईमारत थी और प्रत्येक मंजिल की ऊँचाई लगभग 20 फीट है। यह अंदर से ठंडा और नम है। यह बावड़ी पानी और सिंचाई दोनों के लिए उपयोग के साथ साथ आकर्षक पर्यटक स्थल भी बना हुआ है जहा पर्यटकों की काफी भीड़ देखी जाती है।

पन्ना मीना के कुंड की गहराई 200 फीट है 8 मंजिला इस बावड़ी में करीब 1800 सीढ़िया हैं इस कुंड में कालीन कारिगरी का खूबसूरत नमूना देखने को मिलता है यहां की सुंदरता पर्यटकों का मन मोह लेती है राजस्थान की लोकप्रिय बावड़ियों में से एक पत्रा मौना का कुड की खूबसूरती और वास्तुकला को देखने के लिए दूर–दूर से लोग यहाँ पर आता है. चौकोर आकार के इस कुंड में चारों तरफ सीढ़िया है, यह कुड न केवल इतिहास प्रेमियों बल्कि आज की युवा पीढ़ी के बीच भी बेहद पॉपुलर है आमेर किले के पास स्थित पन्ना मीना का कुछ करीब 200 फीट गहरा है पहले यह कुछ लोगों के लिए पानी का मुख्य स्त्रोत हुआ करता था हालांकि, अब यह लोगों का पसंदीदा पिकनिक स्पॉट बन गया है द्य पन्ना मीना के कुंड को लेकर कई कथाएं प्रचलित है, उनमें से ही एक है कि इस बावड़ी का निर्माण करीब एक हजार साल पहले मीणा राजवंश के लोगों ने करवाया था. पन्ना मीणा एक महान योद्धा थे, उन्हें आमेर के राजा ने धोखे से मारकर यहां पर अपना राज स्थापित किया था. यह बावड़ी पन्ना मीणा के पतन की कहानी भी बयां करती हैद्य हाडी रानी हाडा राजपूत की बेटी थी और उसकी शादी मेवाड़ के सलूंबर के एक सरदार चुंडावत से हुई थी। हाडी रानी ने अपने पति को युद्ध में जाने के लिए प्रेरित करने के लिए ही अपने जीवन का बलिदान दिया। वर्ष 1653–1680 में मेवाड़ के महाराजा और औरंगजेब के बीच युद्ध हुआ था।

मेवाड़ के महाराजा ने हाड़ी रानी के पति को युद्ध के लिए बुलाया लेकिन सरदार युद्ध में जाने से हिचकिचाते थे क्योंकि उनकी शादी कुछ दिन पहले ही हुई थी। हालाँकि, एक राजपूत होने के नाते और राजपूत सम्मान की रक्षा के लिए उन्हें युद्ध में शामिल होना पड़ा और उन्होंने हाडी रानी से उन्हें युद्ध के मैदान में ले जाने के लिए कुछ स्मृति चिन्ह देने के लिए कहा। हाडी रानी ने सोचा कि वह मेवाड़ के राजपूत होने के अपने कर्तव्य को पूरा करने में उनके पति के लिए एक बाधा थी। इसलिए, अपने पति को युद्ध में जाने और मेवाड़ की रक्षा के लिए प्रेरित करने के लिए, उसने अपना सिर काटकर अपने पति को सौंपने का आदेश दिया। अपनी प्यारी हाडी रानी का सिर देखकर सरदार को अत्यंत दुख हुआ, लेकिन फिर उसके सिर को एक स्मृति चिन्ह के रूप में अपने बालों से उसके गले में बांध दिया। उसने युद्ध के मैदान में बहादुरी से लड़ाई लड़ी और औरंगजेब की सेना को परास्त किया लेकिन जीत के बाद भी उसने युद्ध के मैदान से जाने से इनकार कर दिया और उसने अपनी गर्दन भी काट ली क्योंकि वह अब अपनी प्रिय रानी के वियोग में जीवित नहीं रहना चाहता था।

हाडी रानी ने अपने डगमगाते पति को युद्ध के मैदान में जाकर अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए प्रेरित किया और मेवाड़ को अपने पति के लिए एक उपहार के रूप में अपना सिर बलिदान कर दिया। बहादुर हाडी रानी को सम्मान देने के लिए टोंक जिले के टोडाराय सिंह में उनके नाम पर बावड़ी बनाई गई है।

रंगमहत, सूरतगढ़ की बावड़ी

रंगमहल किसी जमाने में यौधेय गणराज्य की राजधानी हुआ करता था. रंगमहल पर कब्जा करने के लिए सिकंदर ने भी आक्रमण किया थाद्य लेकिन हूणों की चढ़ाई के बाद रंगमहल पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया पुरातत्व खुदाई के दौरान यहां से एक प्राचीन बावड़ी प्राप्त हुई है, जिसकी में 2 फुट लंबी और 2 फुट चौड़ी ईंटों का इस्तेमाल किया गया है।

भीकाजी की बावड़ी

राजस्थान के अजमेर से लगभग 13 किमी की दूरी पर स्थित गगवाना में एक 400 वर्ष पुरानी बावड़ी मौजूद

है, जिसे भीकाजी की बावड़ी के नाम से जाना जाता हैद्य बावड़ी में नीचे उतरने के लिए कई सीढ़ियां भी बनी हुई है, इस बावड़ी में कई प्राचीन शिलालेख मौजूद हैं, जिन पर उस समय की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन किया हुआ है। यहां मौजूद शिलालेखों में फारसी भाषा का इस्तेमाल किया गया है।

इस बावड़ी में पानी के तल तक पहुंचने के लिए अनेक सीढ़ियां बनी हुई है जो मुख्य प्रवेश द्वार से होते हुए नीचे तक जाती हैं इस बावड़ी में प्रवेश करते ही इसके मुख्य दरबाजे के ऊपर छतरीदार मेहराब बना हुआ है और ऐसा ही मेहराब इसके अंत वाली भवन के ऊपर बना हुआ है द्य इस बावड़ी के चारों किनारों पर सुंदर छतरिया बनी हुई है और बीच में एक मेहराब वाली में छतरी बनी हुई है जो इस बावड़ी को बहुत ही सुंदर बनाती हैद्य यह बावड़ी शिल्प कला का बहुत ही सुंदर उदाहरण है द्यइस बावड़ी में पहुंच कर अदभुत रोमांच का अनुभव होता है।

भांडारेज बावड़ी का निर्माण 1732 में हुआ था यह बावड़ी तीन मंजिला है और आयताकार आकार में है द्य हर मंजिल पर कमरे बने हुए हैं यह कमरे संभवत कपड़े बदलने के लिए और प्रार्थना करने के लिए बने हुए है। पुराने जमाने में इन्हें इस्तेमाल किए जाता होगा। इस बावड़ी के एक तरफ से दूसरी तरफ जाने के लिए गलियारा बनाया गया है। ये इस बावड़ी की खूबसूरती को और बढ़ाते है। यह इस बावड़ी के बारे में भी कहा जाता है कि इसका निर्माण भी एक रात में भूतों ने किया था। किवदंती है कि एक बारात भांडारेज गांव में आई थी और वह इस बावड़ी में रुकी लेकिन जब वह बारात इस बावड़ी के अंदर बनी हुई सुरंग में गई ती वह वापस लौट कर नही इसीलिए इस बावड़ी की सुरंग को भूतिया भी कहा जाता है। ये सुरंग बड़ी बावड़ी से आभानेरी गांव की चाँद बावड़ी तक जाती है।

दूध बावडी आधार देवी मंदिर की तलहटी में स्थित है जो एक पवित्र कुआँ है और माउंट आबू के महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों में से एक है। इसका नाम दूध बावडी इसलिए पड़ा क्योंकि इस कुएं में जो पानी है उसका रंग दूध की तरह है। इस कुएं के पानी के रंग के साथ कई किवदंतियाँ जुड़ी हुई है। एक ऐसी ही किवदंती के अनुसार यह कुआँ देवी देवताओं के लिए दूध का स्त्रोत है। स्थानीय निवासियों द्वारा इस पानी को पवित्र माना जाता है। उनका यह विश्वास है कि कुएं के पानी में कुछ जादुई शक्तियां हैं। अनेक भक्त इस कुएं को गायों की देवी कामधेनु का प्रतीक भी मानते हैं।

बावड़ी स्थापत्य ने भारत में मध्ययुगीन काल में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, इसी कारण इसे महत्वपूर्ण सामाजिक ढ़ाचों के रूप में गिना जाता है। दूध बावड़ी में सीढ़ीदार कुआ 165 फीट गहरा है जो राजपूतों के शासनकाल में एक उल्लेखनीय स्थापत्य शैली को प्रदर्शित करता है। इस कुएं का प्रवेश द्वार काफी संकीर्ण है और इसमें लगे हुए स्तंभों पर पत्थर के हाथी भी ऊपर बने हुए हैं। सीढ़ी से नीचे जाने पर कुआ काफी बड़ा और व्यापक है। पूरा कुंआ काफी अच्छी तरीके से खूबसूरती से की गई खुदाई से एस आकार ब्रेकेट के साथ सजाया गया है।

भारत में जल प्रबंधन की परंपरा को प्राचीन काल की सबसे अद्भुत तकनीक के रूप में देखा जा सकता है। पौराणिक ग्रंथों में भी जल संचित करने की सबसे उच्चतम विधियों का उल्लेख है जैसे तालाब, बांध, नहर, झील और बावड़ियां समय, काल, परिस्थितियों के अनुसार, इन तकनीकों का इस्तेमाल सदियों से हमारा समाज करते आ रहा है।

वर्तमान में उचित संरक्षण एवं रखरखाव के अभाव में ये बावड़ियां पूरी तरह सूख चुकी हैं। लेकिन, आज भी इनकी खूबसूरती व बेहतरीन स्थापत्य और इनके पीछे छिपे इतिहास और विरासत को समझने के लिये दूर-दूर से आने वाले शोधार्थीयों की भीड़ लगी रहती है। इनके निर्माण में बनाई गई ढेरों सीढ़ियों के कारण ये बावड़िया स्टेपवेल्स भी कहलाती है और एक बेहतरीन पर्यटक स्थल के रूप में जानी जाने लगी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *डेविस, फिलिप : द पेंगविन गाइड ऑफ द मोनयूमेंट, वाइकिंग, लंदन 1989,*
2. *प्रकाशित रिपोर्ट- चाँद बावड़ी स्टेपवेल, राजस्थान बीबीसी 2010. मूल से 29 अप्रैल 2014 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 27 जून 2013*
3. *डॉ गोपीनाथ शर्मा – राजस्थान के इतिहास के स्त्रोत, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर,1983*
4. *ए एल बाशम- द वन्डर दैट वाज् इंडिया 1967 फोनताना लंदन 1967*
5. *अनुपम मिश्र- राजस्थान की रजत बूँद, गाँधी शांति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली 2005*
6. *वाई. डी. सिंह – राजस्थान के कुएँ एवं बावड़ियाँ राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर,2014*

गांधी चिंतन : सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक आयाम के संदर्भ में

डॉ. चन्दा केसवानी
सह आचार्य, एस.पी.सी. राज. महाविद्यालय, अजमेर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

वर्तमान समय में जब पूरा विश्व खतरनाक हथियारों और युद्ध की दौड़ में लिप्त है तो ऐसी स्थिति में गांधी जी का दर्शन अनायास ही अपनी ओर आकृष्ट करता है। यहां एक तथ्य की ओर ध्यानाकृष्ट करना समीचीन प्रतीत होता है कि तकनीकी अर्थ में महात्मा गांधी कोई व्यवस्थित दार्शनिक नहीं थे और ना ही वे दर्शन के छात्र थे। संभवतः यही कारण है कि उन्होंने केवल प्रत्ययात्मक दर्शन का विकास नहीं किया, बल्कि वैसे ही विचारों को रखा जिस पर उन्होंने स्वयं अमल किया। वस्तुतः गांधी के वक्तव्यों या लेखनों का अगर गहन विश्लेषण किया जाए तो उन पर अनेक दार्शनिक संप्रदायों एवं विचारकों के साथ–साथ समकालीन पारिस्थितिकी का भी प्रभाव स्पष्ट दिखता है। प्रस्तुत भाोध आलेख में गांधीजी के चिन्तन के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक आयाम का अध्ययन किया गया है।

संकेताक्षर : *धर्म सत्य, विकेन्द्रीकरण, अंहिसक, मनुष्य।*

गांधी की विचारधारा के केंद्र में ईश्वर या सत्य का समावेश स्पष्टतः दृष्टि गोचर होता है। उनके सत्य संबंधी विचार पर उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि, विशेष रूप से उनकी माता का प्रभाव पड़ा। इसके साथ–साथ टॉल्सटाय के लेखन, बुद्ध की जीवनी एवं गीता के अध्ययन ने भी सत्य के प्रति उनकी निष्ठा को बल प्रदान किया। उनके अनुसार किसी भी सत्याग्रही के लिए सत्य से बड़ा कोई अस्त्र नहीं है। वस्तुतः गांधी के लिए ईश्वर एवं सत्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, या एक–दूसरे के पर्याय हैं। ईश्वर के संबंध में उनके विचार रामानुज, शंकर और न्याय के विचार से मिलते–जुलते हैं। ईश्वर को गांधी अनन्त, पूर्ण एवं निरपेक्ष मानते हैं, जो अद्वैत वेदांत का प्रभाव है। उनके अनुसार ईश्वर सत्य है और सत्य ही ईश्वर है। ईश्वर तत्वतः व्यक्ति नहीं बल्कि सत्य स्वयं अपना नियम है।[1] ईसाई मत का प्रभाव भी उनके ईश्वर संबंधी विचारों पर देखा जा सकता है, जब वे बतलाते हैं कि पड़ोसियों से प्रेम नहीं करने पर ईश्वर भी हमसे प्रेम नहीं करते हैं।

गांधी एवं मानव स्वभाव

गांधी जी के अनुसार मनुष्य मूल रूप से आध्यात्मिक एवं धार्मिक प्राणी है। वे मानते थे कि धर्म एवं नैतिकता से परे राजनीति मानव के लिए फांसी के समान है, क्योंकि मनुष्य दूसरे कार्यों की भांति राजनीति भी या तो धर्म द्वारा अथवा अधर्म द्वारा अनुशासित करता है। परंतु धर्म से उनका तात्पर्य किसी धर्म विशिष्ट से न होकर उस मूल तत्त्व से है, जो हर धर्म में समान रूप से व्याप्त है। धर्म मनुष्य स्वभाव का वह स्थायी तत्त्व है, जो पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने को तैयार रहता है और जिसके कारण आत्मा तब तक नितांत व्याकुल रहती है जब तक वह अपने और अपने निर्णायक को पहचान नहीं लेती और दोनों के एकाकार की अनुभूति नहीं कर लेती। उनके अनुसार धर्मो की समता की स्वीकृति आवश्यक रूप से धर्म परिवर्तन के लिए किए जाने वाले प्रचार के विरुद्ध है।[2] गांधी जी धर्म को मनुष्य के अन्य क्रियाकलापों की तरह ही सामान्य क्रियाकलाप मानते हैं। उन्हीं के शब्दों में, 'धर्म उनके कार्यों में से कोई एक कार्य नहीं बल्कि सामान्य कार्य हैं।'[3] उपरोक्त कथनों को आगे और व्यापक स्वरूप देते हुए उनका यह मानना है कि धर्म को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्रियाकलापों से अलग बांटना न तो संभव है,

और न ही आवश्यक। उन्हीं के शब्दों में, 'जो यह कहते हैं कि राजनीति से धर्म का कोई संबंध नहीं है, वे लोग धर्म को नहीं जानते हैं।[4] वस्तुतः जहाँ ''धर्म'' शब्द का अर्थ लोग "मजहब" या ''मत" से लेते हैं, वहीं गांधी जी इस शब्द का तात्पर्य संस्कृति और अनुशासन की पद्धति से लेते हैं। अतः धर्म आचरण की वह नियमावली है जिसका संचालन जनता की नीति भावना के द्वारा होता है।

सामाजिक-आर्थिक आयाम

गांधी जी के सामाजिक एवं आर्थिक विचारों के पल्लवित एवं पुष्पित होने में जिन समकालीन विचारकों के प्रभाव को देखा जा सकता है, उसमें टॉल्सटाय एवं रस्किन का नाम अग्रणी है, टॉलस्टाय द्वारा प्रतिपादित यह विचार कि 'प्रत्येक मनुष्य को अपने दैविक भोजन के लिए शारीरिक श्रम करना चाहिए' ने गांधी को अत्यंत प्रभावित किया था। पुनः उन्हीं के अहिंसात्मक आंदोलन के सिद्धांत से प्रभावित होकर उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में टॉलस्टाय आश्रम की स्थापना की। इसी प्रकार रस्किन द्वारा प्रतिपादित धनलोलुपता से दूर रहने संबंधी विचार और रचनात्मक श्रम का भी उनके ऊपर अत्यंत प्रभाव पड़ा। रस्किन का विचार था कि 'श्रम मधु का उत्पादन करता है न कि मकड़े का जाल बुनता है।'[5]

तत्कालीन कांग्रेसी नेताओं में दादा भाई नौरोजी एवं रमेश चन्द्र दत्त के विचारों ने उनको काफी प्रभावित किया था। वे स्वयं लिखते हैं कि रमेश चन्द्र दत्त ने जमींदारों द्वारा किए जा रहे शोषण और मालगुजारी वसूली का जो विवरण प्रस्तुत किया उसे पढ़ कर वे रो उठे थे।[6] गांधी जी ने अपने अध्ययन एवं अनुभवों से यह निष्कर्ष निकाला कि आर्थिक समानता सबसे अनिवार्य है। यह तभी संभव है जब सादा जीवन उच्च विचार पर अमल किया जाए, अर्थात् आवश्यकताओं को सीमित कर अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने की कोशिश की जाए। परंतु यह स्पष्ट कर दना आवश्यक होगा कि समानता से उनका आशय पूर्ण समानता नहीं वरन् लगभग समानता था। उन्हीं के शब्दों में, 'आर्थिक समता का अर्थ कभी नहीं समझना चाहिए कि हर व्यक्ति के पास बराबर परिमाण में सांसारिक वस्तुएं हों, लेकिन उनका अर्थ है कि हर एक के पास रहने को ठीक मकान हो, खाने के लिए काफी संतुलित आहार हो और शरीर ढकने को काफी खद्दर हों।'[7] परंतु यह तभी संभव है जब मनुष्य अपनी रोटी स्वयं अर्जित करे तथा वह स्वेच्छा से निर्धनता को अपनाए अर्थात् आवश्यकता से अधिक जमा नहीं करे। अपने आर्थिक सिद्धांत का विस्तार करते हुए वे कहते हैं कि केंद्रित उद्योग और अहिंसा परस्पर विरोधी हैं। समझ-बूझ कर घरेलू धंधों को अपनाना विश्व शांति की दिशा में आवश्यक कदम है, क्योंकि कच्चे माल की प्राप्ति और तैयार माल की खपत के लिए पिछड़े देशों और बड़े बाजारों पर अधिकार करने की शर्त पर ही पनप सकने वाला बड़े पैमाने का उत्पादन साम्राज्यवादी शोषण एवं युद्धों का प्रमुख कारण है। राष्ट्रीय स्तर पर केंद्रित उत्पादन के परिणाम स्वरूप आर्थिक एवं राजनीतिक शक्ति के केन्द्रीयकरण के साथ-साथ लोकतंत्र के दूषित होने की संभावना बढ़ जाती है। अतः विकेन्द्रीकृत आर्थिक संगठन की वकालत करते हुए वे कहते हैं कि इसमें न्यायोचित वितरण की संभावना ज्यादा है तथा बेकारी, नैतिक, अवनति, शहरीकरण तथा औद्योगिकरण से उपजने वाली विकृतियों की संभावना कम है। उत्पादन एवं वितरण को विकेन्द्रित करने से आर्थिक जीवन बहुत कुछ स्वयं संचालित हो जाता है और धोखेबाजी और सट्टे की गुंजाइश बहुत कम रहती है।[8] समाज में व्याप्त आर्थिक असमानता को अहिंसक मार्ग से दूर करने हेतु उन्होंने ट्रस्टीशिप सिद्धांत का समर्थन किया जिसके द्वारा वे धनिकों को आर्थिक समता का आदर्श अपनाने एवं संपत्ति के संरक्षक की हैसियत से निर्धनों के लाभ के लिए उसका उपयोग करने को तैयार करने के पक्ष में थे। इस सिद्धांत के आलोचकों के प्रत्युत्तर में उनका कहना है, 'मेरा ट्रस्टीशिप का सिद्धांत कोई क्षणिक साधन या धोखाधड़ी की बात नहीं है, मुझे विश्वास है कि वह मेरे अन्य संपत्ति संबंधी सिद्धांतों के बाद भी जीवित रहेगा। उसके पीछे दर्शन और धर्म की स्वीकृति है। यह बात कि संपत्ति वालों ने उस सिद्धांत का आचरण नहीं किया सिद्धांत की असत्यता नहीं, धनवानों की कमजोरी सिद्ध करती है, कोई दूसरा सिद्धांत अहिंसा से मेल नहीं खाता।'[9]

गांधी जी आर्थिक ढांचे मात्र में परिवर्तन की कवायद नहीं करते। उनके अनुसार सामाजिक परिवर्तन आर्थिक ढांचे में परिवर्तन के साथ-साथ मानव स्वभाव में भी परिवर्तन आवश्यक है। इस परिवर्तन के लिए उन्होंने प्राचीन भारतीय दर्शन में वर्णित कुछ नैतिक सिद्धांतों का सहारा लिया है। इनमें सर्वप्रथम है ब्रह्मचर्य अर्थात् ''ब्रह्म की ओर ले जाने वाला अनुशासन''[10] सत्य गांधी का दूसरा सिद्धांत है। उनके अन्य सिद्धांत हैं-अस्तेय,

अपरिग्रह एवं स्वदेशी। उपरोक्त सिद्धांतों के साथ-साथ गांधी जी ने समाज में व्याप्त कुछ सामाजिक विसंगतियों से समाज को मुक्त करने पर भी विशेष बल दिया जिसमें प्रमुख हैं-अस्पृश्यता, रंगभेद, साम्प्रदायिक, असहिष्णुता एवं स्त्रियों को असमान अधिकार आदि।

उपरोक्त नकारात्मक तत्त्वों का अहिंसक मार्ग से समापन करने एवं अन्य सकारात्मक सिद्धांतों के अनुपालन के द्वारा गांधी जी ने एक आदर्श समाज के निर्माण की परिकल्पना की, जो एक विकसित समाज के द्योतक होने के साथ-साथ राष्ट्र निर्माण एवं विश्व शांति की स्थापना में भी सहायक होगी।

राजनीतिक आयाम

गांधी जी के राजनीतिक दृष्टिकोण के मूल में विकेंद्रीकरण है। यही कारण है कि वे न केवल राजतंत्र बल्कि सभी प्रकार के अधिनायकतंत्र एवं तानाशाही के विरोधी एवं जनतंत्र के कट्टर समर्थक थे। गांधी जी के आदर्श राज्य की परिकल्पना राज्य विहीन समाज पर आधारित है। इस समाज में अहिंसा, सर्वधर्म समभाव या धार्मिक सहिष्णुता, समता के साथ-साथ विकेंद्रित व्यवस्था का समावेश होगा तथा राज्य का समाज में कम से कम हस्तक्षेप होगा। ऐसा इसलिए आवश्यक है क्योंकि व्यक्ति के विपरीत राज्य आत्मारहित है एवं संगठित हिंसा पर आधारित है क्योंकि इसकी उत्पत्ति ही हिंसा से हुई है। उनके अनुसार, ''मैं राज्य शक्ति की वृद्धि की ओर अधिक से अधिक डर के साथ देखता हूँ, क्योंकि मालूम चाहे यह पड़ता हो कि राज्य शोषण को कम से कम कर के लाभ पहुंचा रहा है, पर वह मनुष्य के व्यक्तित्व का, जो संपूर्ण प्रगति का आधार है, विनाश करता है और इस प्रकार मनुष्य जाति को अधिकतर हानि पहुंचाता है। हमें बहुत से ऐसे उदाहरण मालूम हैं जिसमें मनुष्यों ने संरक्षक जैसा बर्ताव किया, लेकिन ऐसा एक भी उदाहरण हम नहीं जानते जिससे मालूम हो कि राज्य का जीवन वास्तव में निर्धनों के लिए रहा है।''[11]

वस्तुतः आदर्श या ''राम राज्य'' राज्य रहित जनतंत्र है। यह शुद्ध अराजकता की ऐसी स्थिति है जिसमें सामाजिक जीवन ऐसी संपूर्णता को पहुँच जाता है कि वह स्वयं संचालित हो जाता है। ऐसे समाज में कोई राजनीतिक सत्ता नहीं होती, क्योंकि कोई राज्य नहीं होता।[12] वे राज्य को एक साधन मानते हैं जिसका मूल कर्तव्य सभी के अधिकतम हित की प्राप्ति में सहयोग से है। ऐसे राज्य की संप्रभुता के विषय में उनका मत है कि, ''शुद्ध नैतिक सत्ता पर आधारित जनता की संप्रभुता'' ही श्रेष्ठ है।[13] ऐसा तभी संभव है जब समाज में स्वराज्य हो अर्थात् ''अनुशासनपूर्ण आंतरिक शासन'' हो न कि सभी प्रकार के नियंत्रण से मुक्त। ऐसे राज्य में जनता को राज्य सत्ता के विरुद्ध अहिंसक सत्याग्रह या विरोध करने की पूरी स्वतंत्रता होगी। उन्हीं के शब्दों में, 'सच्चा स्वराज्य कुछ मनुष्यों के राज्य सत्ता प्राप्त करने से नहीं आएगा बल्कि राज्य सत्ता का दुरुपयोग होने पर सबको उसका विरोध करने की क्षमता प्राप्त करने से आएगा।' दूसरे शब्दों में, स्वराज्य जनता को इस प्रकार शिक्षित करने से प्राप्त होगा कि उसमें सत्ता पर नियंत्रण रखने और उसका नियमन करने की क्षमता की चेतना आए।[14]

गांधी जी के राजनीतिक विचार अहिंसक राष्ट्र समाज तक ही सीमित नहीं है बल्कि उन्होंने अंतर्राष्ट्रीयता पर भी अपने विचार स्पष्ट किए हैं। उनके ही शब्दों में, 'पूर्ण स्वराज की मेरी धारणा सब (देशों) से अलग स्वतंत्रता की नहीं, बल्कि स्वस्थ और सम्मानपूर्ण नीति से (देशों) एक दूसरे के सहारे रहने की है।'[15] पुनः वे कहते हैं, विश्व का बुद्धिमान वर्ग आज एक-दूसरे के विरुद्ध युद्ध करने वाले पूर्ण स्वाधीन राज्यों की नहीं वरन् मैत्रीभाव रखने वाले परस्पर आश्रित राज्यों की आकांक्षा रखता है।[16] वस्तुतः अहिंसक अंतर्राष्ट्रीय संगठन एवं निःशस्त्रीकरण की सफलता हेतु, उनका यह मानना था कि साम्राज्यवाद एवं आर्थिक प्रतियोगिता के समापन से ही यह पूर्णरूपेण संभव हो सकता है। गांधी जी के शब्दों में, 'अंतर्राष्ट्रीय संघ तभी स्थापित होगा जब उसमें सम्मिलित सभी छोटे-बड़े राष्ट्र पूरी तरह स्वतंत्र होंगे।..... अहिंसा पर आधारित समाज में छोटे से छोटा राज्य यह अनुभव करेगा कि उसका महत्व उतना ही बड़ा है जितना कि बड़े से बड़ा राष्ट्र।'[17] अतः गांधी जी न्यायोचित राजनीतिक एवं आर्थिक अंतर्राष्ट्रीय संबंध की स्थापना की बात करते हैं। निःशस्त्रीकरण के विषय में गांधी के विचार सदैव बदलते रहे हैं। पहले उन्होंने कहा 'मेरे स्वशासन में शस्त्र की कोई आवश्यकता नहीं है।'[18] पुनः वे कहते हैं, 'काश! आज मेरे स्वराज्य में सिपाहियों के लिए स्थान होता - क्योंकि मेरे पास संपूर्ण संसार को अहिंसा का पाठ पढ़ाने की क्षमता नहीं है।[19] पुनः वे लिखते हैं, 'यदि भारत पूर्णरूपेण अहिंसक मार्ग का अनुसरण करता है तो यह विश्व शांति के लिए अग्रणी कार्य होगा।' इतना

ही नहीं उनका कहना है कि, 'यदि भारत अपनी अहिंसक शक्ति में वृद्धि नहीं करता है, तो वह न तो अपने लिए और न ही संसार के लिए कुछ प्राप्त करेगा। भारत के सैन्यीकरण का अर्थ है स्वतः अपनी बर्बादी और विश्व की बर्बादी।'[20] इसी तर्क को गांधी जी सभी देशों को अपनाने की सलाह देते हैं, जिसकी पराकाष्ठा अंतर्राष्ट्रीय निःशस्त्रीकरण के रूप में होगी।

गांधी जी के राजनीतिक परिप्रेक्ष्य का एक अहम् पहलू समाजवाद भी है। परंतु उनके समाजवाद की परिभाषा या समझ मार्क्स के सिद्धांत के बिल्कुल विपरीत है क्योंकि उनकी सोच में महज भौतिक परिवर्तन और वह भी हिंसक या अशुद्ध मार्ग के द्वारा उन्हें कतई स्वीकार्य नहीं है। यद्यपि वे भी एक वर्ग विहीन एवं राज्य विहीन समाज की परिकल्पना करते हैं, परंतु वे मानव हृदय से बुरी या आसुरी शक्तियों को संगीन के नोक से हटा कर समाजवादी, सामाजिक व्यवस्था की स्थापना नहीं करना चाहते।[21] ऐसा वे इसलिए कहते हैं क्योंकि उन्हें संक्षिप्त हिंसात्मक मार्ग पर चलकर सफलता प्राप्त करने में विश्वास नहीं था।'[22] उनका यह स्पष्ट मानना था कि अहिंसा पर आधारित सर्वोदय एक अत्यंत लंबी यात्रा प्रतीत हो सकती है परंतु अंततोगत्वा यही स्थायी एवं छोटा मार्ग है।'[23]

निष्कर्ष : निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि यद्यपि गांधी जी के विचारों के पल्लवित एवं पुष्पित होने में अनेकानेक भारतीय एवं पाश्चात्य विचारों एवं ग्रंथों का योगदान रहा है, परंतु उनके प्रस्फुटित होकर मौलिक स्वरूप में लाने का श्रेय स्वयं उनको जाता है। वस्तुतः उन्होंने अत्यंत गहन से गहन विषयों को जितनी सरलता एवं स्पष्टता से पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास किया वह कोई विलक्षण चिंतक ही कर सकता है। संभवतः एच. एलेक्जेंडर ने उनके कृतित्व की सबसे सटीक समालोचना प्रस्तुत की है, 'गांधी को वर्गीकृत कर किसी एक वाद के जाल में नहीं बांधा जा सकता है। उनकी महानता इसी तथ्य में निहित है कि उनमें एक साथ परंपरावादी, उदारवादी, समाजवादी, क्रांतिकारी, साम्यवादी एवं अराजकतावादी की झलक समग्रता से देखी जा सकती है।[24]

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 *हरिजन, 23.3.40, पृ. 55*

2 *बापूज लेटर्स टू मीरा, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, पृ. 4*

3 *हरिजन, 24.12.1938, पृ. 393*

4 *गांधी, एम. के., आत्मकथा, भाग-5, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1959. 7 133*

5 *मेनन, वी. लक्ष्मी, रस्कीन और गांधी, वाराणसी, सर्वसेवा प्रकाशन, 1956, पृ. 25-26*

6 *हिन्द स्वराज्य, पृ. 93*

7 *हरिजन, 18.8.40, पृ. 253*

8 *वहीं, 2.11.34 पृ. 302*

9 *वहीं, 16.12.39, पृ. 376*

10 *वहीं, 22.6.47, पृ. 200*

11 *बोस. एस. के., कैपिटलिज्म, कम्युनिज्म एंड को-एक्जिसेंट्स द इण्डियन नेशन, 17.3.96*

12 *यंग इण्डिया, 2.7.31, पृ. 411*

13 *वहीं, भाग 2, पृ. 491*

14 *वहीं, 2.7.31, पृ. 411-12*

15 *वहीं, भाग 1, पृ. 350*

16 *वहीं, 26.3.31*

17 *वहीं, भाग 2, पृ. 863*

18 *राव., वी. के. आर. वी., डिसआर्मामेंट एंड डेवलपमेंट, गांधी मार्ग, नई दिल्ली, मई-जून 1982, पृ. 420*

19 *गांधी, एम. के., फॉर पेसिफिस्ट्स, अहमदाबाद, 1959, पृ. 43*

20 *हरिजन, 21.6.42*

21 *वहीं, 13.3.1937*

22 *यंग इण्डिया, 11.12.1924*

23 *एन. के. बोस, सेलेक्संस फ्रॉम गांधी नवजीवन, 1948, पृ. 38*

24 *होरेस, एलेक्जेंडर, गांधी थ्रू वेस्टर्न आईज, पृ. 139*

चरखी दादरी क्षेत्र के शैक्षणिक विकास में रामकृष्ण गुप्ता की भूमिका

तरसेम
शोधार्थी, श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टिबड़ेवाला विश्वविद्यालय,
विद्यानगरी, चुडैला (झुंझुनू)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

15 अगस्त 1947 को भारत गुलामी की बेड़ियों से तो स्वतंत्र हो गया परंतु शिक्षा के क्षेत्र में चरखी दादरी क्षेत्र काफी पिछड़ा हुआ था। इस पिछड़ेपन को दूर करने के लिए शिक्षा का प्रसार आवश्यक था और बिना शिक्षा के अंधकार दूर नहीं किया जा सकता था। इस अभाव को समाज के प्रायः सभी अग्रणी समझते थे परंतु किसी में भी इस महान कार्य का बीड़ा उठाने का साहस नहीं था। इस क्षेत्र के प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी व उस समय के सांसद रामकृष्ण गुप्ता के हृदय में यह बात बार-बार महसूस होती थी कि इस क्षेत्र के होनहार छात्रों को साधनों के अभाव में शिक्षा से वंचित न रहना पड़े। उनका विश्वास था कि इस पिछड़ेपन व अंधकार को केवल और केवल शिक्षा से ही दूर किया जा सकता है। अपनी अत्यधिक राजनीतिक व्यस्तता के रहते हुए भी उन्होंने इस कार्य की पूर्ति का उत्तरदायित्व अपने कंधों पर लिया और अदम्य साहस का परिचय दिया। इसी पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिए श्री रामकृष्ण गुप्ता ने अपने कुछ परिश्रमी, निष्ठावान, समाज के अग्रणी व आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों के कार्यकर्ताओं को साथ लेकर दादरी एजुकेशन सोसाइटी की स्थापना की। जिसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा की दृष्टि से क्षेत्र के पिछड़ेपन को दूर करना था।

संकेताक्षर : *चरखी, दादरी, शैक्षणिक, रामकृष्ण, व्यस्तता, निष्ठावान।*

देसी रियासतों में अन्याय एवं अत्याचार के विरुद्ध प्रजामंडल गठित किए गए। इसी प्रकार जींद व दादरी स्टेट के अंदर भी प्रजामंडल की स्थापना हुई। श्री रामकृष्ण गुप्ता, चौधरी निहाल सिंह, चौधरी मेहताब सिंह आदि लोगों ने रियासत के खिलाफ जद्दोजहद की। जेल आदि की यातनाएं बर्दाश्त की तथा राजा से रियासतों को स्वतंत्र कराने में महान योगदान दिया।[1] स्वतंत्रता के पश्चात भी हरियाणा प्रदेश शिक्षा, संचार, स्वास्थ्य आदि सुविधाओं की स्थिति में बहुत पीछे था। हरियाणा बनने से पहले पंजाब के हाथों इसे अन्याय का सामना करना पड़ा। उस समय शिक्षा क्षेत्र में स्थिति बहुत दुखदाई थी। इसका अंदाजा हम इन तथ्यों के आधार पर लगा सकते हैं कि 1964 ई. तक पंजाब क्षेत्र में शिक्षित लोगों की संख्या 27.65 लाख और हरियाणा क्षेत्र में केवल 14.94 लाख थी। पंजाब क्षेत्र में 16 कॉलेज जिनमें 28,329 विद्यार्थी, 830 हाई स्कूल जिनमें 1,86,459 विधार्थी, 2936 मिडिल स्कूल जिनमें 2,90,097 विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। इसके विपरीत हरियाणा क्षेत्र में 8 कॉलेज जिनमें 14,348 विद्यार्थी, 484 हाई स्कूल जिनमें 1,44,933 विद्यार्थी, 1389 मिडिल स्कूल जिनमें 2,08,268 विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। यदि शिक्षा पर सरकार द्वारा किए गए खर्च का ब्यौरा लें तो पता चलेगा कि 1963-64 के वर्ष में शिक्षा पर कुल खर्च का केवल 32.8 प्रतिशत हरियाणा क्षेत्र पर और 52 प्रतिशत पंजाब क्षेत्र पर खर्च किया गया जबकि हरियाणा की जनसंख्या 37.06 प्रतिशत और पंजाब की जनसंख्या 50.98 प्रतिशत थी।[2] उपरोक्त तथ्यों का आधार पंजाब सरकार द्वारा 1964 ई. में बनाई गई हरियाणा विकास समिति की रिपोर्ट है। इस समिति के अध्यक्ष स्वतंत्रता सेनानी पंडित श्रीराम शर्मा थे।[3]

दादरी एजुकेशन सोसायटी

14 फरवरी 1961 में दादरी एजुकेशन सोसाइटी की स्थापना की गई । जिसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा की दृष्टि से क्षेत्र के पिछड़ेपन को दूर करना था। धन के अभाव में कोई भी विद्यार्थी उच्च शिक्षा की पिपासा को शांत करने से वंचित न रहे तथा उन्हें अपने देश की परंपराओं के अनुकूल शिक्षा प्रदान करके उनमें देशाभिमान एवं आत्म गौरव की भावनाओं का विकास किया जाए। जिससे क्षेत्र में जन समुदाय के नैतिकत्व, संस्कृति, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक स्तर को ऊंचा उठाने में सहयोग प्राप्त हो।

सर्वप्रथम इस संस्था के संविधान का निर्माण कर उसे शीघ्र ही एक पंजीकृत संस्था का रूप दिया गया। इसके पश्चात दानवीरों द्वारा दिए जाने वाले चंदे में आने वाली असुविधा को हटाने के लिए आयकर छूट प्रमाण पत्र प्राप्त कर लिया गया।

शिक्षा प्रदान करने की दिशा में सर्वप्रथम उच्च शिक्षा के लिए महाविद्यालय के निर्माण की योजना लोगों के सामने रखी गई। लोगों ने इसे केवल दिवास्वपन कहकर इसका उपहास उड़ाया। जनता से अपेक्षित सहयोग नहीं मिलने पर भी गुप्ता जी एवं उनके साथियों में उत्साह की कोई कमी नहीं आई बल्कि दृढ़ संकल्प के साथ इस मार्ग पर बढ़ते ही रहे। धन की आवश्यकता को पूरा करने के लिए हरियाणा के उन धनी लोगों से संपर्क किया गया जो कि जीविकोपार्जन के लिए हरियाणा से बाहर जा बसे थे। इस क्षेत्र के विकास की योजना सामने रखने पर उनमें सहयोग देने की विशेष इच्छा जागृत हुई और इसमें सोसाइटी को विशेष सफलता प्राप्त हुई। धीरे-धीरे क्षेत्र के लोगों ने भी अपना योगदान तन-मन-धन से देना प्रारंभ किया।[4]

जनता के मुट्ठी-मुट्ठी भर दानों से सोसाइटी का खलिहान भरने लगा। कल्पना में संजोए स्वप्न साकार होने लगे। इसके बाद राज्य व केंद्रीय सरकार के दरवाजे खटखटाए गए। मंत्रियों व अधिकारियों के सामने प्रार्थना करने पर आशा के अनुकूल प्रभाव पड़ा। सरकार की ओर से जहां एक और धन मिला वहीं दूसरी तरफ संस्था के निर्माण के लिए खाली भूमि भी निश्चित मूल्य पर प्राप्त हुई। ब्लॉक समिति, स्थानीय मार्केट कमेटी तथा नगरपालिका से इस कार्य के लिए सहायता देने की प्रार्थना की गई। जिसमें उन्होंने बढ़-चढ़कर सहयोग दिया। सोसाइटी ने शिक्षण संस्थान के विशाल भवन के निर्माण का कार्य प्रारंभ किया। योजनानुसार भवन की नींव रखी गई और सर्वप्रथम महाविद्यालय के भवन की आधारशिला पंजाब प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री प्रताप सिंह कैरों के कर कमलों द्वारा रखी गई। दीवारें खड़ी की गई परंतु धन का कोष रिक्त हो गया। चंदा इकट्ठा करने की योजना बनाई गई परंतु देश की राजनीतिक परिस्थिति तथा क्षेत्र में अकाल पड़ने के कारण आवश्यकतानुसार धन नहीं जुट पाया।

इस गंभीर परिस्थिति में श्री गणपतराय रासिवासिया का सहयोग विशेष काम आया। उन्होंने स्वयं तो एक विपुल धनराशि दी ही, अपने संबंधियों व मित्रों से भी काफी धनराशि दान के रुप में दिलवाई। शिक्षा के प्रति उनकी श्रद्धा भावना से प्रभावित होकर सोसाइटी ने महाविद्यालय के साथ श्री गणपत राय राशिवासिया का नाम जोड़ दिया।

तेजी से निर्माण कार्य के फलस्वरुप सन् 1965 में केवल 150 विद्यार्थियों से ही कक्षाएं प्रारंभ की गई। यह महाविद्यालय अपने थोड़े समय में इतना लोकप्रिय हो गया कि इसका अनुमान इसकी बढ़ती हुई छात्र संख्या से लगाया जा सकता है। सन् 1991 में इसमें पढ़ने वालों की संख्या 2000 के आसपास थी। महाविद्यालय के पास 40 कमरों वाला विशाल भवन सभी सुविधाओं से युक्त है।

इसके पश्चात सोसायटी की आय बढ़ाने के लिए चरखी दादरी शहर के मुख्य बाजार में सोसायटी ने किराए के लिए दुकानों का निर्माण किया और बैंकों के लिए भवन बनाए। इस समय सोसाइटी के पास 200 से अधिक दुकानें हैं जिनके किराए से प्राप्त राशि सोसायटी की आय का स्थाई स्रोत है।[5] आज भी दादरी एजुकेशन सोसायटी आसपास की ग्रामीण जनता तथा प्रवासी दान वीरों के सहयोग से शिक्षा के प्रसार के लिए लगातार कार्य कर रही है। सोसायटी के अंतर्गत जो स्कूल एवं कॉलेज फले-फूले हैं उनका विवरण इस प्रकार है:-

1. जनता विद्या मंदिर गणपतराय रासीवासिया महाविद्यालय
2. सेठ लक्ष्मी नारायण सांवड़ियां डी.ई.एस. अस्पताल

3. सेठ मुरारीलाल रासीवासिया सरस्वती शिक्षण महाविद्यालय
4. जे.वी.एम.जी.आर.आर. इंस्टीट्यूट ऑफ कम्प्यूटर अपलीकेशन
5. केदारनाथ अग्रवाल इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट
6. सेठ जानकीदास कादमा वाला डी.ई.एस. पब्लिक स्कूल
7. मुरारीलाल रासीवासिया आयुर्वेदिक महाविद्यालय
8. सेठ धनसीराम कादमावाला आदर्श विद्या मंदिर वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय
9. सेठ गोपीराम रासीवासिया हिन्दी–संस्कृत कन्या महाविद्यालय

उक्त सभी संस्थाओं में ज्यादातर एक ही परिसर में स्थित हैं। चरखी दादरी में जिस सड़क पर संस्थाएं बनी हुई हैं वह मार्ग रामकृष्ण मार्ग के नाम से भी जाना जाता है। सोसाइटी का यह शिक्षा परिसर लगभग 100 एकड़ जमीन पर फैला हुआ है और सोसाइटी की कुल संपत्ति का अनुमान लगाना हमारे लिए बहुत कठिन है।

दादरी एजुकेशन सोसायटी के पदाधिकारियों में अदम्य उत्साह, अडिग आस्था और साथ ही उनमें कार्यकुशलता भी है। विगत कुछ वर्षों में इन्होंने जो उपलब्धियां प्राप्त की हैं वे इन्हें अनवरत आगे बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। इन उपलब्धियों के लिए इन्हें प्रशासन, स्थानीय जनता, दादरी के आसपास की ग्रामीण जनता, प्रवासी हरियाणावासी और सरकार से पूर्ण सहयोग मिलता रहा है। इन कुछ वर्षों में सोसायटी ने इतना विशाल, सभी सुविधाओं से युक्त परिसर बना कर एक अद्वितीय उदाहरण पेश किया है। जिसके लिए इस क्षेत्र की जनता रामकृष्ण गुप्ता की विशेष रुप से कृतज्ञ है।[6] 11 नवंबर 1993 को श्री श्याम लाल मनचंदा द्वारा रामकृष्ण गुप्ता का साक्षात्कार किया गया जो मौखिक इतिहास प्रतिलेख के रूप में प्रधानमंत्री संग्रहालय में सुरक्षित है, इसमें जब सोसाइटी के विषय में उनसे पूछा गया–

मनचंदा : आप इस दिशा में स्वयं ही सब काम करते थे या आपके और सहयोगी भी थे ?

गुप्ता : जैसे मैंने कहा कि हमने एक दादरी एजुकेशन सोसाइटी बनाई थी। तो मैं चाहता था कि दो–चार आदमी चंदा लेने जाएं, लेकिन वे इस काम में कोई खास दिलचस्पी नहीं लेते थे। शुरु–शुरु में तो कोई खास नहीं ली और एक–दो आदमी मुश्किल से मेरे साथ आते जाते थे। सारे हिंदुस्तान में यह नियम है कि जब तक कम–से–कम 7 सदस्य न हो, सोसाइटी नहीं बन सकती। तो वे 7 सदस्य भी मैंने घर बैठकर, अपने पास से पैसे देकर, सौ –सौ रुपए देकर बनाए। तो शुरु में तो लोगों को कोई दिलचस्पी नहीं थी। अब तो ठिकाना ही नहीं, हर एक आदमी चाहता है कि वह सदस्य बन जाए। अब तो मेरा ख्याल है कि उस कॉलेज की संपत्ति ही अरबों से ऊपर की होगी और अब तो 8–9 संस्थाएं चल रही हैं।[7]

श्री रामकृष्ण गुप्ता भूतपूर्व सांसद व उनके कर्मठ सहयोगियों की रचनात्मक कर्म वाटिका का प्रथम पुष्प सन् 1965 में जनता विद्या मंदिर गणपत राय रासिवासिया महाविद्यालय के रूप में विकसित हुआ। कठिन समय में सेठ गणपत राय रासिवासिया ने महाविद्यालय के सुचारू संचालन के लिए स्वयं भी विपुल धनराशि दी तथा अपने सगे संबंधी मित्रों से भी दिलवाई। इसी कारण महाविद्यालय के साथ उनका नाम भी जोड़ा गया।[8]

निष्कर्ष

उपरोक्त सभी बातों का गहनता से विश्लेषण करने के बाद हम यह कह सकते हैं कि रामकृष्ण गुप्ता शिक्षा के प्रति पूर्णतया समर्पित थे। विषम परिस्थितियों में एवं धनाभाव के होते हुए भी उन्होंने कभी हिम्मत नहीं हारी। आज चरखी दादरी क्षेत्र शिक्षा की दृष्टि में अगर अग्रणी है, तो उन सबका श्रेय गुप्ता जी एवं दादरी एजुकेशन सोसाइटी को दिया जा सकता है। शिक्षा के प्रति बचपन से ही उनकी सोच विशिष्ट थी। उन्हें स्वयं शिक्षित होने के लिए दर–दर की ठोकरें खानी पड़ी थी। काफी संघर्ष करने के पश्चात ही वे अपनी स्वयं की शिक्षा पूरी कर पाए थे, इसलिए उन्हें इस बात का पूर्णतया आभास था कि यहां के क्षेत्रवासियों को शिक्षा के लिए कितना संघर्ष करना पड़ता है।

यही कारण था कि उन्होंने दादरी क्षेत्र में शिक्षा का एक पौधा लगाया और उसे अपने प्रयासों से सिंचित किया। उनके द्वारा किए गए प्रयासों को सफलता भी मिली और वह पौधा अब पूरा वटवृक्ष ही नहीं, बल्कि यह कहें कि बहुत बड़ा बाग बन चुका है, जिसकी सुंदरता एवं सुगंधता दादरी एवं आसपास के क्षेत्रों को लाभान्वित कर रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हरियाणा स्मारिका (स्वतंत्रता के 40 वर्ष) 1947–1987, पृ.सं.–7
2. हरियाणा के हितों के लिए न्याय युद्ध : प्रो. तेजा सिंह–प्रवीन पब्लिकेशन रोहतक, 1988, पृ.सं.–9
3. वही, पृ.सं.–7
4. डॉ. सुशीला आर्या : श्री रामकृष्ण गुप्ता भूतपूर्व सांसद, अभिनन्दन ग्रन्थ : प्रकाशक–श्री रामकृष्ण गुप्ता जन्म दिवस समारोह समिति, चरखी दादरी, 1992, पृ.सं.–33
5. वही, पृ.सं.–34
6. वही, पृ.सं.–35
7. ओरल हिस्ट्री ट्रान्सक्रिप्ट : श्री रामकृष्ण गुप्ता, बाई श्याम लाल मनचन्दा, दिनांक 11/11/1993, नेहरू मेमोरियल म्युजियम एंड लाइब्रेरी, दिल्ली, पृ. सं.–355
8. डॉ. सुशीला आर्या : श्रीराम कृष्ण गुप्ता भूतपूर्व सांसद, अभिनन्दन ग्रन्थ : प्रकाशक–श्री रामकृष्ण गुप्ता जन्म दिवस समारोह समिति, चरखी दादरी, 1992, पृ.सं.–36

पश्चिमी राजपूताना में दशनामी सम्प्रदाय का चिन्तन, शाखाएँ, संगठन, आचरण एवम् विस्तार तथा धार्मिक योगदान

श्रीमती पंकज परमार
शोधार्थी, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

दशनामी सम्प्रदाय पश्चिमी राजपूताना के सर्वाधिक सम्मानिक धार्मिक संगठनो में से एक है तथा प्राचीनकाल से अद्यतन इस सम्प्रदाय ने इस देश के आध्यात्मिक उत्थान और समाज में नैतिक मूल्यों की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। इस संगठन ने राजस्थान ही नही भारत तथा विदेशों में भी अनेक धार्मिको मनीषियों एवं विद्धानों का ध्यान आकर्षित किया हैं। तथा एक प्रभावशाली धार्मिक संगठन के रूप में सम्पूर्ण विश्व को आलोक प्रदान किया हैं।

संकेताक्षर : *दशनामी, योगपट्ट, त्रिदंडी, घरबारी, गोसावी।*

भारतवर्ष में साधु संतो के सहस्त्रो संप्रदाय विद्यमान हैं। इन्ही सम्प्रदायों में एक है दशनामी सम्प्रदाय, दशनामी सम्प्रदाय की स्थापना दक्षिण भारत के दार्शनिक संत शंकराचार्य ने नवी शताब्दी में की थी।[1] उनका उदय उस काल में हुआ था जब भारतीय समाज विखंडित हो रहा था तथा धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं दार्शनिक अराजकता व्याप्त हो रही थी।[2] उन्होने विभिन्न संप्रदायों को एकीकृत किया तथा संघर्षरत विभिन्न धार्मिक गुटों में समन्वय स्थापित किया।[3] शंकराचार्य ने पूरे देश का भ्रमण किया तथा शास्त्रार्थ व वाद–विवाद के द्वारा लोगो को वेदान्त–दर्शन का अनुकरण करने हेतु प्रेरणा प्रदान की उन्होने ''अद्वैतवाद'' नामक दार्शनिक सिद्धांत का प्रतिपादन किया। वेदान्त हिन्दूओं का जीवंत धर्म है एवं शंकराचार्य ने इसके बौद्धिक प्रतिरूप को रेखांकित किया।[4]

शैवमत की दस शाखाए जिन्हे शंकराचार्य ने संगठित किया। दशनाम के नाम से प्रसिद्ध हैं।[5] इन संघो में दीक्षा के अनन्तर संन्यासियों द्वारा जो नाम ग्रहण किये जाते है उनके साथ जोडे जाने वाले दस शब्दो से दशनाम का प्रचलन हुआ हैं जिसको योगपट्ट कहा जाता हैं। ये शब्द–गिरी, पुरी, भारती, वन, अरण्य, पर्वत, सागर, तीर्थ, आश्रम एवं सरस्वती।[6]

शंकराचार्य जी ने भारतवर्ष में भौगोलिक रूप से अनुकुल।[7] चार स्थानों पर चार मठ स्थापित किए ये मठ थे उत्तर में ज्योतिपीठ (बद्रिकाश्रम) दक्षिण में श्रृंगेरी मठ (कर्नाटक श्रृंगेरी पहाडियों में) पूर्व में गोवर्धनपीठ (पुरी) तथा पश्चिम में शारदापीठ (द्वारका गुजरात) ये चारों मठ दशनामी संप्रदाय के प्रधान केन्द्र थे तथा यही से इस संप्रदाय का विस्तार संपूर्ण भारत में हुआ तथा हर शहर हर गॉव मे इनसे जुड़े पीठ के अनुसार मठों को स्थापित किया गया। दशनामी संप्रदाय का विस्तार किया गया।[8]

ये मठ पूर्ण रूप से सम्पन्न थे एवं शीघ्र ही अन्य स्थानों पर इन्होने शाखाएँ बना ली और ये मठ शंकाराचार्य की शिक्षाओं के प्रमुख केन्द्र बन गए। बारह शताब्दियों के उत्तार–चढाव के बावजुद ये मठ आज भी प्राचीन भारतीय संस्कृति तथा संस्कृत भाषा तर्कशास्त्र व वेदान्त के प्रमुख केन्द्र हैं।[9]

दशनामियों के चारों महान केन्द्र एवं उनसे जुडे सभी अधीनस्थ संगठनों को एक विशेष अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत श्रेणीबद्ध किया गया है, प्रत्येक क्षेत्र को एक विशेष गौत्र–नाम प्रदान किया गया हैं। प्रत्येक क्षैत्र के संन्यासियों का विभिन्न प्रथाओं व रिवाजों के आधार पर विभाजन किया गया। प्रत्येक केन्द्र का अपना अभीष्ट देवता या देवी है तथा प्रत्येक केन्द्र नवदीक्षितों को अलग–अलग उपाधियाँ प्रदान करते हैं। दशनामियों की अलग–अलग शाखाएँ किसी न

किसी प्रमुख केन्द्र अथवा पीठ से सम्बन्ध हैं।[10] कुल मिलाकर दशनामियों का संगठन शाखाएँ अत्यन्त सुदृढ और व्यापक हैं। सारणी 1 के माध्यम से हम इन मठों के स्वरूप अधिकार क्षेत्र एवं आचरण संबंधी नियमों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते है –

सारणी–01

दशनामी संन्यासियों का सांगठनिक स्वरूप, अधिकार क्षैत्र तथा नियमावली (या आचार–संहिता)

1	मठ	गोवर्द्धन पीठ	शारदा पीठ	श्रृंगेरी पीठ	ज्योतिपीठ
2	स्थान	पुरी (पूर्व)	द्वारका (पश्चिम)	श्रृंगेरी (दक्षिण)	जोशी (उत्तर)
3	प्रथम आचार्य	पद्मपाद	विश्वरूप अथवा सुरेश्वर	पृथ्वीधर अथवा हस्तामलक	त्रोटक
4	अधिकार क्षैत्र	अंग, पंग, कलिंग, मगध, उत्कल और बर्बर (बरार)	सिंधु सौवीर, सौराष्ट्र राजपूताना और पश्चिम भारत	आंध्र, द्रविड, कर्नाटक केरल एवम महाराष्ट्र देश	कुरू, पांचाल, पंजाब, कश्मीर, कम्बोज आर्यावत गिरि पर्वत
5	संबद्ध शाखाएँ	वन और अरण्य	तीर्थ एवं आश्रम	पुरी, भारती, सरस्वती	गिरि, पर्वत व सागर
6	नवदीक्षित की उपाधि	प्रकाश	स्वरूप	चेतन	नंद या आनंद
7	वेद	ऋग्वेद	सामवेद	यजुर्वेद	अथर्ववेद
8	अधिष्ठाता देवता	जगन्नाथ	सिद्धेश्वर	आदि वाराह	नारायण
9	देवी	विमला	भद्रकाली	कामाक्षी	पुष्पगिरि
10	तीर्थ	महोदधि	गोमती	तुंगभद्रा	अलकनंदा
11	सिद्धान्त अथवा महावाक्य	प्रज्ञान ब्रह्म (ब्रह्मपूर्ण ज्ञान है)	तत्वमसि (तुम वह हो)	अंह ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूँ)	अयमात्मा ब्रह्म (यह आत्मा ही ब्रह्म है)
12	गोत्र	कश्यप या अव्यय	अग्नि या अविगत	भुर्भव :	भृगु
13	मन्दिर क्षेत्र	जगन्नाथ पूरी	द्वारका	रामेश्वर	बद्रिकाश्रम
14	उपाधि के अनुसार उपनिषद् का स्वाध्याय	वन–ऐतरीय अरण्य कौषीतकि	तीर्थ–केन आश्रम छांदोग्य	पुरी–कठ भारती तैतिरीय सरस्वती वृहदारण्यक	गिरि–मुंडक पर्वत प्रश्नो सागर माण्डूक्य
15	प्रथाओं अथवा रिवाजों के अनुसार किए गए विभाग	भोगवार वे जो ऐहिक वस्तुओं के प्रति उदासीन है वे केवल उन्ही वस्तुओं का भोग करते जो जीवन के लिए अतिआवश्यक हैं।	कीटवार (वे जो बहुत अल्प मात्रा में भोजन का प्रयास करते हैं।)	भूरिवार (वेजो वन उत्पादों एवं जडी बुटियों पर ही जीवन व्यतीत करते हैं।	आनंदवाद (वे जो भिक्षा नही मांगते व स्वतंत्र दान पर जीवन व्यतीत करते हैं)

सारणी से स्पष्ट है कि दशनामी संन्यासियों का संघ कितना सुदृढ एवं विस्तृत हैं।[11]

दशनामी संघ में संन्यासी अपनी आध्यात्मिक प्रगति अथवा चरित्र की उच्चता के अनुसार चार विभागों में श्रेणीबद्ध हैं। कुटीचक, बहूदक, हंस एवं परमहंस।[12]

कुटीचक एवं बहूदक त्रिंदडी उपाधि धारण करते है जो कि वाणी विचार एवं कर्म के नियंत्रण के प्रतीक है हंस व परमहंस एकदंडी कहे जाते हैं।[13]

दशनामी संन्यासियों का एक अन्य विभाग उनकी आध्यात्मिक उपलब्धियों की मात्रा के आधार किया गया है इन विभागों को तीन दार्शनिक गुणों के द्वारा जाना जाता हैं। (1) रजोगुणी–जो कि अखाडों के प्रमुख है तथा संसार में रहते है। (2) तमोगुणी जो भिक्षा पर निर्भर होते है एवं दिन भर की आवश्यकता हेतु भिक्षाटन करते है तथा (3) सतोगुणी जो भिक्षाटन भी नही करते तथा स्वर्ग व अपने पडोसियों में विश्वास रखते हैं।[14]

दशनामी संन्यासियों का एक विवाहित वर्ग भी है, जो कि ग्रहस्थ अथवा घरबारी संन्यासी कहे जाते हैं।[15] दक्षिण भारत में ये ''गोसाई'' कहा जाता हैं।[16]

निस्संदेह भारत देश के संन्यासी सम्प्रदायों में दशनामी संप्रदाय सर्वाधिक संगठित, केंद्रीकृत और सम्मानित है एवं ये संन्यासी प्राय : संस्कृत विद्या व वेदांत दर्शन के प्रकाण्ड पंडित होते हैं।[17]

प्राचीनकाल में एवं मध्यकाल में इनको क्रमश : बौद्धो, जैनों, वैष्णवों तथा मुसलमानों के आक्रमण का सामना करना पडा अहिंसा के प्रति आबद्ध होकर उन्होने भारी लौह त्रिशुलों से सुसज्जित दशनामी नागा सैनिकों की भर्ती अपने सम्प्रदाय में की जिन्होने संन्यासियों की रक्षा की।[18]

असुरक्षा व अशांति के इस काल में नागा साधुओं का महत्व बढ गया। विरोधी राज–रजवाडे अपने प्रतिस्पर्धियों के विरूद्ध युद्धो में उन्हे धन तथा सम्मान देकर अपने सैन्य दलों में रखने लगे और बडे–बडे व्यापारी उनके संरक्षण में अपना माल, धन, हुंडियॉ आदि एक स्थान से दुसरे स्थान को भेजने लगे।[19]

इन दशनामी संन्यासियों ने पश्चिमी राजस्थान में भी कई मठो, शाखाएँ, संगठन की स्थापना की तथा यहां पर भी ये इन राजा–महाराजाओं के सैन्य बल के द्वारा सहायता करने लगे और ये शासक इनको धन भूमि तथा ताम्रपत्र भी प्रदान किए। बीकानेर रियासत में महाराज सूरतसिंह (सन् 1987–1828 ई.) का शासनकाल दशनामी सम्प्रदाय के लिए अत्यन्त ही महत्वपूर्ण रहा है इसी समय में श्री धनीनाथ गिरिजी महाराज अपने दो शिष्य फतेहगिरी व बख्तगिरी के साथ बीकानेर की सीमा में प्रवेश किया स्वामी जी के त्याग व तपोनिष्ठ आचरण के कारण महाराजा सूरतसिंह ने उन्हे केवल मुक्त हस्त से भूमि अनुदान की और स्वयं भी इस सम्प्रदाय के अनुयायी बने गये।[20]

इन संन्यासियों के पास प्रचुर संपति थी तथा तीर्थ–स्थानों को जाने वाले मार्गो के रूप में व्यापारिक मार्गो की जानकारी भी थी, ये संन्यासी बडी संख्या में शस्त्रों से सुसज्जित होकर यात्रा करते थे एवं अपनी धार्मिक भूमिका के कारण उनको सर्वत्र सम्मान मिलता था दुसरे व्यापारियों की अपेक्षा इनको बहुत कम परेशानियाँ का सामना करना पडता था।[21]

पश्चिमी राजस्थान में भी दशनामी अधिक संख्या में मिलते हैं। जोधपुर बीकानेर एवं जैसलमेर में भी इनके मठ मिलते है, तथा राज्यों की तरफ से समय–समय पर इन्हे भेंट प्रदान की जाती रही हैं। राज्यों की तरफ से आज भी कुछ सदाव्रत बटने की परम्परा देखने को मिलती हैं।[22]

ये दशनामी मध्यकालीन विषय परिस्थितियों में भी राजस्थान के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों मारवाड़ के तत्कालीन निवासियों में एक नवीन चेतना जाग्रत की जिसके परिणाम स्परूप वे उस राजनैतिक अस्थिरता और सामाजिक असुरक्षा के वातावरण में भी अपने जीवन का एक सहज मार्ग को खोज पाये हैं।[23]

दशनामी संन्यासियों ने मारवाड़वासियों के सामाजिक धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन को उत्साह व आशा की किरणों से फैलाकर आलोकित कर दिया और बहुत हद तक राजनैतिक उथल पुथल को सहजता से बर्दाश्त करते हुए उसे स्वाभाविक ढंग से अपनाने की क्षमता प्रदान की आम जनता ही नही शासकीय वर्ग जो राजैनतिक महत्वकांक्षा के प्रति अधिक जागरूक व सचेष्ट था वह भी धर्म से प्रभावित हुआ।[24]

निष्कर्षत : भारतवर्ष के सर्वाधिक सम्मानित धार्मिक संगठनों में से एक है तथा प्राचीनकाल से अघतन इस इस सम्प्रदाय ने पश्चिमी राजपूताना के आध्यात्मिक उत्थान और समाज में नैतिक मूल्यों की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *सरकार जदुनाथ ए हिस्ट्री ऑफ दशनामी 'नागा' संन्यासीज पंचायती अखाडा महा निर्वाणी, इलाहबाद 1950, पृ.सं. 50–62*
2. *वेंकटरमन आर. आदी शंकर : द आर्चिटेड ऑफ युनिफाईड इण्डिया, धर्म मार्ग (जुलाई सितम्बर 1988) पेज–5*
3. *राव पी. नागराज, शंकर द ग्रेड इण्डियन फिलोसिपर इन दा इण्डो–एशियन कल्चर वॉल्यम 16 नम्बर–1, जनवरी 1967 पेज 5–16*
4. *वही पेज–6*
5. *सरकार जदुनाथ, पूर्वोक्त पृ.स. 54*
6. *मनु स्मृति का छटा खण्ड के अनुसार*
7. *गोस्वामी प्रेमचन्द, गोस्वामी दर्शन, त्रैमासिक पत्रिका इलाहबाद 2001 पृ.स. 27*
8. *भारती श्याम सुन्दर श्री दशनाम दर्शन, जोधपुर 2011–12 पृ.स. 409*
9. *वही पृ.स. 409*
10. *ग्रास रॉबर्ट लिविस, साधु ऑफ इण्डिया, रावत पब्लिकेशन दिल्ली 1992 पेज–55*
11. *गोस्वामी श्री बी.पी. श्री दशनाम गोस्वामी समाज तमिलनाडु चैन्ने फरवरी 2001 पृ.स. 17–18*
12. *रॉस एच.ए.ए. ग्लोसरी ऑफ ट्राईबस एण्ड कास्टस इन नॉर्थ वेस्ट फ्रोंनटाइर प्रोविन वॉल्यम–3 अमन पब्लिकेशन नई दिल्ली 1980 पेज–354*
13. *काणे पी.वी. धर्मशास्त्र का इतिहास हिन्दी समिति सूचना विभाग उत्तर प्रदेश पृ.स. 495*
14. *वही पृ.स. 355*
15. *सरकार जदुनाथ, पूर्वोक्त पृ.स. 109*
16. *वही पृ.स. 109*
17. *क्लोस्टरमेयर कालु के.ए. सर्वे ऑफ हिन्दुजिम स्टेट युर्निवरसिटी ऑफ न्यूयार्क प्रेस अलबानी 1989 पेज–333*
18. *ibid, Page – 333*
19. *गुप्ता भगवानदास, बुंदेलखण्ड में गोसाईयों की परम्परा महेन्द्र कुमार अभिनंदन ग्रन्थ भोपाल 1993 पृ.स. 471*
20. *राजवी अमरसिंह, मध्यकालीन राजस्थान का इतिहास, राजस्थान ग्रन्थागार जोधपुर 1992 पृ.स. 638*
21. *किरन नारायण, संन्तस स्टॉरी टेलर्स एण्ड सैकेण्ड रीलस मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1992 पृ–69*
22. *राठौड़ डॉ. विक्रमसिंह मारवाड का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर 1999 पृ.स. 24*
23. *वही पृ.स. 40*
24. *वही पृ.स. 40*

सामुदायिक जल संरक्षण के समाजीकरण के विभिन्न पहलु (खमनोर पंचायत समिति का एक अध्ययन)

डॉ. तरूण दुबे
सहायक आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, भीम

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

धरती पर सुरक्षित और पीने के पानी के बहुत कम प्रतिशत के आंकलन के द्वारा, जल संरक्षण या जल बचाओ अभियान हम सभी के लिये बहुत जरूरी हो चुका है। औद्योगिक कचरे की वजह से रोजाना पानी के बड़े स्रोत प्रदूषित हो रहे हैं। जल को बचाने में अधिक कार्यक्षमता लाने के लिये सभी औद्योगिक बिल्डिंगें, अपार्टमेंटस्, स्कूल, अस्पतालों आदि में बिल्डरों के द्वारा उचित जल प्रबंधन व्यवस्था को बढ़ावा देना चाहिये। पीने के पानी या साधारण पानी की कमी के द्वारा होने वाली संभावित समस्या के बारे में आम लोगों को जानने के लिये जागरुकता कार्यक्रम चलाया जाना चाहिये। जल की बर्बादी के बारे में लोगों के व्यवहार को मिटाने के लिये इसकी त्वरित जरुरत है।जीवनशैली में बिना किसी बदलाव के पानी बचाने के कुछ बेहतरीन तरीकों को हमने आपसे साझा किये। घर का कोई सदस्य घरेलू कार्यो के लिये रोज लगभग 240 लीटर पानी खर्च करता है। एक चार सदस्यों वाला छोटा मूल परिवार औसतन 960 लीटर प्रतिदिन और 350400 लीटर प्रतिवर्ष खर्च करता है। रोजाना पूरे उपभोग का केवल 3ः जल ही पीने और भोजन पकाने के लिये उपयोग होता है बाकी का पानी दूसरे कार्यो जैसे पौधों को पानी देना, नहाना, कपड़े धोना आदि में इस्तेमाल होता है।

संकेताक्षर : *समुदाय, जल संरक्षण, समाजीकरण, व्यवहार, राजसमन्द।*

जल के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। जीवन की उत्पत्ति ही जल में हुई है। हर जीवन के सृजन में जल का विशेष योगदान है। प्राणियों में 65 प्रतिशत तथा पेड़-पौधों में 65 से 99 प्रतिशत तक जल अंश मिलता है। इससे जल की आवश्यकता और उपयोगिता सहज झलकती है। जल प्रकृति का ऐसा उपहार है, जिसका कोई दूसरा विकल्प नहीं है। जल का विविध उपयोग है और जल विकास की धुरी भी है।

भारत में पेय जल उपलब्धता तथा उपयुक्तता की दृष्टि से सीमित है। जल का वितरण तो बहुत ही असमान है, कहीं उसकी अधिकता है तो कहीं उसकी भारी कमी मिलती है। जल की गुणवत्ता में भी दिनों-दिन गिरावट आती जा रही है। यह अपने में बड़ी चिन्ता का विषय है। जल की मांग और आपूर्ति में समन्वय के साथ-साथ जल संसाधनों के स्त्रोतों के बीच ताल-मेल अनिवार्य है। अतः जल संसाधनों का संरक्षण आवश्यक है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. जल का उपयोग व अनुपयोग संबंधी सार्थक विश्लेषण
2. जल संसाधन संबंधी समस्याओं का आंकलन।

प्रक्कल्पनाएँ

1. जल संरक्षण के अभाव में अधिकांश जल संसाधन से जल व्यर्थ बह रहा है एवं उसका उचित उपयोग नहीं किया जा रहा है।
2. जल संसाधनों की उपेक्षा के कारण समुचित जल प्रबंधन नहीं हो पा रहा है।

निदर्शन

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि से राजस्थान के राजसमन्द जिले के खमनोर पंचायत समिति के नेगड़िया, धायला, बड़ा भाणुजा और साँयों का खेड़ा ग्रामों से उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। प्रत्येक ग्राम से 25 पुरूष एवं 25 महिलाओं का चयन किया गया है। 100 पुरूष एवं 100 महिलाओं का चयन से कुल 200

आंकड़ों का एकत्रण

जल संसाधन से संबंधित द्वितीय आंकड़ों का एकत्रण भू–संरक्षण विभाग, राजसमंद, स्थानीय संस्थाएं, ग्राम जल स्वास्थ्य एवं स्वच्छता समिति, जल उपयोगकर्ता एसोसिएशन, जल विकास समिति, ग्राम जलापूर्ति समिति, ग्राम विकास समिति, सरिता संस्थान, रूट्स संस्थान, रचना संस्थान एवं संबंधित अन्य विभागों से किया गया है। जल की कमी व जल की गुणवत्ता उपयोग से संबंधित प्राथमिक आंकड़े, अवलोकन, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार आदि विधियों के द्वारा प्राप्त किये गए है।

नलों से पानी टपकना

तालिका संख्या 02 के अनुसार नेगड़िया ग्राम से 50 उत्तरदाता (25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ), धायला ग्राम से 50 उत्तरदाता (25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ) एवं बड़ा भाणुजा ग्राम से 50 उत्तरदाता (25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ) तथा साँयों का खेड़ा ग्राम से 50 उत्तरदाता (25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ) खमनोर पंचायत समिति से कुल 200 उत्तरदाताओं से पूछे गए प्रश्न, नल से लिकेज या पानी टपकता रहता है? पर निम्नलिखित तथ्य संकलित हुए हैः–

नेगड़िया ग्राम से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 13 (52 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 4 (16 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 8 (32 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

नेगड़िया ग्राम से 25 महिला उत्तरदाताओं उत्तरदाताओं में से 5 (20 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 18 (72 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 2 (8 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

तालिका संख्या :– 01
नल से पानी टपकना, पाईप लीकेज

लीकेज	N = 200								
	नेगड़िया दत्र 50		धायला दत्र 50		बड़ा भाणुजा दत्र 50		साँयों का खेड़ा दत्र 50		कुल 200
	पुरूष दत्र 25	महिला दत्र 25	पुरूष दत्र 25	महिला दत्र 25	पुरूष दत्र 25	महिला दत्र 25	पुरूष दत्र 25	महिला दत्र 25	
अधिक पानी टपकना	13	5	16	7	20	16	13	8	98
	52%	20%	64%	28%	80%	64%	52%	32%	49%
कम पानी टपकना	4	18	4	11	1	5	10	9	62
	16%	72%	16%	44%	4%	20%	40%	36%	31%
पानी नहीं टपकना	8	2	5	7	4	4	2	8	40
	32%	8%	20%	28%	16%	16%	8%	32%	20%

धायला ग्राम से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 16 (64 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 4 (16 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 5 (20 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

धायला ग्राम से 25 महिला उत्तरदाताओं में से 7 (49 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 11 (44 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 7 (28 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

बड़ा भाणुजा ग्राम से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 20 (80 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 1 (4 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 4 (16 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

बड़ा भाणुजा ग्राम से 25 महिला उत्तरदाताओं में से 16 (64 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 5 (20 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 4 (16 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

साँयों का खेड़ा ग्राम से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 13 (52 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 10 (40 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 2 (8 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

साँयों का खेड़ा ग्राम से 25 महिला उत्तरदाताओं में से 8 (32 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 9 (36 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 8 (64 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

चार्ट संख्या :– 01
नल से पानी टपकना, पाईप लीकेज

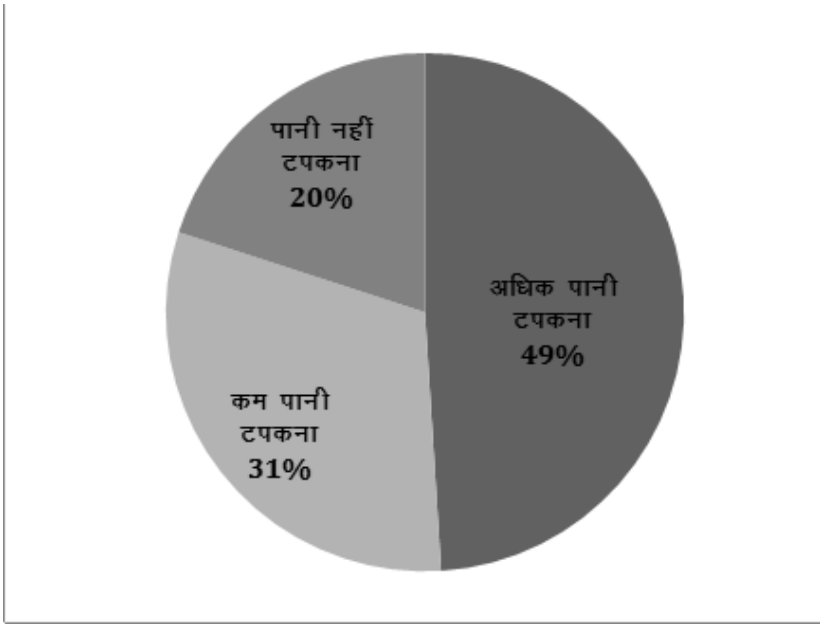

चार्ट संख्या 01 'नल से पानी टपकना, पाईप लीकेज' के अनुसार खमनोर पंचायत समिति से कुल 200 उत्तरदाताओं में से 98 (49 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 62 (31 प्रतिशत) के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 40 (20 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।

घर पर वर्षा जल संचयन

तालिका संख्या 02 के अनुसार नेगड़िया ग्राम से 50 उत्तरदाता (25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ), धायला ग्राम से 50 उत्तरदाता (25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ) एवं बड़ा भाणुजा ग्राम से 50 उत्तरदाता (25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ) तथा साँयों का खेड़ा ग्राम से 50 उत्तरदाता

(25 पुरूष एवं 25 महिलाएँ) खमनोर पंचायत समिति से कुल 200 उत्तरदाताओं से पूछे गए प्रश्न, आपके घर पर वर्षा जल संचय किया जाता है? पर निम्नलिखित तथ्य संकलित हुए हैः–

तालिका संख्या :– 02
घर पर वर्षा जल संचय

घर पर वर्षा जल संचयन	N= 200								
	नेगड़िया दत्र 50		धायला n= 50		बड़ा भाणुजा n= 50		साँयों का खेड़ा n= 50		कुल 200
	पुरूष n= 25	महिला n= 25	पुरूष n= 25	महिला n= 25	पुरूष n= 25	महिला n= 25	पुरूष n= 25	महिला n= 25	
हाँ	1	1	1	2	1	4	5	3	18
	4%	4%	4%	8%	4%	16%	20%	12%	9%
नहीं	5	8	11	2	4	3	1	5	39
	20%	32%	44%	8%	16%	12%	4%	20%	19.5%
पता नहीं	19	16	13	21	20	18	19	17	143
	76%	64%	52%	84%	80%	72%	76%	68%	71.5 %

नेगड़िया से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 1 (4 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 5 (25 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 19 (76 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

नेगड़िया से 25 महिला उत्तरदाताओं में से 1 (4 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 8 (32 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 16 (64 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

धायला से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 1 (4 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 11 (44 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 13 (52 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

धायला से 25 महिला उत्तरदाताओं में से 2 (8 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 2 (8 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 21 (84 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

बड़ा भाणुजा से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 1 (4 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 4 (16 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 20 (80 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

बड़ा भाणुजा से 25 महिला उत्तरदाताओं में से 4 (16 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 3 (12 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 18 (72 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

साँयों का खेड़ा से 25 पुरूष उत्तरदाताओं में से 5 (20 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 1 (4 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 19 (76 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

साँयों का खेड़ा से 25 महिला उत्तरदाताओं में से 3 (12 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 5 (20 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 17 (68 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

चार्ट संख्या :- 02
घर पर वर्षा जल संचयन

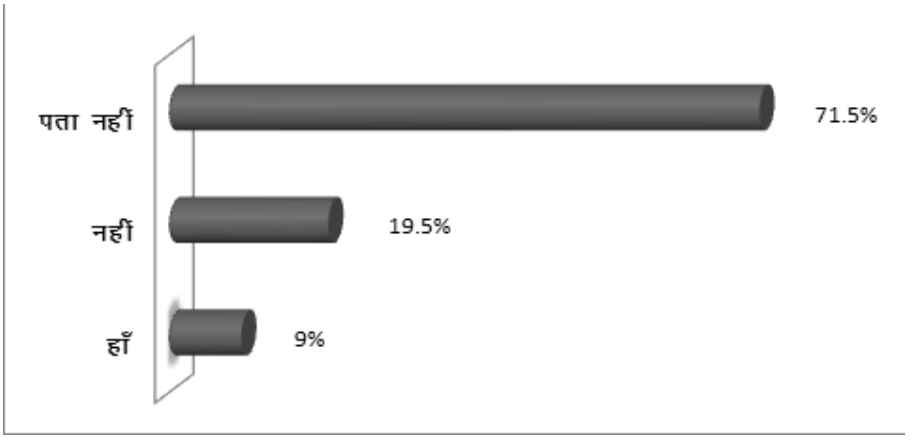

चार्ट संख्या 02 'घर पर वर्षा जल संचयन' के अनुसार खमनोर पंचायत समिति से कुल 200 उत्तरदाताओं में से 18 (9 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय करते है एवं 39 (19.5 प्रतिशत) वर्षा जल का संचय नहीं करते है और 144(71.5 प्रतिशत) उत्तरदाताओं पता नहीं जवाब दिया है।

निष्कर्ष

- खमनोर पंचायत समिति से कुल 200 उत्तरदाताओं में से 49 प्रतिशत के घरों पर नल से पानी अधिक टपकता है एवं 31 प्रतिशत के घरों पर नल से पानी कम टपकता है तथा 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं के घरों पर नल से पानी नहीं टपकता हैं।
- खमनोर पंचायत समिति से कुल 200 उत्तरदाताओं में से 9 प्रतिशत वर्षा जल का संचय करते है एवं 19.5 प्रतिशत वर्षा जल का संचय नहीं करते है।

सुझाव

- घर एवं सार्वजनिक स्थलों पर नल से पानी अधिक टपकने को रोकने हेतु जागरूकता प्रशिक्षण एवं यांत्रिक रूप से 'स्प्रींग टेप' (स्वतः बन्द होने वाले नल) प्रयोग में लाए जा सकते है।
- घरों पर वर्षा जल की संचय की तकनीक की जानकारी बढ़ाकर जल संरक्षण किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *Environment india (2005). Municipal Water Use, 2001 Statistics (PDF) Report.pp. 3.*
2. *Pimentel, Berger et al. (October 2004). "Water resources: agricultural and environmental issues". BioScience pp54*

वैश्विक परिदृश्य में मानवाधिकार

चन्द्रकला शर्मा
सहायक आचार्य, श्री कल्याण राजकीय कन्या महाविद्यालय, सीकर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

मानव अधिकार इतिहास की एक नई अवधारणा है। मानव अधिकार विश्व भर में मान्य व्यक्तियों के वे अधिकार है जो अनेक पूर्ण शारीरिक मानसिक व आध्यात्मिक विकास के लिये आवश्यक है। विश्व निकाय ने 1948 में मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा को अंगीकार किया, मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा के पश्चात् मानव अधिकारों की वृद्धि व पालन के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ ने अन्तर्राष्ट्रीय सिविल और राजनैतिक प्रसविदा ; अर्न्तराष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार प्रसविदा 1966 और अन्तर्राष्ट्रीय सिविल और राजनैतिक अधिकार पर प्रसविदा के वैकल्पिक प्रोटोकॉल को अंगीकार किया मानवाधिकार सभी अधिकारों का एक समूह है, जो हर व्यक्ति को उसके लिंग, जाति पंथ धर्म राष्ट्र, स्थान या आर्थिक पहलु की परवाह किये बिना समान रूप से दिये जाते है। इन्हें नैतिक सिद्धान्त, जन्म सिद्धान्त भी कहा जाता है। इन अधिकारों को कानून का संरक्षण प्राप्त होता है तथा यह हर समय लागु होते है। मानवाधिकार, मौलिक अधिकार है, जिसके सभी मानव प्राणी हकदार हो। मानवाधिकारों में सभी प्रकार के अधिकार जिनमें नागरिक और राजनैतिक, जीवन, अभिव्यक्ति का अधिकार भी शामिल है।

संकेताक्षर : *पेटिशन ऑफ राइट, अटलांटिक चार्टर, पेनसिलवेलिया, मेग्नाकार्टा, हाट लाईन।*

मानव अधिकार किसी भी मानव विशेष के अस्तित्व के लिये आवश्यक है। मानव अधिकार की अवधारणा एक सुसभ्य समाज की अवधारणा है। जिसमें किसी व्यक्ति या व्यक्ति समुदाय को अत्याचारों व यातनाओं से युक्त जीवन जीने का अधिकार है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज में रहकर ही अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और यह विकास तभी संभव है जब वह अपनी अन्तर्निहित शक्तियों का विकास कर सके। मानवाधिकार मनुष्य के चहुँमुखी विकास व आर्थिक–सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होते है। यह सभ्य जीवन का आधारभूत तथ्य तथा सर्वांगीण विकास के आधार स्तम्भ है। मानवाधिकारों को लोकतंत्र एवं लोककल्याणकारी राज्य के सिद्धान्त ने अति आवश्यक व महत्वपूर्ण बना दिया है। मानवाधिकारों के मध्य के कारण के इन्हें मूल अधिकार प्राकृतिक अधिकार आधारभूति अधिकारों का भी कहा जाता है।

मनुष्य योनि में जन्म लेने के साथ मिलने वाला प्रत्येक अधिकार मानवाधिकार की श्रेणी में आता है। संविधान में बनाये गए अधिकारों से बढ़कर मध्य मानवाधिकारों का माना जाता है। इसका कारण यह है कि ये ऐसे अधिकार है जो सीधे प्रकृति से सम्बन्ध रखते है। जैसे जीने का अधिकार केवल कानून सम्मत अधिकार नहीं है। बल्कि इसे प्रकृत्ति से प्रदान किया गया है। मानव अधिकारों में आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों के समक्ष समरसता का अधिकार एवं शिक्षा का अधिकार आदि नागरिक और राजनैतिक अधिकार भी सम्मिलित है।

मानवाधिकारों का ऐतिहासिक परिपेक्ष्य व मानवाधिकारों का अर्थ

मानवाधिकारों की अवधारणा एक ऐतिहासिक अवधारणा है। अशोक के आदेश पत्र आदि अनेकों प्राचीन दस्तावेजों एवं विभिन्न धार्मिक और दार्शनिक पुस्तकों में अनेक ऐसी अवधारणा है। जिन्हें मानवाधिकार के रूप में चिन्हित किया जा

सकता हैं। 'द् ट्वेल्व आर्टिकल्स ऑफ द ब्लैक फॉरेस्ट (1525) को यूरोप में मानवाधिकार का प्रथम दस्तावेज माना जाता है। 1628 में युनाइटेड किंगडम में पेटिशन ऑफ राइट्स में मानवीय अधिकारों का उल्लेख किया गया तथा वर्ष 1690 में जाने लॉक ने भी इन अधिकारों का अपनी पुस्तक ''स्टेट ऑफ नेचर में वर्णन किया गया। वर्ष 1776 ई. में संयुक्त राज्य अमेरिका की स्वतंत्रता के बाद इन अधिकारों को अमेरिकी संविधान में स्थान दिया गया। 1789 की फ्रांसिसी क्रांति के उपरांत फ्रांस में भी मानव तथा नागरिकों के इन अधिकारों को जगह दी गई।

सम्पूर्ण विश्व में मानवाधिकारों के मध्य का ध्यान में रखते हुये यू.एन.ओ. के चार्टर में कहा गया था कि लोग यह विश्वास करते है कि मानव गरिमा अधिकार और स्त्री-पुरूष के समान अधिकार आदि कुछ ऐसे मानवाधिकार है। जो कभी छिने नहीं जा सकते है, इस घोषणा के परिणामस्वरूप 10 दिसम्बर 1998 का मानवाधिकारों की घोषणा स्वीकार की गई।

मानव अधिकारों की अवधारणा एक ऐतिहासिक अवधारणा है। यह अवधारण 1215 का मेगनाकार्टा, 1628 का पेटिशन ऑफ राइट, 1689 का बिल ऑफ राइट्स, 1776 का अमेरिकी घोषणा पत्र, 1789 का फ्रांसीसी मानव और नागरिक अधिकार पत्र, 1950 मेरा राष्ट्र संघ की स्थापना, 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के रूप में देखने को मिलती है।

मानवाधिकार सभी अधिकारों का एक समूह है, जो हर व्यक्ति को उसके लिंग, जाति, पंथ, धर्म, राष्ट्र, स्थान या आर्थिक पहलु की परवाह किये बिना समान रूप से दिये जाते है। इन्हें नैतिक सिद्धान्त, जन्म सिद्धात भी कहा जाता है। इन अधिकारों को कानून का संरक्षण प्राप्त होता है तथा यह हर समय लागु होते है।

मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति का नैसर्गिक अधिकार है। इसके दायरे में जीवन, आजादी, बराबरी और सम्मान का अधिकार आता है। इसके अलावा गरिमामय जीवन जीने का अधिकार, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकार भी इसमें शामिल है।

हैराल्ड लास्की के अनुसार ''अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थिति है, जिसके बिना सामान्यतः कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकता।'' संयुक्त राष्ट्र की सार्वभौम घोषणा के अनुसार सभी मनुष्य समान अधिकार व स्वतंत्रता, जाति, रंग, भाषा, लिंग, धर्म, राजनीति या अन्य विचारधारा, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल सम्पत्ति जन्म या अन्य स्थितियों के किसी भेदभाव के बिना स्वतः ही मिल जाते है।

आर.जे.विन्सेन्ट के अनुसार ''मानव अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के कारण वास्तविक रूप से तथा प्रकृत्ति धरा प्रदत्त है। साथ ही अपील योग्य भी है।''

इस प्रकार मानव अधिकार मौलिक अधिकार है जिसके सभी मानव प्राणी हकदार है। मानवाधिकारों में सभी प्रकार के अधिकार जिनमें नागरिक और राजनैतिक, जीवन, अभिव्यक्ति का अधिकार शामिल है।

मानव अधिकारों की विशेषता

मेक्फारले ने अपनी पुस्तक 'द थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ ह्यूमन राइट्स'' में मानव अधिकारों की विशेषता बताई है।

मानव अधिकार के प्रकार है

1. जीवन का अधिकार
2. निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार
3. निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार
4. व्यक्तिगत सुरक्षा का अधिकार
5. सम्पति का अधिकार
6. शिक्षा का अधिकार
7. विवाह व परिवार का अधिकार
8. शांतिपूर्ण विधानसभा और संघ का अधिकार
9. संघ व सूचना का अधिकार
10. भाषण की स्वतंत्रता का अधिकार
11. विचारधारा की स्वतंत्रता
12. धर्म, आन्दोलन और अर्न्तआत्मा की स्वतंत्रता का अधिकार

विशेषता

(1) मानव अधिकारों का सार्वभौमिक कहा गया है, क्योंकि यह अधिकार सभी व्यक्तियों, सभी समयों पर तथा सभी स्थितियों में लागु होते है। इन अधिकारों की सर्वव्यापकता होने के कारण यह सभी व्यक्तियों को भाषा, लिंग, जाति, प्रजाति, मत मूल्य, सम्पत्ति, जन्म के भेदभाव के बिना प्राप्त होते है।

(2) मानव अधिकार सर्वोच्य अधिकार भी है। राज्य के द्वारा इन अधिकारों का अतिक्रमण नहीं किया जाता,

इन अधिकारों को संविधानिक व कानूनी संरक्षण भी प्राप्त है।

(3) मानव अधिकारों की अवधारणा व्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित होने के कारण यह व्यक्तिपरक है। व्यक्ति के सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के कारण इन अधिकारों की महता ओर भी बढ़ जाती है।

(4) मानवाधिकार एक गतिशील व परिवर्तनकारी अवधारणा है। यह समय ओर परिस्थिति के अनुसार स्वयं को परिवर्तित करती रहती हैं

(5) मानवाधिकार लोककल्याणकारी राज्य के लिये आवश्यक शर्त है। इस अवधारणा का स्वस्थ लोककल्याणकारी होता है। यह जनकल्याण के लिये कार्य करती है।

(6) मानव अधिकरों का राज्य द्वारा संरक्षण होता है। समाज के द्वारा रखी गई उचित मांगों को जब राज्य का वैधानिक संरक्षण मिल जाता है तो वह मांग अधिकार बन जाती हैं

(7) मानवाधिकार वे सामाजिक दावे है जो समाज में रहकर ही प्राप्त होते है। इन अधिकारों से सभी के हितों की पुष्टि होती है। यह अधिकार असीमित भी नहीं है। एक व्यक्ति के अधिकार दूसरे व्यक्ति के अधिकारों से असीमित हो जाते है। इन अधिकारों की प्राप्ति पर ही सामाजिक हित निर्भर करता है।

मानवाधिकारों के स्त्रोत

(1) धर्म – मानव अधिकार का यह स्त्रोत मानव अधिकार का ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व का सबसे प्राचीन स्त्रोत है। इसकी अनेकार्थकता को नामांकित नहीं किया जा सकता। मानव अधिकार के आधारभूत नियमों की उत्पति सभी प्रमुख धर्मों से हुई है।

(2) प्राकृतिक कानून – प्राकृतिक कानून के नियम सभी समाजों के लिये दूसरे प्राचीन व आधारभूत स्त्रोत है और मानव अधिकार भी इससे परे नहीं है। सभी सार्वभौतिक प्राकृतिक कानून मानव अधिकार के अन्तर्गत ही आते है।

(3) कानूनी निर्मात्री संस्थाएँ – वर्तमान में सभी कानून बनाने की संस्थाएँ जो व्यक्ति को जो अधिकार प्रदान करती है। वह सभी मानव अधिकार के मुख्य अंग हैं।

(4) नेतृत्व व विचारधारा – एक विशिष्ट समय में जो विचारधारा प्रचलित होती है, वह भी मानव अधिकार को परिभाषित करती है। इसी प्रकार विचारक, दार्शनिक, राजनीतिज्ञ तथा बुद्धिजीवी वर्ग भी इन्हें प्रभावित करते हैं।

(5) शासन व्यवस्था – मानवाधिकारों के क्षेत्र में सरकारी आदेश तथा प्रशासकीय प्रक्रिया भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अर्न्तराष्ट्रीय राजनीति में मानवाधिकार

मानवाधिकारो की संकल्पना का इतिहास पुराना है। यह अवधारणा प्राचीन काल के विचारकों की अनेकों अवधारणा में देखने को मिली, अमेरिकी व फ्रांसिसी क्रांतियों, वर्जिनियां बिल ऑफ राइट्स, पेनसिल वेलिया का संविधान आदि ने मानवाधिकारों व स्वतंत्रता पर बल दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ व राष्ट्र संघ ने भी मानवाधिकारों को विकास हेतु न्यायोचित बताया। मानवाधिर पद का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने 1941 में किया तत्पश्चात् अंटलांटिक चार्टर व सेनफ्रांसिसको सम्मेलन में इन पर चर्चा की गई। 1946 में रूजवेल्ट की अध्यसत्ता में मानवाधिकारों के प्रारूप की रचना करने हेतु एक समिति गठित की गई। इस समिति ने मानवाधिकारों की सार्वभौतिक व विश्वव्यापी घोषणा तैयारी की, जिसे संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 10 दिसम्बर 1948 को स्वीकृत किया तथा 1950 से 10 दिसम्बर को मानवाधिकार दिवस बनाने की घोषणा की।

मानवाधिकारो की सार्वभौमिक घोषणा

इस घोषणा पत्र में 30 अनुच्छेद है। इन्हें मानवता का 'मेग्नाकार्टा' कहा जाता है। इस घोषणा पत्र में अधिकारों का वर्गीकरण नागरीक अधिकार, सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक अधिकारों के रूप में जारी किया गया है। इन अधिकारों को तीन भागों में रखा गया –

प्रथम – धारा 1 व 2 में व्यक्ति के साथ भेदभाव को प्रतिबंधित किया गया।

द्वितीय – धारा 2 से 21 तक नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार से संबंधित है।

तृतीय – धारा 22 से 27 तक आर्थिक सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकारों के सम्बन्ध में प्रावधान है। इसमें व्यक्ति की सुरक्षा को प्रधानता दी है। अनु. 28 से 30 तक अनुच्छेद पृथक है।

अनुच्छेद – 1

इसमें कहा गया है कि सभी मानव प्राणी स्वतंत्र

उत्पन्न हुए है। अतः वे अधिकारों तथा महत्ता के क्षेत्र में समान हैं। उनमें विवेक तथा चेतना है। अतः उनको मातृत्व की भावना से कार्य करना चाहिये।

अनुच्छेद – 2

प्रत्येक व्यक्ति समस्त अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं को बिना किसी भेदभाव के प्राप्त करने का अधिकारी है।

अनुच्छेद – 3

जीवन तथा स्वतंत्रता का अधिकार।

अनुच्छेद – 4

दासता तथा दास व्यापार का निषेध।

अनुच्छेद – 5

अमानवीय व्यवहार तथा यातना का निषेध।

अनुच्छेद – 6

अप्रत्येक व्यक्ति को सर्वत्र विधि के समक्ष व्यक्ति के रूप में मानवता का अधिकार है।

अनुच्छेद – 7

सभी व्यक्ति विधि के समक्ष समान है और किसी विभद के बिना विधि के समान संरक्षण के हकदार है।

अनुच्छेद – 8

प्रत्येक व्यक्ति को संविधान या विधि द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों का अतिक्रमण करने वाले कार्यों के विरूद्ध समक्ष राष्ट्रीय अधिकरणों द्वारा प्रभावी उपचार का अधिकार है।

अनुच्छेद – 9

किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढ़ंग से गिरफ्तार, विरूद्ध या निर्वासित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद – 10

प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों और बाध्यताओं के और उसके विरूद्ध आपराधिक आरोप के अवधारणा में पूर्णतया समाज के रूप से स्वतंत्र और निष्पक्ष अधिकरण द्वारा सार्वजनिक सुनवाई का हकदार है।

अनुच्छेद – 11

(1) ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को जिस पर दण्डित अपराध का आरोप है। यह अधिकार है कि तब तक निरपराध माना जायेगा जब तक कि उसे लोक विचारण में जिसमें उसे अपने प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक सभी गारंटिया प्राप्त हो विधि के अनुसार दोष सिद्ध नहीं कर दिया जाता।

(2) किसी भी व्यक्ति को ऐसे कार्य या लोप के कारण जो किए जाने के समय राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अधीन दांडिक अपराध नहीं था। किसी दाण्डिक अपराध को दोषी निर्धारित नहीं किया जायेगा। उस शक्ति से अधिक शक्ति अधिरोपित नहीं की जायेगी, जो उस समय लागू थी जब अपराध किया गया था।

अनुच्छेद – 12

किसी भी व्यक्ति की एकांतता, कुटुम्ब धारा पत्र व्यवहार के साथ मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा और उसके सम्मान व ख्याति पर प्रहार नहीं किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे हस्तक्षेप या प्रहार के विरूद्ध विधि के सरंक्षण का अधिकार है।

अनुच्छेद – 13

(1) प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक राज्य की सीमाओं के भीतर संचरण और निवास की स्वतंत्रता का अधिकार है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश को या किसी भी देश को छोड़ने और अपने देश में वापस आने का अधिकार है।

अनुच्छेद – 14

विश्राम स्थल प्राप्त करने का अधिकार।

अनुच्छेद – 15

(1) प्रत्येक व्यक्ति को राष्ट्रीयता का अधिकार है।

(2) किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढ़ंग से न तो उसकी राष्ट्रीयता से और न राष्ट्रीयता परिवर्तित करने के अधिकार से वंचित किया जायेगा।

अनुच्छेद – 16

(1) वयस्क पुरूषों व स्त्रियों को मूल वंश, राष्ट्रीयता या धर्म के कारण किसी भी सीमा के बिना विवाह करने और कुटुंब स्थापित करने का पूर्ण अधिकार है। वे विवाह के विषय में, विवाहित जीवनकाल में और उसके विघटन पर समान अधिकारों के हकदार है।

(2) विवाह के इच्छुक पक्षकारों को स्वतंत्र और पूर्ण सम्मति से ही विवाह किया जायेगा।

(3) कुटुंब समाज की नैसर्गिक और प्राथमिक सामाजिक इकाई है और इसे समाज एवं राज्य द्वारा संरक्षण का हकदार है।

अनुच्छेद – 17

सम्पत्ति रखने का अधिकार।

अनुच्छेद – 18

विचार, अन्तरात्मा तथा धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार।

अनुच्छेद – 19

अभिव्यक्ति तथा सम्मति प्रकट करने का अधिकार।

अनुच्छेद – 20

शान्तिपूर्ण ढ़ंग से सभा व संघ बनाने का अधिकार।

अनुच्छेद – 21

(1) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की सरकार में सीधे या स्वतंत्रतापूर्वक चुने गये प्रतिनिधियों के माध्यम से भाग लेने का अधिकार है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को अपनी देश की लोक सेवा में समान पहुंच का अधिकार है।

अनुच्छेद – 22

सामाजिक सुरक्षा का अधिकार।

अनुच्छेद – 23

(1) प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का, नियोजन के स्वतंत्र चयन का, कार्य की न्यायोचित और अनुकूल दशाओं का एवं बेरोजगारी के विरूद्ध संरक्षण का अधिकार है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को किसी विभेद के बिना समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार है।

(3) प्रत्येक व्यक्ति को जो कार्य करता है ऐसे न्यायोचित और अनुकूल पारिश्रमिक का अधिकार है।

(4) प्रत्येक व्यक्ति को अपने हितों के संरक्षण के लिए ट्रेड यूनियन बनाने और उनमें सम्मिलित होने का अधिकार है।

अनुच्छेद – 24

प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम और अवकाश का अधिकार है, जिसके अंतर्गत कार्य के घंटों की युक्तियुक्त सीमा और समय–समय पर वेतन सहित अवकाश का भी प्रावधान है।

अनुच्छेद – 25

(1) प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे जीवन स्तर पर अधिकार है जो स्वयं उसके और उसके कुटुम्ब के स्वास्थ्य और कल्याण के लिए पर्याप्त है, जिसके अन्तर्गत भोजन, वस्त्र, मकान, चिकित्सा तथा आवश्यक सामाजिक सेवाएँ भी है। बेरोजगारी, रूग्णता, असक्तता, वैधव्य, वृद्धावस्था या उसके नियंत्रण के बाहर परिस्थितियों में जीवन यापन के अभाव की दशा में सुरक्षा का अधिकार है।

(2) मातृत्व और बाल्यकाल विशेष देखभाल और सहायता के हकदार हैं। सभी बच्चे चाहे उनका जन्म विवाहित या अविवाहित जीवनकाल में हुआ हो, समान सामाजिक सुरक्षा प्राप्त करेंगे।

अनुच्छेद – 26

शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है, कम से कम प्राथमिक और मौलिक स्तर पर शिक्षा निःशुल्क होगी।

अनुच्छेद – 27

विभिन्न कलाओं में आनंद लेने का अधिकार तथा वैज्ञानिक विज्ञापनों में भाग लेना आदि।

अनुच्छेद – 28

इस घोषणा पत्र में वर्णित अधिकारों व स्वतंत्रताओं को पूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सकता है।

अनुच्छेद – 29

इसमें उन दायित्वों का विवेचन किया गया है जिनका व्यक्ति को अपने समुदाय के प्रति निर्वाह करना है।

अनुच्छेद – 30

इसमें कहा गया है कि कोई भी राष्ट्र इन अधिकारों की विवेचना अपने दृष्टिकोण से नहीं करेगा, वरन् इसमें निहित अधिकारों को प्रदान करने के लिए कार्य करेगा।

इस प्रकार उपरोक्त घोषणा पत्र को सभी राष्ट्र व प्रत्येक व्यक्ति पूर्ण आत्मीय निष्ठा के साथ पालन करें तो भारतीय ''वसुधैव कुटुम्बकम'' की भावना सम्पूर्ण विश्व में साकार हो और व्याप्त वैमनस्य, रंगभेद, क्षेत्रवाद व आतंकवाद समूल नष्ट हो जाए और विश्व एक आदर्श समाज में तब्दील हो जायेगा।

संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त

20 दिसम्बर 1993 को महासभा द्वारा संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त का पद सभी व्यक्तियों को सिविल, राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकारों के प्रभावी उपभोग में अभिवृद्धि करने और उनका संरक्षण करने और उनका संरक्षण करने के लिए सृजित किया गया। सामान्यतः मानवाधिकारों के क्षेत्र में विशेषज्ञता तथा विभिन्न संस्कृत्तियों की समझ वाले

व्यक्ति को ही इस पद के योग्य माना जाता है ताकि मानवा अधिकारों के उपभोग में अभिवृद्धि के साथ–साथ वह सभी सदस्य राष्ट्रों में मानव अधिकार की जनचेतना के प्रसार में भी वृद्धि कर सके।

सितम्बर 1997 को संयुक्त राष्ट्र उच्चायुकत के कार्यालय और मानवाधिकार केन्द्र को सम्मिलित करके ''संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त'' की स्थापना की गई जो सीधे संयुक्त राष्ट्र महासचिव को मानवाधिकार संबंधी जानकारी एवं परामर्श प्रदान करता है।

मानव अधिकार 'हॉट लाइन'

संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त ने 1994 में मानव अधिकार हॉट लाइन की स्थापना की है जो मानवाधिकार संबंधी आकस्मिक संकटों की जानकारी प्राप्त करने और उनके संरक्षण के उपाय करने से संबंधित है।

मानवाधिकार परिषद्

15 मार्च 2006 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा संकल्प पारित कर मानव अधिकार परिषद् का गठन किया गया जो मानव अधिकार आयोग का स्थान ग्रहण करेगी और महासभा के सहायक अंग के रूप में कार्य करेगी। यह परिषद् मानवाधिकार संबंधी शिक्षा और जानकारी का प्रचार–प्रसार करने के साथ–साथ सलाहकारी सेवाएँ तथा तकनीकी सहयोग सदस्य राज्यों की सहमति से उपलब्ध कराएगी और मानवाधिकार के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय विधि के विकास के लिए महासभा को परामर्श देगी। इसका क्षेत्र व्यापक होगा, यह अंतर्राष्ट्रीय स्तर से लकर राष्ट्रीय मानव अधिकार संस्थाओं कौर क्षेत्रीय संगठनों के साथ निकट सहयोग से कार्य करेगी।

उपरोक्त संस्थाओं के साथ–साथ सुरक्षा परिषद्, मानवीय, सामाजिक एवं संस्कृत्ति पर आधारित महासभा की तृतीय समिति, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद्, महिलाओं की प्रस्थिति पर आयोग, यूनिसेफ, बाल अधिकारों पर समिति आदि अनेक इकाईयों और अधिनियमों के माध्यम से संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव अधिकार की जागरूकता, प्रसार एवं संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए जा रहे है।

निष्कर्ष

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यह निर्विवाद हो गया है। अंतर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा तभी तक बनी रह सकती है। जब तक व्यक्तियों की स्थिति में सुधार हो तथा उनके अधिकारों व स्वतंत्रता की रक्षा हो। इसलिये आवश्यक है कि मानवाधिकारों की रक्षा की जाये। मानवाधिकार सभी व्यक्तियों के लिये होते है। चाहे उनका मूल वंश, धर्म, लिंग तथा राष्ट्रीय कुछ भी हो। ये अधिकार सभी व्यक्तियों के लिये आवश्यक है। क्योंकि ये उनकी गरिमा व स्वतंत्रता के अनुरूप है तथा शारीरिक, भौतिक, नैतिक कलयाण के लिए सहायक है। मानव अधिकारों को समाज में व्यक्तियों के व्यक्तित्व के चहुमुँखी विकास के लिये आवश्यक होने के कारण निश्चित रूप से संरक्षित किया जाना चाहिये और सभी व्यक्तियों को उपलब्ध कराया जाना चाहिये। मानव जाति के लिये मानवाधिकारों का अत्यधिक महत्व होने के कारण मानव अधिकार को कभी–कभी मूल अधिकार भी कहा जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ. अग्रवाल, एच.ओ. – अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवं मानवाधिकार, सेन्टल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद 2010, पृ.सं. 634–635*
2. *राजकिशोर आज के प्रश्न – मानव अधिकारों का संघर्ष, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृष्ठ संख्या 52 से 58*
3. *डॉ. त्रिपाठी टी.पी. – मानव अधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि, इलाहाबाद लॉ एजेंसी पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 2004, पृष्ठ संख्या 111–117*
4. *मानव अधिकार : नई दिशाए वार्षिक अंक 4, 2007 प्रकाशक – राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग नई दिल्ली 110001, पृष्ठ संख्या 25, 28*
5. *पी.एस. बजवा : ''भारत में मानवाधिकार, क्रियान्वयन एवं उल्लंघन'', अनमोल पब्लिकेशन, नई दिल्ली – 2007, पृ.सं. 78, 80, 81*
6. *प्रांजल धर : ''मानवाधिकार और वर्तमान समय'' दिसम्बर 2006, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं. 12, 18, 25*
7. *रमेश प्रसाद गोत्तम एवं पृथ्वीपाल सिंह : भारत में मानवाधिकार, विश्वविद्यालय प्रकाश, सागर, 2001, पृ.सं. 45, 48*

प्राचीन जैन तीर्थ फलवर्द्धि पार्श्वनाथ, मेड़ता (ऐतिहासिक अध्ययन)

दिनेश गहलोत
शोधार्थी, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

जैन धर्म की उत्पति भारत में हुई थी। इस धर्म का मूल सिद्धांत शांति व अंहिसा है इस धर्म में 24 तीर्थकर हुए हैं उनमें 23 वें तीर्थकर भगवान पार्श्वनाथ थे। भगवान पार्श्वनाथ के बाद 24 वें व अंतिम तीर्थकर महावीर स्वामी हुए। भगवान पार्श्वनाथ बनारस के राजा अश्वसेन के पुत्र थे। ये अपने विवाह के पश्चात् 30 वर्ष की आयु में सन्यासी हो गए तथा इनकों 84 दिन के कठोर तप के बाद 'कैवल्य' प्राप्त हुआ। इन्होंने विश्व को चातुर्याम का मार्ग दिखाया। मारवाड़ या जोधपुर राज्य के मेड़ता परगने में भगवान पार्श्वनाथ का प्राचीन जैन मंदिर स्थित है। जैन साहित्य में इस तीर्थ को 'फलौदी–पार्श्वनाथ' या 'फलवर्द्धि–पार्श्वनाथ' तीर्थ के नाम से जाना जाता है। लोक साहित्य में इस तीर्थ के बारे में अनेक किवदन्तियां प्रचलित है। मध्यकाल में शहाबुद्दीन मोहम्मद गौरी ने इस मंदिर की मूल प्रतिमा को भंग किया था। श्री जिन प्रभसूरि ने अपने ग्रंथ 'श्री फलवर्धीकल्प' में बताया है कि 68 तीर्थों की यात्रा करने से जो फल मिलता है वह 'फलौदी पार्श्वनाथ' की यात्रा करने से प्राप्त होता है। अतः फलौदी पार्श्वनाथ जोधपुर राज्य का ही नहीं सम्पूर्ण भारत का प्राचीन जैन तीर्थ है जो हमें अंहिसा, ज्ञान, करूणा व प्रेम इत्यादि का मार्ग दिखलाता है।

संकेताक्षर : *तीर्थकर, पार्श्वनाथ, महावीर स्वामी, चातुर्याम, श्रावक, फलौदी, मेड़ता, जोधपुर, नागौर।*

जैन धार्मिक विचारधारा के अनुसार जैन धर्म में चौबीस तीर्थकर हुए हैं। जैन धर्म के संस्थापक एवं जितेन्द्रिय तथा ज्ञान प्राप्त महात्माओं की उपाधि ही तीर्थकर होती है। इस शब्द की उत्पति 'तीर्थ' शब्द से हुई है जिसका अर्थ है : वह निमित्त जो मनुष्य को भव–सागर से पार उतारती है। ऋषभदेव इनके सबसे पहले तीर्थकर थे। ऋग्वेद में 'ऋषभ' और 'अरिष्ठनेमी' नामक दो तीर्थकरों के नाम का उल्लेख प्राप्त होता है, परन्तु 23 वें तीर्थकर पार्श्वनाथ से पहले के 21 तीर्थकरों के बारे में कोई विशेष ऐतिहासिक प्रमाण प्राप्त नहीं होते है। जैन साहित्य के अनुसार जैन धर्म के 24 तीर्थकरों के नाम निम्नांकित है–

(1) ऋषभदेव	(2) अजीतनाथ	(3) सम्भवनाथ	(4) अभिनन्दन
(5) सुमतिनाथ	(6) पद्मप्रभु	(7) सुपार्श्वनाथ	(8) चन्द्रप्रभु
(9) सुविधि या पुष्यदन्त	(10) शीतलनाथ	(11) श्रेयांसनाथ	(12) वासुपूज्य
(13) विमलनाथ	(14) अनन्तनाथ	(15) धर्मनाथ	(16) शांतिनाथ
(17) कुंथनाथ	(18) अरहनाथ	(19) मल्लिनाथ	(20) मुनिसुव्रतनाथ
(21) नेमिनाथ	(22) अरिष्टनेमि	(23) पार्श्वनाथ	(24) वर्धमान महावीर।

जैन धर्म के 23 वें तीर्थकर पार्श्वनाथ थे। पार्श्वनाथ बनारस के राजा अश्वसेन के पुत्र थे। इनकी माता का नाम वामा था। ये क्षत्रिय थे।[1] युवावस्था में इनका विवाह कुशस्थल देश के राजा नरवर्मन की सुपुत्री प्रभावती से हुआ था।[2] 30 वर्ष की आयु तक इन्होंने राजकीय वैभव से जीवन व्यतीत किया। इन्हें सभी प्रकार के सुख और सुविधाएँ प्राप्त थी।

परन्तु इनमें निवृति की भावना का उदय हुआ और वे 30 वर्ष की आयु में सन्यासी हो गये। 84 दिन के कठोर तप के बाद इन्हें 'समवेत पर्वत' पर 'कैवल्य' (ज्ञान) प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् इन्होंने 70 वर्ष तक एक स्थान से दूसरे स्थान तक विभिन्न राज्यों का भ्रमण करते हुए उपदेश दिये। इस दौरान उन्होंने राजगृह, साकेत, कौशाम्बी, हस्तिनापुर, श्रावस्ती आदि नगरों का भ्रमण किया। 100 वर्ष की आयु में उनका देहावसान समवेत पर्वत पर हुआ जो आजकल बिहार में स्थित है। इसे 'पार्श्वनाथ की पहाड़ी' भी कहते है।[3] उन्होंने कठोर तपस्या, इन्द्रिय नियत्रंण तथा काया कष्ट को मोक्ष प्राप्ति के साधन बताया। उन्होंने अहिंसा पर विशेष बल दिया। उन्होंने चार उपदेशों (चातुर्याम) की व्यवस्था की थी–[4]

(1) अहिंसा – मैं जीवित प्राणियों की हिंसा नहीं करूँगा।

(2) सत्य – मैं सदा सत्य बोलूँगा।

(3) अस्तेय – मैं किसी भी प्रकार की चोरी नहीं करूँगा।

(4) अपरिग्रह – मैं कोई सम्पति या धन नहीं रखूँगा।

उन्होंने अपने सिद्धांतों और उपदेशों के प्रचार हेतु चार गणों या संघों का संगठन भी किया। इनके सिद्धांतों को चार व्रत (चतुर्व्रत) भी कहते है। पार्श्वनाथ के अनुयायी निर्ग्रन्थ कहलाते थे क्योंकि वे सांसारिक ग्रन्थियों से मुक्त समझे जाते थे। इनमें स्त्री और पुरूष दोनों सम्मिलित थे।

राजस्थान में जैन धर्म के प्रसार का सर्वाधिक ठोस प्रमाण ईसा पूर्व पंचमी शताब्दी का बड़ली–शिलालेख माना जाता है। जिसमें वीर निर्वाण संवत् के 84 वें वर्ष तथा माझमिका का उल्लेख है। माझमिका की पहचान चित्तौड़ के निकट स्थित 'नगरी' से की जाती है। पतंजलि के महाभाष्य में उल्लेखित माध्यमिका ही बड़ली –लेख की माझमिका है। माध्यमिका जैन धर्म का प्राचीन केन्द्र रही है।[5] जोधपुर राज्य में या मारवाड़ के क्षेत्र में फलौदी नाम के दो स्थान है। एक फलौदी मेड़ता क्षेत्र में मेड़ता रोड़ स्टेशन से एक मील की दूरी पर बसा हुआ है, जहाँ पार्श्वनाथ का पुराना मंदिर है। इस कारण इसको 'पार्श्वनाथ की फलौदी' कहते हैं। दूसरा स्थान वर्तमान में इस नाम की तहसील का मुख्यालय है और जो पोकरण के निकट है। इस कारण इसको पोकरण–फलौदी कहा जाता है।[6]

श्री जगदीश सिंह गहलोत के अनुसार–''ब्रह्माणी माता के मंदिर और रेल्वे स्टेशन (मेड़ता रोड़) के बीच में पारसनाथ जी का बड़ा मन्दिर जैनियों का है जिसका शिखर 4 मील से दिखाई देता है। यहां हर वर्ष आश्विन वदि 10 को बड़ा मेला भरता है जो 6–7 दिन तक रहता है इसमें जैनयात्री दूर–दूर से आते हैं इस मन्दिर की पूजा ब्रह्माणी माता के मन्दिर के पुजारी करते हैं जो सेवग जाति के है और अपने को शाकद्वीपीय ब्राह्मण होना बताते है।''[7]

मुंहता नैणसी ने 'मारवाड़ रा परगनां री विगत' भाग–2 में 'बात परगने मेड़ते री' में बताया है कि 'श्री फलोदी पारसनाथजी रौ देहूरौ संमत 1191 जारौड़ै साह श्रीमल करायौ तठा पछै संमत 1555 सु राणे हेमराज देवराज रै बैटै उधुर करायौ अर्थात् श्री फलौदी पार्श्वनाथ जी का देवालय (मंदिर) वि.सं. 1191 में जारोड़े के शाह श्रीमल ने करवाया था, उसके बाद वि. सं. 1555 से राणा हेमराज के बेटे ने मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया था।[8]

ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक नगर मेड़ता में पुरातात्विक महत्व के अनेक हिंदू एवं जैन मंदिर तथा मूर्तिया स्थित है किंतु जैन संस्कृति का केन्द्र भगवान पार्श्वनाथ जी का मंदिर अपनी प्राचीनता और भव्यता के कारण सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है मूर्ति स्तम्भ लेखों से यह ज्ञात होता है कि यहां अनेक आचार्यों, मुनियों एवं भट्टारकों का उनके संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

फलवर्द्धिका, फलौदी और फलौदी–पार्श्वनाथ नाम से जाना जाने वाला क्षेत्र मेड़ता रेलवे स्टेशन से लगभग 1 मील दूरी पर स्थित प्राचीन जैन स्थल है। यह मेड़ता शहर से लगभग 15 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहां पर 12 वी शती से है। पूर्व का जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ का प्राचीन मंदिर है। इस स्थान का नामोउल्लेख विभिन्न जैन ग्रंथों में मिलता है इन ग्रंथों में इस स्थान के बारे मे विभिन्न ऐतिहासिक कहानियां हमें ज्ञात होती है। श्री जिनप्रभसूरि रचित ग्रंथ 'विविध तीर्थ कल्प' में यहां की कहानी का वर्णन इस प्रकार हुआ है–

'विक्रम संवत् 1174 में चौरासी वाद–विजेता श्री वादिदेव सूरि हुए। एक बार आचार्य महाराज भत्यजनों को पावन करते हुए मेड़ता चातुर्मास रहे। श्रावक लोगों ने धर्म कृत्यों से अपना जीवन सफल किया। चातुर्मास पूर्णकर आचार्य महाराज मासकल्प करने के लिए फलवर्द्धिपुर पधारे वहां पारस श्रावक बड़ा श्रद्धालु था,

वह प्रतिदिन पवित्रता से जिनेश्वर देव की त्रिकाल पूजा किया करता था। वह निर्धन था। एक बार उसने जंगल में अम्लान पुष्पों से मण्डित एक ढेर देखा और आश्चर्यपूर्वक गुरू महाराज से निवेदन किया। आचार्य महाराज ने देख कर कहा इस स्थान में जिन प्रतिमा होनी चाहिए। उस भूमि का उत्खनन किया गया तब वहा पुष्पोदय से विकसित कमल जैसी पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा प्रगट हुई। सेठ ने उसे उत्सवपूर्वक ले जाकर घास के झोपड़े में विराजमान किया और पूजा करने लगा। रात्रि के समय अधिष्ठायकदेव ने स्वप्न में कहा–भगवान का प्रासाद बनवाओ। सेठ ने कहा–द्रव्य के बिना कैसे जिनालय बने? अधिष्ठाता ने कहा भगवान के समक्ष लोगों द्वारा चढाए हुए सभी चावल प्रातः काल प्रतिदिन सोने के हो जाएंगे। इस प्रकार जिनालय के लिए द्रव्य की प्राप्ति हो जायेगी। अतः दूसरे दिन सेठ ने देखा जैसा भगवान ने स्वप्न में बताया वैसा ही हो रहा है अतः सेठ के पास बहुत धन इकठ्ठा हो गया तथा उसने बड़े समारोहपूर्वक सं. 1204 में श्री देव सूरि के पट्टधर मुनि चन्द्रसूरी से बिम्ब व चैत्य की प्रतिष्ठा सम्पन्न करवाई। यह गगनस्पर्शी चैत्य अनुक्रम से फलवर्द्धि तीर्थ नाथ से प्रख्यात हुआ।'[9]

इसी प्रकार की अन्य कहानियां हमें मिलती है जिसका शीर्षक 'श्री फलवर्द्धिपार्श्वनाथ' कल्प है। इसमें लिखा है सवालक्ष देश में मेड़ता नगर के समीप वीर भवनादि नानाविध देवालयों से सुन्दर फलवर्द्धि नामक ग्राम है वहां फलवर्द्धि नामक देवी का भवन उत्तुंग शिखर वाला हैं।[10]

पार्श्वनाथ की चमत्कारी मूर्ति के प्रभाव के कारण फलौदी कालक्रम में जैन तीर्थ बन गया। यह राजस्थान के मध्यकालीन सर्वाधिक लोकप्रिय तीर्थों में से एक था।[11] इस तीर्थ के संबंध में स्वतंत्र स्तवन एवं तीर्थ मालाएं भी समय–समय पर रची गई। पूर्व में यह मंदिर गांव के बाहर स्थित था लेकिन वर्तमान में इस मंदिर के चारों ओर बस्ती बस गई है। पार्श्वनाथ का मंदिर ग्राम के पश्चिम में है। आश्विन मास में यहां प्रतिवर्ष बड़ा मेला लगता है, जिसमें दूर–दूर के लोग आकर सम्मिलित होते हैं। मंदिर के सामने दोनों तरफ एक–एक संगमरमर की शिला लगी है, जिस पर लेख खुदे हैं एक लेख विक्रम संवत् 1221 मार्गशीर्ष सुदी 6 (21 नवंबर 1164 ईस्वी) का है, जिसमें पार्श्वनाथ के मंदिर के लिये पोरवाड़ रूपमुनि एवं भंडारी दसाढा आदि की दी हुई भेंटों का उल्लेख है। दूसरे लेख में संवत् नहीं है। इसमें सेठ मुनिचन्द्र द्वारा उतानपढ़ बनाये जाने का उल्लेख है।[12] फलौदी पार्श्वनाथ का मंदिर इस क्षेत्र का बहुत ही प्रसिद्ध जिनालय था जिसके शिखर की प्रतिष्ठा विक्रम संवत् 1181 (1124 ईस्वी) में धर्मघोष सूरि ने की थी और इसका जीर्णोद्धार विक्रम संवत् 1234 (1178 ईस्वी) में जिनपति सूरि द्वारा करवाया गया था।

राजस्थान के ऐतिहासिक शोध लेख, लेखक रामवल्लभ सोमानी ने शीर्षक, 'फलोदी पार्श्वनाथ मंदिर पर मोहम्मद गौरी का आक्रमण' में बताया है कि 'मेड़ता रोड़ पर पार्श्वनाथ का प्रसिद्ध मंदिर है। जो फलोदी पार्श्वनाथ के नाम से प्रसिद्ध है तथा शहाबुद्दीन गौरी ने इस मन्दिर में विराजमान मूलनायब प्रतिमा को भंग किया'।[13] इस घटना का उल्लेख हमें श्री जिनप्रभूसरि रचित 'विविध तीर्थ कल्प' में भी मिलता है कि फलवर्द्धिक तीर्थ को 12 वीं शती ई. के अंत में लगभग शहाबुद्दीन गौरी द्वारा उक्त तीर्थ को भंग किया गया।[14]

'भारत के प्राचीन जैन तीर्थ' नामक ग्रंथ में लिखा हुआ मिलता है कि – ''जोधपुर से मेड़ता रोड़ लाइन पर मेड़ता रोड़ जंक्शन के पास फलोदी नाम का तीर्थ है। इस तीर्थ की कथा उपदेशसप्ततिका में आती है यहां आचार्य देवसूरि का आगमन हुआ था। यहां पार्श्वनाथ की अढ़ाई हाथ लम्बी मूर्ति है।''[15]

चित्र संख्या : 1 श्री फलवर्द्धि पार्श्वनाथ मेड़ता रोड़

जैन स्त्रोत 'तीर्थ माला चैत्यवुंदन' में इस पार्श्वनाथ जैन मंदिर के बारे में लिखा है – ''जीरापल्लिफलवर्द्धि पारक नगे शैरीस शंखेश्वरे।''[16]

श्री जिन प्रभसूरि रचित 'श्री फलवर्धीकल्प' में लिखा है

कि 68 तीर्थों की यात्रा करने से जो फल मिलता है वह फलवर्द्धि पार्श्वनाथ की यात्रा करने से प्राप्त होता है।[17] यह 68 तीर्थ कौनसे है इसके बारे में मासिक कल्याण पत्र वर्ष 14 अंक, 1 फागण 2016, के पृष्ठ–7, में श्रीमद् विजयलब्धि सूरीश्वर जी महाराज ने इन तीर्थों के नाम निम्न बताए है–

पवित्र जैन तीर्थ स्थल

1 शत्रुंजय	2 गिरनार
3 आबूजी	4 अष्टापद
5 सम्मेत–शिखर	6 मडपाचल
7 चडपाचल	8 अयोध्या
9 कली–कुंड	10 नाकोड़ा
11 जीरावला	12 वाराणसी
13 गोडी	14 नवपल्लव
15 चिंतामणी	16 द्राविड तीर्थ
17 मुनीसुव्रत	18 भाभा तीर्थ
19 सांचौरी	20 महावीर
21 महुरी तीर्थ	22 शेरीसा
23 रावण तीर्थ	24 अज्जारा
25 वालेजा तीर्थ	26 माला तीर्थ
27 प्रतिष्ठानपुर	28 अतरिक्षजी
29 कुलपाक जी	30 शुलाहारो
31 उखखडीया	32 क्षत्रीकुंड
33 शंखेश्वरजी	34 लोडण
35 भटेवा	36 सहस्रफूणा
37 वरकाणा	38 वामनवाड़जी
39 पचासरा	40 घृतकल्लोल
41 अवती	42 थभण
43 नवखडा	44 सप्तफणा
45 आशापुरी	46 केरड़ा
47 कोशवी	48 कोसलपुर
49 मक्षीजी	50 काकदी
51 भद्रपुरी	52 सिंहपुरी
53 कपीलपुरी	54 रत्नपुरी
55 मथुरापुरी	56 राजग्रही
57 शोरीपुरी	58 हस्तीनागपुर
59 तलाजा	60 कदबगिरी
61 बगड़ी	62 बडनगर
63 धुलेवा	64 लोहीया
65 बाहुबलीजी	66 महुदेवा
67 पुंडरीक	68 गौतम तीर्थ।

फलवर्द्धि पार्श्वनाथ एक प्राचीन एवं ऐतिहासिक तीर्थ है जो प्रतिमा इस मंदिर में विराजमान है उसके लिए 'श्री फलोदी पार्श्वनाथ कल्प' जो वि. सं. 1389 में जिनप्रभुसुरि जी ने बनाया उसमें लिखा है कि 'श्री फलोदी चैत्य में विराजमान पार्श्वनाथ भगवान को नमस्कार करके मैं यह कल्प लिख रहा हूं। सवा लाख देश में मेड़ता नगरी के समीप में वीर मंदिर वगैरह अनेक छोटे मोटे देवालयों में शोभित फलोदी नाम का नगर हैं वहाँ पर फलवर्धी नाम की देवी का ऊँचा शिखर वाला मंदिर है।[18]

जैन मुनि ज्ञान सुन्दरजी ने करीब 325 ग्रंथ लिखे हैं जिसमें, भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास भाग–1 व 2 हमें प्राप्त होती है इस ग्रंथ में कुल पृष्ठ 1600 हैं[19] तथा इससे हमें फलोदी पार्श्वनाथ के बारे में अनेकों तथ्य प्राप्त होते है।[20] जैनधर्म में सबसे ऊँचा पद तीर्थंकर का हैं। जैन ग्रंथों में कहा गया है कि जहां कोई सिद्ध नहीं हुए हो परन्तु वहां की मूर्ति चमत्कारी होती है शंखेश्वर, नाकोड़ा, फलौदी आदि चमत्कारिक मूर्तियां होने से तीर्थ रूप में प्रसिद्ध है।

मारवाड़ के शासन प्रबंध में जैन धर्म के व्यक्तियों का महत्वपूर्ण स्थान था। अतः जैन धर्म बहुत पल्लवित हुआ। भण्डारी, सिघंवी, मुंहणोत आदि जैन धर्म के व्यक्तियों ने मारवाड़ राज्य की महती सेवा की। जैन धर्म के विद्वानों ने अनेकानेक मौलिक ग्रंथों की रचना कर जैन साहित्य को समृद्ध बनाया तथा समाज को धर्म, ज्ञान, अहिंसा, करूणा, प्रेम इत्यादि का संदेश दिया।[21]

जैन तीर्थंकरों में पार्श्वनाथ प्रायः सर्वाधिक लोकप्रिय रहे हैं। भारतवर्ष के विभिन्न भागों में जितने मंदिर, मूर्तियां और तीर्थ स्थान इनके नाम से सम्बद्ध पाये जाते हैं, उतने शायद किसी अन्य तीर्थंकर हो। गजपुर नरेश स्वयंभू, कुशस्थलपुर का राजा रविकीर्ति, तेरापुर का स्वमी करकण्ड आदि कई भूपति इनके परम परम भक्त और अनुयायी थे। नाग, यक्ष, असुर आदि अनार्य देशी

जातियों में, जिनका ब्राह्मणीय साहित्य में व्रात्य क्षत्रिय के रूप में बहुधा उल्लेख हुआ है, तीर्थंकर पार्श्वनाथ का प्रभाव विशेष रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 (i). जैन, बलभद्र ; जैन धर्म का प्राचीन इतिहास भाग–1, पृ. 361

(ii). गौड़, तेजसिंह ; जैन धर्म का संक्षिप्त इतिहास, भाग–1, पृ. 150

2. (i). जैन बलभद्र ; वही, पृ. 361

(ii). गौड़, तेजसिंह ; वही, पृ. 153

3. (i). जैन बलभद्र ; वही, पृ. 363

(ii). गौड़, तेजसिंह ; वही, पृ. 163

4. (i). जैन बलभद्र ; वही, पृ. 358

(ii). गौड़, तेजसिंह ; वही, पृ. 361

5. भानावत, नरेन्द्र (संपादक) ; जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ. 126

6. पुष्करणा, महेश ; पुष्करणा संदेश फलौदी विशेषांक, पृ. 41

7. गहलोत, जगदीशसिंह ; मारवाड़ राज्य का इतिहास, पृ. 239

8. नैणसी, मुंहता ; मारवाड़ रा परगनां री विगत, भाग–2, पृ. 39

9. जिनप्रभसूरि ; विविध तीर्थ–कल्प, पृ. 241–42

10. वही, पृ. 241–42

11. जैन, कैलाशचन्द्र ; एंश्येन्ट सिटीज एंड टाउन्स ऑफ राजस्थान, पृ. 426

12. ओझा, गौरीशंकर हीराचंद ; जोधपुर राज्य का इतिहास, भाग–प्रथम, पृ. 37

13. सोमानी, रामवल्लभ ; राजस्थान के ऐतिहासिक शोध लेख, पृ. 200–202

14. जिनप्रभसूरि, उपरोक्त, पृ. 22

15. भारत के प्राचीन जैन तीर्थ, पृ. 55

16. माथुर विजयेन्द्र कुमार ; ऐतिहासिक स्थानावली, पृ. 597

17. जैन, मिश्रीमल (संपादक) ; श्री कापरड़ा स्वर्ण जयन्ती महोत्सव प्रथम, पृ. 17

18. वही, पृ. 17

19. महेश ; वही, पृ. 27

20. जैन, मिश्रीमल ; वही, पृ. 55

21. शर्मा, गोपीनाथ ; राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, पृ. 103

ISSN 2277-5587

कमलेश्वर के साहित्य में भोगवादी पारिवारिक संस्कृति

डॉ. धनेश कुमार मीणा
सहायक आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, राजगढ़ (चुरू)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

समाज एक परिवार, समूह, समिति, समाज एवं राष्ट्र से जुड़ा है। समाज का स्वरूप अमूल है। समाज का अस्तित्व व्यक्तियों से और व्यक्तियों का अस्तित्व समाज से है। समाज में रहते हुए सामाजिक संबंधों को निभाना पड़ता है। शादी के बाद अन्य परिवार बनता है। समाज में रहते हुए व्यक्ति को अधिकार, सुरक्षा, प्रेम-भाव आदि मिलते है। समाज में रहकर ही व्यक्ति का विकास संभव है। पुरूष-स्त्री के मध्य एक सहज व मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध है। हमारा समाज प्राचीन काल से इसके लिए विवाह बंधन को मानता रहा। विवाह से पहले स्त्री-पुरूष को आपस में बोलना पाप माना जाता था भोगवादी प्रकृति को समाप्त करने के लिए समाज ने विवाह की व्यवस्था की हैं-''परिवार प्रथा ने यौन भावना की विधि, व्यवहार, संस्कार, परंपरा और भौतिकता के बंधन लगातार संयमित और मर्यादित कर दिया, जिससे उद्यम कामवासना का वंश प्रवतिन की अभिलाषा में शिष्ट रूपातंर हो गया था।"[1]

संकेताक्षर : *भोगवादी प्रकृति, सतुंष्टि, स्पष्टीकरण, अनुच्छेद, पितृसत्तात्मक, मौलिक अधिकार।*

उन्मुक्ता के कारण पुरूष ने दो-तीन सबंध बनाए। स्त्री पुरूषों से मौज-मेला कर रही। प्राचीन समय पुरूष अपने काम की सतुंष्टि करने के लिए अवैध सबंध बनाता। विवाह एक धार्मिक दृष्टि न होकर स्त्री-पुरूष का अनिवार्य साधन हैं। भोग की वस्तु बना दियां। ''आज प्रेम न रहस्य और न नियति। यह तो केवल आवरण मूलक रह गया है। जिसका अर्थ संभोग जिसकी पूर्ति के बाद आकर्षण तो स्थाई रखना अर्थात् उसका निर्वाह करना रोमांच मात्र है।"[2]

'अधूरी कहानी, में कमलेश्वर ने प्रेम में भोगवान की संज्ञा ली है। विमल तथा सुधा एक-दूसरे से प्रेम करते है। मित्रता की सीमा पार एक-दूसरे में अपने को समर्पित कर चुके है। इसका स्पष्टीकरण सुधा ने करवाया है ''विमल और मेरी शादी की चर्चा तुम क्यों करते हो ? मेरे पास किसी को देने के लिए अब शेष ही क्या है।? शादी यदि शरीर का व्यापार मात्र है तो उस संबंध में मैं कुछ नहीं कहना चाहतीं। किंतु इसका संबंध यदि हदय, प्रेम, स्नेह और सहयोग की भावना से भी है तो तुम इतना क्यों नहीं समझते कि अब किसी अन्य पुरूष को ये सब देने की स्थिति में नहीं हूं।''[3]

भारत में आज स्त्रियों को हर कार्य में समान दर्जा व अपने कार्य को पूर्ण करने के लिए अनेक अधिकार सुनिश्चित किए है। संविधान के अनुच्छेद (14-18) में समानता के अधिकार का जिक्र किया गया है। इसमें स्त्रियों व पुरूषों के लिंग मतभेद को समाप्त कर दिया गया है। आज समाज में पिता की दी हुई सीख कायम है। पितृसत्तात्मक का अर्थ है पुरूष प्रधान राज्य। इसी कारण आज भी स्त्रियों पर पुरूषों का अधिकार ज्यादा है। पुरूष प्रधान देश में स्त्रियां आज भी शोषण का शिकार होती है। कानून में स्त्रियों का समान अधिकार होने के बाद भी स्त्रियों को अन्याय सहना पड़ता है। पुरूष प्रधान के विषय में अगर विस्तार से पढ़ा जाए तो आज पितृसत्ता शक्ति के उन रिश्तों को दर्शाती है जिसके माध्यम से पुरूषों का स्त्री पर वर्चस्व स्थापित होता है।[4]

प्रेम को भुलाना स्त्री-पुरूष के लिए मुश्किल हो जाता है। जिससे विवाह से पहले करती है। 'अधूरी कहानी, में सुधा विवाह के बाद दुखी होकर कहती है "आखिर तुम्हें हो क्या गया हैं ? मैं तो किसी परिवर्तन का अनुभव नहीं करती... तुम जैसा कहोगे, मैं वही करूगीं...लेकिन तुम खुश तो रहो।"[5]

कुछ नारियां तो अपनी अर्थिक मजबूरी तथा दिलचस्पी के कारण पुरूष के साथ संबध बनाती है। कमलेश्वर की कहानी 'अजनबी लोग, मे मिलता है। "यह गर्व था कि औरों की तरह उसने आदमी नही बदला। इधर की औरतों की तरह आदमी बदलते रहना या सेठ–ठकेदार से आशिकी करने में उसकी दिलचस्पी नहीं थी।''

काम वासना की तृप्ति के कारण व्यक्ति अँधा हो जाता है। वह अपने परिवार, व समाज, को अपसंस्कृत कर रहा है। यही नंही बहकाने के विभिन्न प्रकार के लालच भी देता है–"ओई पातरा साब तो नहीं होता जो मेरे को दीवार के पीछू करा था...तेरे को छोड़ने को बोला था... पगार बढ़ाने को बोला था..."[6]

मीराँबाई पन्द्रहवीं शताब्दी की राजस्थान प्रदेश की एक सर्वश्रेष्ठ हिन्दी संत कवयित्री हैं। मुग्लकालीन संत मीराँबाई का जन्म राजस्थान के राजघराने में हुआ। मीराँ राजकुमारी थी। 'राव दूदाजी के दो रानियों से पाँच पुत्र और एक पुत्री हुई। उनके चतुर्थ पुत्र रत्नसिंह थे। मीराँ इन्हीं रत्नसिंह की पुत्री थी। मीराँ की माता के नाम के विषय में इतिहास मौन है परन्तु बचपन में ही उनकी माँ का स्वर्गवास हो चुका था। अधिकतर विद्वानों ने मीराँ का जन्म 1556 के आस–पास गाँव कुडकी में हुआ ऐसा कहा जाता है। उनके पिताजी राव रत्नसिंह एक वीर सैनिक थे। मीराँ अपने पितामह राव दूदा के यहाँ मेडता में आकर रहने लगी।[7]

शोध पत्र 'शिवानी की कहानियों में दाम्पत्य संबंधों का विश्लेषण' में लिखा है–

''दम्पती परिवार की धुरी होती है जिससे सभी संबंधियों का जीवन प्रभावित होता है। यद्यपि परिवार के अन्य कार्यों में शिथिलता आ गयी है परंतु परिवार के शारीरिक और अनुरागात्मक कार्य अब पहले से अधिक महत्वपूर्ण हो गये है। अभी परिवार ही ऐसी संस्था है जिसमें समाज द्वारा ऐसे संबंधो को मान्यता दी जाती है जिनके फलस्वरूप बालकों का जन्म होता है और उनका पालन–पोषण होता है। विवाह भी व्यक्ति की कुछ महत्वपूर्ण इच्छाओं को तृप्त करता है। पारिवारिक सम्बंधो की नीवं मौलिक अधिकारों पर टिकी होती है। शिवानी ने इसका उदाहरण देते हुए लिखा है।''[8]

स्त्री–पुरूष आधुनिक समय में विवाह जैसे पवित्र रिश्ते को नष्ट करते जा रहे है। विवाह केवल यौन पूर्ति का माध्यम समझा जा रहा है। कमलेश्वर की कहानी 'तीन दिन पहले की रात, का उदाहरण देखने को मिलता है। ''दुनिया जहान से उदासीन, विचारों और मानन से दूर वह एक ऐसा पुरूष था, जिसे केवल औरत चाहिए थी। ऐसी पत्नी जो उसकी शामों को रंगीन बना सके, रातों को महका सके और सुबह उससे अलग हट जाए।''[9]

मानसिक स्तर पर भी भोगवादी प्रकृति का रूप देखने को मिलता है। लड़कों के द्वारा लड़कियों को छेड़ना, सीटी, बजाना, ताली मारना, भोगवादी प्रकृति का हिस्सा है। कमलेश्वर की 'एक अश्लील कहानी, और 'नीली झील, में स्पष्ट स्त्री और पुरूष को लालयित होते है– ''इतने में एक सजी–बजी महिला पास से गुजर गई और चंद्रनाथ ने शैतानी से लंबी आह भरी।"[10]

'नीली झील' में महिलाओं को देखकर वासना से पुरूष का तृप्त होता स्पष्ट बताया गया है। ''जब वह सैलानी लोगों को झील की ओर जाते देखता और उनके साथ कोई सुंदर औरत होती, तो वह अपने को रोक नही पाता, पीछे चला ही जाता और चाहता कि वह औरत उससे बात करे।"[11]

काम वासना की तृप्ति के कारण पुरूष यह भी नही सोच पाता कि वह गलत कर रहा या सही। 'सड़क सजावन गालियाँ में चंद्रनाथ कहता है ''मैं इस औरत को लेकर भाग जाऊंगा"[12]

''ये बस बेकार की बातें है। मुझे तुम लोग सीख मत दिया करो। वह मुझे नहीं चाहेगी न सही, वह मेरी नहीं होगी, न सही। पर जो मुझे चाहिए वह मैं लेकर रहूंगा। पुलिस में दे देगी–बस!"[13]

पंजाब के संत साहित्य में पंजाब के दादू पंथ का विशेष महत्व हैं दादूपंथी साधुओं को अनेक देश स्थान, वेशभूषा, रहन, सहन, जीवनयापन, उपदेश आदेश प्रचार–प्रसार के ढंगों में विभिन्नता रखने के कारण, उन्हीं विभिन्नताओं के आधार पर छः मुख्य वर्गो में विभक्त किया गया है– यथा खालसा विरक्त, दखनाधा स्थानधारी, उतराधा स्थानधारी, नागा और तपसी इनके शिष्यों में बाबा बनवारी दास, संत हरिदास प्रसिद्ध है। सतगुरू ने सुरति का शब्द से मेल करवा दिया। इस सुरति–शब्द साधना में सुरति, मन तथा पवन (प्राण) सभी को एक कर त्रिकुटी में ध्यान लगाना पड़ता है। कुंती के विषय में चन्द्रनाथ कहते है। कि स्त्री भी पुरूष से कम नहीं है। विवाहित स्त्रियाँ आधुनिक समय मे अन्य से संबंध बनाने में पीछे नही है। 'एक सड़क सजावन गलियाँ' उपन्यास में बंसिरी सरनाम कहती है। ''डाका मारता है ? सरनाम सिंह हंसकर बोला अब तेरे पास रह क्या गया ? और उसने बड़ी गहरी नजरों से बंसिरी को ताका था। तेरे लायक सब कुछ है। है दम ? 'हया–शरम खोकर औरत बनी है अब।"[14]

चंद्रनाथ बड़ी हिकारत के साथ कहता है 'एक अश्लील

कहानी, में स्त्रियाँ श्रृंगार करती है। ''एक अश्लील कहानी'' में औरतों के श्रृंगार तक को इसी भूख का परिणाम कहा है अर्थात् स्त्रियाँ इसीलिए श्रृंगार करती है।

"यह कसूर उनका नही, तुम लोगों की आखों का भी है।''[15]

जब पुरुष अन्य संबंधों को स्थापित करता है तो सभी सीमाओं को तोड़ देता है। नैतिकता आत्म संयम जैसी भावनाओं से रहित रह जाता है। कमलेश्वर की कहानी 'कुछ नंही, कोई नहीं, जब सूरज के पिता के अवैध संबधों के बारे में पता चलता है। तो वह कहता हैं "निकल आ! मैं कह रहा हूं निकल आ, इसी में तेरी खैर है। घर कहता हैं, रात पहरे की ड्यूटी है और यहां नाबदान में पड़ा हैं।''[16]

भोगवादी प्रवृत्ति 'डाक बगंला' उपन्यास में देखने को मिलती है। नायिका इरा के साथ काम वासना की पूर्ति के लिए सबंध बनाता है। और बतरा के हाथ मेरी कमर पर आ गए थे...उफ कितनी एकता थी स्पर्श में और बतरा ने मुझे नजदीक लेते हुए बड़ी गहराई से चूम लिया था।...बतरा मेरा अपना हो गया था। मैं विवाहित जीवन तो व्यतीत कर रही थी, पर उसकी सामाजिक सनद न मैंने ली थी और न ही बतरा की लेने की सोचती थी।''[17]

प्यार करने वाले स्त्री-पुरुष मान-मर्यादा को भूल जाते है। चाहे विवाहित स्त्री क्यों न हो बंदरी ने सुना जोर देखकर बोला "साई वह रूह नहीं, हाड़-मास की सलमा थी। मैंने अपनी आंखों से देखा है, इन्हीं आँखों से। सलमा और सतार जरूर यह मौका पाकर उस मकान में गए होंगे।''[18]

प्राचीन समय में प्रेम को पवित्र समझा जाता था। लेकिन अब के समय काम वासना की पूर्ति बनकर रह गया 'मेरी प्रेमिका' कहानी में शांत सुप्रकाश के प्रेम में बहकर सब कुछ समर्पित कर देती है। "मैं उसके पास गई और फिर रंगीन बादलों और चांदनी में रातें नहा गई। वहीं समर्पण के क्षणों में मैंने उससे कहा था, हम सामाजिक रूप से एक हो जाएं क्यों ?''[19]

भोगवादी प्रवृत्ति के कारण स्त्री-पुरुष के बारे में कमलेश्वर कहता तुम्हारा शरीर मुझे पाप के लिए पुकारता है मकसूद प्रमिला को कहता है "प्रमिला! मैं कहने से खुद को रोक नहीं पा रहा हूं...वह यह कि तुम्हारा शरीर मुझे पाप के लिए पुकारता है।...यह जुमला तो क्यों पेट्रा ने भी अपनी जिंदगी में नहीं सुना होगा...और अपने शरीर का वह ताजमहल तुमने मकसूद को सौंप दिया।''[20]

यह प्रवृत्ति इंसान में ही नहीं, बल्कि देवी-देवताओं में भी देखी जाती है। 'कितने पाकिस्तान, में तीनों देवियां-देवताओं का वर्णन हैं "तु हारे सखा जीयस इस समय भी पाषाण के मंदिर में देवदासी इष्टा के साथ रतिमग्न है...देवता सुवोग डैन्यूब नदी के किनारे देवी पतरी के साथ संभोग में लिप्त हैं...सिंधु सभ्यता् का ब्रह्म अपनी पुत्री शतरूपा सरस्वती पर आसक्त होकर पिछले सौ दिव्य पुरुष से उसके साथ संभोग में लिप्त है।''[21]

शारीरिक यौन-व्यापार के कारण रिश्तों में पवित्रता नहीं रही है। स्त्री-पुरुष में भोगवादी प्रवृत्ति दिखाई देती है। नारी की रचना स्वंय ईश्वर ने की। ऋग्वेद में नारी को मैना कहा गया है। "क्योंकि पुरुष उसे सम्मान देते है।''[22]

जयशंकर प्रसाद जी नारी के प्रति अपनी श्रद्धा को प्रकट किया हैं। "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'' कहकर नारी के स्थान को निर्धारित किया गया है। लज्जा होने के कारण वह स्त्री कहलाती है। जब नारी स्वयं को पुरुष के प्रति समर्पित कर देती हैं, तब योशा नाम की वह अधिकारिणी हो जाती है।''[23]

समाज में नारी को पुरुष का शोषण बना दिया जाता। पुरुष प्रधान होने के कारण नारी शोषित हो रही है। आज समाज में अनेक नारियाँ अपने पैरों पर खड़ी होने के बावजूद भी शोषण का शिकार हैं।

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास रजन-नग-पग तल पर।
पीयूष स्त्रोत सी बहा करो
जीवन के सुंदर समतल पर।"[24]

शारीरिक और मानसिक रूप आधुनिक समाज में शोषण का शिकार बनती जा रही। राज धन लूटने के साथ रानी को अन्य वस्तु का उपहार समझा जाता है। ''यह धन लूट लो, उन्हें लूट लो, जो मिले उसे लूट लो। यही है अपने सेनापति आवाजी सोमदेव का आदेश। पर मीना जी की दृष्टि खजाने पर नहीं, यौवन से भरे खजाने गैहरबान पर थी... ।''[25]

सारी दुनिया सांप्रदायिकता का जहर बना दिया। जाति नाम पर लूट-खसोट हो रही। 'एक सड़क सजावन गलियां, उपन्यास में सरनाम बंसिरी के घर डाका डालता। मुँह में बंडूक डाल दो,...नंगा कर दो हरामजादी को सरदार चीखा था।

सरदार ने कड़क कर कहा था आग लगा कर इसकी टांगे भून दो, जब तक चाबियां न दे, मरने मत दो ससुरी को।

शारीरिक शोषण के कारण स्त्री अंत्यत घिनौना होती किसी की बहन, बेटी, पत्नी का भी शोषण होता जा रहा। ''गिरधारी लौंडिया की तरफ लपका था और उसकी छातियों पर हाथ डालकर वहशी तृप्ति का अनुभव करता हुआ अपने को कार्यरत प्रकट कर रहा था– इस लौंडिया को सताओ, तब यह कबूलेगी।"[26]

स्त्री–पुरूष को एक दूसरे का सहारा समझा जाता है। इसके बिना पहिए चल पाना असंभव होता है। इसका उदाहरण एक उपन्यास की इन पक्तियों में मिलता है। पिछली औरत की तरह उसका भी हाल यही करेगा। ताडी पी–पीकर पीटेगा और किसी दिन ये भी पेट में बच्चा लिए जहर खाकर या फांसी लगाकर जान दे देगी... इस संसार में कोई भी कितना ही आगे निकल जाए। लेकिन नारी को हीन भावना की दृष्टि से देखता है। यह बात कमलेश्वर की 'अधूरी कहानी' में स्पष्ट है। नारी पराधीन तो होती हैं, चाहे जहां बैठा दी जाए, बैठना ही पडेगा। विमल ठीक ही तो कहते हैं, चाहे खुशी से, चाहे अनिच्छा से समाज की मर्यादा को तो स्वीकार करना ही होगा।

आधुनिक समय में नारी का शोषण खरीदने बेचने तक किया है। कामना वासना के धंधे में कुछ रूपयों की खातिर उसका जीवन बर्बाद कर दिया जाता है। इस साधु ने हमें तीन सौ में खरीद कर आठ सौ रूपये में बेच दिया है अरे हम हजार देते हैं। उस बेहूदे व्यापारी से कहा और सिपाही की गालियां सुनाता हुआ डिब्बे में आ बैठा।

'मांस का दरिया' कहानी में नारी का शोषण बताया गया है। मजबूरी में रूपया उधार लेने पर बड़ा गंदा मजाक किया जाता है। "सूद में एक रात... ठीक है न''

पुरुष प्रधान समाज में आगामी अतीत' में बच्ची के साथ शौषण किया जाता है। बाबू तुमने अपनी बच्ची कहकर मुझे क्यों पुकारा था...? तुम्हें नहीं मालूम बच्ची बनाकर मुझ पर क्यों जुल्म तोड़ा गया था....।

आधुनिक नारी सुशिक्षित होने के कारण भी बदनाम होती है। आसक्ति कहानी में आर्थिक स्थिति कमजोर होने पर नौकरी करती है। वह मुझे भी बदनाम कर देगा और एक दिन मुझे यह नौकरी छोड़नी पड़ जाएगी।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि स्त्री–पुरुष के सबधों, कुछ प्रेम पर, भ्रष्ट शासन व्यवस्था, सभी कहानियाँ पर आधारित है। नारी दुर्दशा को व्यक्त करती है। 'स्टोरी' का उदाहरण है। 'स्मारक' कहानी भ्रष्ट शासन–तत्र पर व्यग्ंय किया गया था। 'तुम्हारा शरीर मुझे पाप के लिए पुकारता है।' कहानी स्त्री–पुरूष सबधों पर आधारित है। 'रावल की रेल' भ्रष्ट शासन तंत्र पर आधारित कमलेश्वर जी स्ंवय लिखते है समय–सापेक्ष मूल्यों को लेकर चलने वाला साहित्य और उन मूल्यों को व्यावहारिकता में फलित करने वाली राजनीति–यही ऐसे माध्यम हो सकते हैं जो शोषित और दलित मनुष्यता को उसकी मुक्ति का आधार दे सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *रघुवर दयालः हिंदी कहानीः बदलते प्रतिमानः पृष्ठ 106*
2. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 86*
3. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 19*
4. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 88*
5. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 91*
6. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 6–7*
7. *डॉ.ज्ञानी देवी गुप्ता शिवानी की कहानियों में दाम्पत्य संबंधों का विश्लेषण पृ.2*
8. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 16*
9. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 89*
10. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 189*
11. *कमलेश्वरः समग्र कहानियांः पृष्ठ 108*
12. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 189*
13. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 188*
14. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 189*
15. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 116–117*
16. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ–11*
17. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 211*
18. *वामन शिवरामे आप्टेः संस्कृति हिंदीकोशः पृष्ठ 99*
19. *जयशंकर प्रसादः कामायनीः (जल्लासर्ग) पृष्ठ 8*
20. *कमलेश्वरः कहानी संग्रह (कर्तव्य) पृष्ठ 119*
21. *कमलेश्वरः एक सड.क सजावन गलियांः पृष्ठ 26*
22. *कमलेश्वरः समग्र उपन्यासः पृष्ठ 39*
23. *कमलेश्वरः समग्र उपन्यासः पृष्ठ 19*
24. *कमलेश्वरः समग्र उपन्यासः पृष्ठ 26*
25. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 39*
25. *कमलेश्वरः समग्र कहानियां पृष्ठ 19*

ISSN 2277-5587

जोधपुर का धींगा गवर (बैतमार गणगौर मेला)

डॉ. प्रतिभा सांखला
सहायक आचार्य, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

राजस्थान का जोधपुर शहर अपनी अपणायत के लिए तो प्रसिद्ध ही है। साथ ही यहाँ के प्रसिद्ध सांस्कृतिक धींगा गवर मेले के लिये देश में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी प्रसिद्ध है। वैशाख कृष्ण की तृतीया के दिन जोधपुर शहर में मनाया जाने वाला यह त्यौहार धींगा गवर या बैंतमार गणगौर के नाम से जाना जाता हैं। यह त्यौहार महिला शक्ति और अनुशासन का प्रतीक है और यह त्यौहार सिर्फ स्त्रियों द्वारा ही मनाया जाता है। धींगा का अर्थ मस्ती है। यह त्यौहार रात भर चलता है। जिसमें स्त्रियाँ गंवरजी की प्रतिमा की पूजा करती है और साथ में रात भर अलग-अलग वेषभूषा धारण कर मस्ती करती है।

संकेताक्षर : *राजस्थान, जोधपुर, धींगा, गणगौर, स्त्रियाँ, त्यौहार।*

जन्मोपरान्त मनुष्य का अस्तित्व समाज में ही होता है। समाज में चालू सभी रस्मों की अदायगी व्यक्ति मात्र की अनिवार्य परम्परा होती है। अन्यथा वह समाज से अलग समझा जाता है। पारिवारिक रस्में तो होती ही है व्यक्तिगत रस्में भी होती है परन्तु समाज में सामूहिक रूप से मनाये जाने वाली रस्में परम्परागत एवं सांस्कृतिक जिन्दादिली की प्रतीक होती हैं। त्यौहार पर्वोत्सव, मेले और अन्य धार्मिक उत्सव इतने होते है कि वर्ष का कोई भी सप्ताह इससे अछूता नहीं बचता है। राजस्थान में बलिदान की कहानियों से ओत-प्रोत सांस्कृतिक परम्पराएँ देश क्या दुनिया के किसी भाग में अपना सानी नहीं रखती हैं। राजस्थान में मेलों और त्यौहारों का विशेष महत्व रहा है।[1] इन त्यौहारों ने राजस्थानी संस्कृति को जीवित रखने में बड़ा योगदान दिया है।[2] उत्सव, त्यौहार और मेलों का किसी देश में सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान होता है। त्यौहारों का उद्देश्य हमारे जीवन में कुछ नवीनता लाना है। जो जाति जितने उत्साह से अपने त्यौहारों को मनाती है वह उतनी ही प्राणवान और सशक्त मानी जाती है।[3]

मेले और त्यौहार राजस्थान के जनजीवन की परम्परागत विशेषता है जो अभी तक त्यों के त्यों विद्यमान है। राजस्थान में मेले विभिन्न स्थानों पर आयोजित किये जाते हैं लेकिन कुछ गिने-चुने मेलों का अपना अलग ही महत्व होता है जिसके कारण लोग आकर्षित होकर बहुत बड़ी संख्या में भाग लेते है।[4] धींगा मस्ती वह भी अगर स्त्रियाँ करे सरेआम, सारी रात तो कैसी परिकल्पना होगी ? जोधपुरी परिवार वैसे तो 'फीमले डोमिनेटेड' है। जोधपुर की रूठी रानी (उमादे भटियाणी, राजा मालदेव की पत्नी) के अफसाने, प्रेमचन्द जैसे लेखकों के लेख। यहाँ की स्त्रियाँ उत्सव, आभूषण प्रिया, सामाजिक नैतिकता की उदार लक्ष्मण रेखाओं तक स्वतंत्र हैं। वैसे तो जोधपुर में अनेक उत्सव होते है लेकिन धींगा गवर नारी स्वातन्त्रय का प्रतीक है। राजस्थान के गणगौर के मेले के एक पखवाड़े बाद शहर के भीतरी इलाकों में धींगा गवर का महोत्सव होता हैं[5]

विश्व का सबसे अनूठा पर्व धींगा गवर मेला जोधपुर की विरासत रहा है। 18 दिन जोधपुर में उत्साह से आयोजन को मनाने की परम्परा है। गवर बिठाने की परम्परा की शुरूआत भीतरी शहर हड्डियों के चौक से हुई। 1970 के दशक से पहले गवर माता को धींगा गवर के दिन बिठाने की परम्परा आज भी जारी है। बताया जाता है कि 70 के दशक में एक चौक में खुदाई के दौरान गवर माता की प्रतिमा अवतरित हुई थी।[6] इस दौरान मोहल्ले के युवाओं ने इस प्रतिमा को अपने घरों में बिठाने का सिलसिला शुरू किया। कुछ समय बाद धींगा गवर के दिन मोहल्ले में विवाद के चलते

गवर का मेला नहीं करने का निर्णय लिया गया। जिस दिन यह निर्णय लिया गया, उसी दिन गवर खुद दरवाजे तोड़कर स्वयं बाहर आ गई लोग यह देख कर आश्चर्य चकित हो गये। उन्हें गवर माता की श्रद्ध–शक्ति का अंदाजा हुआ। उन्होने गवर पूजन का सिलसिला शुरू किया जो आज भी जारी है।[7]

राजस्थान की सांस्कृतिक राजधानी जोधपुर शहरवासियों का जनजीवन लोक पर्वों, त्यौहारों और मेलों की आनन्दमयी रसधारा में प्रायः पूरे वर्ष निमग्न रहता है। एक त्यौहार के समाप्त होते ही दूसरे त्यौहार के आगमन की आशा जन–मन में सतत बनी रहती है। और इस प्रकार जीवन का उत्सव, उमंग, जिजीविषा कभी निःशेष नहीं होती। पर्वो, त्यौहारों और मेलों के इस नगर के सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन को एक नई पहचान दी है खास तौर से जोधपुर से दो चरणों में मनाए जाने वाली गवर पूजन से जुड़े अनूठे लोकपर्व धींगा गवर में।[8]

जोधपुर में मेलों की परम्परा 562 सालों से जारी है। 102 साल पहले यशोदा देवी की प्रेरणा से शुरू हुआ धींगा गवर का पूजन। गुरू गोविन्द कल्ला ने बताया कि 102 साल पहले उनकी माताजी यशोदा देवी की प्रेरणा से मोहल्ले की महिलाओं ने पूजन करना शुरू किया था। उनकी माता यशोदा देवी को यह प्रेरणा उनके पति बद्रीदास कल्ला से विरासत के तौर पर मिली थी। धीरे–धीरे पूजन के इस सिलसिले में महिलायें जुड़ती गई। आज हर मोहल्ले के घरों में धींगा गवर का पूजन धूमधाम के साथ आयोजित किया जा रहा है।[9]

होली के एक पखवाड़े बाद चैत्र शुक्ला तृतीया को गणगौर का विसर्जन कर दिया जाता है, किन्तु सुनार, ब्राह्मण, महेश्वरी जाति की महिलायें चैत्र शुक्ला तीज से बैशाख कृष्ण पक्ष की तीज तक धींगा गवर का पूजन करती है।[10] इस दौरान आयोजित मेले का खूबसूरत और मनोहरी नजारा होता है। परकोटे के माहौल में मधुर इस धोलती गीत–संगीत की झंकार, हर तरफ तीजणियों की कतार और हँसी ठिठौली और चुहल के संग कुँआरे युवकों पर बेंत की बौछार का नजारा अनूठा होता है। अलग–अलग स्वांग रची तीजणियाँ देर रात को जब गवर प्रतिमाओं के दर्शनार्थ हाथों में बेंत लिये निकलती है तो युवाओं का हुजुम बचने के लिये इधर–उधर दौड़ते भागते सुरक्षित ठेर ढूढ़ते नजर आते है।[11]

सजी–धजी धींगा गवर माता

धींगा गवर सती माता का ही रूप है। इन्हें इनके पूरे नाम लिखयनीय नाम से जाना जाता है। ये सप्त ऋषि की पत्नी है लोगों में अपने लोकप्रिय नाम धींगा गवर से प्रसिद्ध है। इनके विषय में एक कथा प्रचलित है जो निम्नलिखित है–[12] एक बार ऋषियों का सम्मेलन हुआ था उनमें से एक सात ऋषि थे ऋषियों की इस सभा में किसी कारण युद्ध छिड गया उस युद्ध में सप्त ऋषि शान्त हो गये। जब इस घटना की जानकारी उनकी पत्नी को मिली तो बहुत क्रोधित हो गयी और श्राप देने को उतारू हो गयी। इस घटना का जब विष्णु, ब्रह्मा जी और शिवजी को ज्ञात हुआ तो उनके क्रोध को शान्त करने का विचार किया और यह निष्कर्ष निकाला कि देव ऋषि नारद जी इन सती को शान्त करें नारद जी ने यह देख सती से अनुरोध किया कि वे शान्त हो जाये। इस पर सती ने उपाय बताकर एक विधि बताई।[13] विधि विधान के अनुसार स्नान कर पवित्र व शुद्ध वस्त्र धारण कर अपने पुत्र को गोद में लेकर तथा हाथ में पंखा लेकर आधी रात में भगवान विष्णु के घर उपस्थित होकर अनुरोध करे कि वे मेरा कलश उतारे इस पर भगवान विष्णु ने कहा कि देवी मैं असमर्थ हूँ आप यह प्रार्थना ब्रह्मा जी से करें। इस पर जब ब्रह्मा से अनुरोध किया तो ब्रह्मा जी ने यह कार्य भोलेनाथ से करवाने को

कहा। सती ने भोलेनाथ से घड़ा उतारने की प्रार्थना की। साथ ही भोलेनाथ से सात वचन मांगे, इस समय पार्वती जी अपने पीहर गई हुई थी।[14] शिवजी ने सातों वचनो को स्वीकार कर कलश उतारा। इन्हीं सती को धींगा गवर कहा जाता है व इसकी पूजा की जाती है।[15]

धींगा गवर माता का पूजन

मान्यता है कि धींगा गवर ईसर जी के नाते आयी थी। धींगा गवर की पूजा विद्यवाएँ एवं सुहागिनें दोनो ही करती है।17 कुंवारी बालिकाएं इसे नहीं पूजती।18 चैत्र शुक्ल बीज से पूजा आरम्भ की जाती है। दीवार पर धींगा गवर का चित्र बनाया जाता है। पास में गणेश का भी चित्र होता है।19 साथ में शिवजी मूषक, चांद व सूर्य के चित्र भी बनाये जाते है। धींगा गवर को पूजने वाली महिलायें सोलह दिन तक अपने हाथ में सोलह गाँठो का डोरा बाँधती हैं। विभिन्न रंगों के प्रयोग से दीवार पर बनाई गई धींगा गंवर की कुंकुम–चावल, पुष्प आदि से पूजा की जाती है।20 धींगा गवर की पूजा दोपहर बाद की जाती है। पूजा के दौरान महिलाओं द्वारा पारम्परिक सामूहिक गीत गाये जाते है। पूजन आदि से निवृति के बाद महिलाएँ घर जाने से पहले पानी के कुंडले बनाती है। बैशाख शुक्ल पक्ष की तीज की रात धींगा गवर का 'रातीजोगा' और 'भोलावणी' होती है। जिस समय भोलावणी के लिये गवर को ले जाया जता है, महिलायें अपने हाथ में बंधे डोरा गवर के बाँध देती हैं। इस अवसर पर चार बार आरती होती है। देर रात भोलावणी होती हैं।21 इस प्रकार धींगा गवर पर्व के मामले में जोधपुर की अलग ही पहचान हैं। पुराने शहर में महिलायें सज–धज के इस पर्व को मनाने में जुटती हैं। विभिन्न संगठन भी इस पर्व को मनाने में महीनों पहले सक्रिय हो जाते हैं। धींगा गवर का मेला रात में ही भरता है। इस रात परकोटे के भीतर गलियों, चौराहों पर महिलाओं का राज रहता है। महिलायें के हाथों में बैंत होती है, वे सामने आने वाले पुरूषों को बैंत मारकर अपने लिये रास्ता बनाती है। गवर की मूर्ति को सोने के जेवरात से सजाया जाता है।22

धींगा गवर मेले में स्वांग रची महिला का दृश्य

शहर के भीतरी इलाकों में धींगा गवर का महोत्सव होता है, रात्रि के बारह बजे से सवेरे चार बजे तक संकडी गलियों को विवाह वितानों की तरह सजाया जाता है। निश्चित स्थानों पर केवल गौर की प्रतिमाएँ स्थापित की जाती है। ईसर (ईश्वर या शिव) नहीं। सम्मोहक पोशाकों के अलावा शुद्ध सोने के आभूषणों से अंग प्रत्यंग को अलंकृत किया जाता है।23 रात्रि में औरते नाचती गाती हुई अन्य स्थानों पर प्रतिष्ठित धींगा गवर के दर्शनार्थ जाती है। कुछ औरते स्वांग भी धारण करती हैं।24 पुलिस इंस्टेक्टर, दूल्हा, राजा, कलेक्टर, भगवान, देवियाँ, कई तरह के वेश धारण करती हाथों में डण्डे धारण किये निकलती है। पुरूष मूक दर्शक से चबूतरियों पर बैइे रहते है। किसी भी पुरूष को डण्डा मार दे तो कोई आपत्ति नहीं है।25 ऐसा माना जाता है, अगर किसी अविवाहित पुरूष को बैंत (डण्डा) लग जाता है तो उसकी शादी जल्दी हो जाती है।26 गवर के पास मोई (भंग मिश्रित प्रसाद) होती हैं जिसे स्त्रियों ग्रहण करती है और भंग की तरंग में धींगा मस्ती करती रसिकता के गीत गाती है। उस रात स्त्रियाँ का साम्राज्य होता है। अपवाद रूप में ऐसा दृष्ट्रान्त मिलता है कि पुरूषों ने कभी अभद्र व्यवहार किया हो या डण्डे खाने पर भी प्रतिकार उपद्रव किया हो।27

इस भागमभाग के दौरान स्वांग रची तीजणियों के श्रंगार, वीर, वीभत्स, रौद्र, हास्य, करूणा, अद्भुत, शांत, वात्सल्य, और भक्ति के रंग देने को मिलते है। लोक प्रचलित मान्यता है कि कुंवारों को यदि तीजणियों के हाथों बैंत की प्रसादी मिल जाये तो आगामी वर्ष तक उनकी सगाई होती है।28 इस मेले का आयोजन पहले तो मुख्य रूप से सुनारो की घाटी व हट्डियों के चौक में होता था लेकिन पिछले 13–14 सालों से बैंतमार गणगौर ने चाचा की गली को भी लोकप्रिय बना दिया है।29 धींगा गवर पूजनपूर्ण होने पर गवर विदाई को रात अनूठे अलग–अलग स्वांग रची तीजणियों का धींगाणा देखने को पूरा शहर उमड़ता रहा है।30 फिर ब्रह्मवेला में धींगा गवर का जल में विसर्जन कर दिया जाता है।31

'वूमन्स लिब' नारी स्वातन्त्रय का प्रशस्त रूप जोधपुर में देखने को मिलता हैं।32 अनूठे मेले को देखने बाहरी क्षेत्रों से बडी संख्या में लोग आते है।33 महिला सशक्तिकरण से जुडा धींगा गवर का अनूठा पूजन केवल जोधपुर में किया जाता है।34 हमारे पूर्वजो ने शिव–पार्वती के पौराणिक प्रंसगो का आधार मानते हुए धींगा गवर की पूजा अर्चना का विधान बनाया था। अगाध मान्यता यह भी है कि इन गवर माता से सच्ची श्रद्धा और विश्वास से जो कुछ भी मांगा जाए, गवर माता उनकी मनोकामनाएं जरूर पूरी करती है।35

संदर्भ ग्रथ सूची

1. *गहलोत, सुखवीर सिंहः– राजस्थान के रीति रिवाज, 1966, डायमण्ड प्रिंटिग प्रेस जयपुर । पृ. सं. 53–54*
2. *वहीं, पृ. 57*
3. *राठौड़, डॉ. विक्रम सिंह :– मारवाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, 1999, पृ. सं 01*
4. *भल्ला, डॉ. एल. आर. :– राजस्थान का एक विस्तृत अध्ययन (भाग–III, सांस्कृतिक व सामाजिक व्यवस्था) कुलदीप पब्लिकेशन् पृ. सं. 45*
5. *दैनिक भास्कर, जोधपुर दिनांक 03 अगस्त 2021 (जोधपुर में 25 वां वर्ष परम्पराओं का जश्न)*
7. *वहीं*
8. *राजस्थान पत्रिका, जोधपुर दिनांक 14 दिसम्बर, 2020*
9. *दैनिक भास्कर, जोधपुर, 03 अगस्त 2021, वहीं*
10. *गुप्ता, मोहनलालः– जोधपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थान, ग्रन्थागार, 2019, पृ.सं. 149*
11. *राजस्थान पत्रिका, जोधपुर, 14 दिसम्बर, 2020*
12. *मौखिक वार्ताः– पुरोहित श्रीमती बसन्ती, निवासी चौपासनी हाउसिंग बोर्ड (ये स्वयं पिछले 25 वर्षों से धींगा गवर व्रत करती है और मेले में स्वांग भी रचती है।)*
13. *वहीं,*
14. *मौखिक वार्ताः– श्री विनोद जी हर्ष (आसोप की पोल निवासी), गणगौर मेला समिति के सदस्य एवं धींगा गवर माता की कथा पुस्तक से जानकारी*
15. *वहीं,*
16. *गुप्ता, मोहनलाल :– वहीं पृ. 149*
17. *कल्ला, डॉ. नन्दलाल :– हिन्दी का प्रादेशिक लोक साहित्य शास्त्र, राजस्थानी ग्रन्थागार, 2014, पृ. सं. 166*
18. *गुप्ता मोहनलाल, वहीं पृ. 149*
19. *कल्लां, डॉ. नन्दलाल, वहीं पृ. 166*
20. *गुप्ता, मोहनलाल, वहीं, पृ. 149*
21. *वहीं*
22. *राजस्थान पत्रिका, जोधपुर 14 दिसम्बर, 2020*
23. *गहलोत, सुखवीर सिंह– जोधपुर का सांस्कृतिक वैभव, प्रकाशकः*

    जगदीशसिंह गहलोत, जन्मशती समारोह समिति, जोधपुर 1996, पृ. 61
24. *कल्लां, डॉ. नन्दलाल :– वहीं पृ. 166*
25. *गहलोत सुखवीर सिंह, जोधपुर का सांस्कृतिक वैभव, 1996, पृ. 61*
26. *मौखिक वार्ताः– पुरोहित श्रीमती बसन्ती वहीं,*
27. *गहलोत, सुखवीरसिंह, जोधपुर का सांस्कृतिक वैभव, 1996 पृ. 61*
28. *राजस्थान पत्रिका, सोमवार, 14 दिसम्बर, 2020 पृ. 12*
29. *गुप्ता मोहनलाल, वहीं. पृ. 149*
30. *राजस्थान पत्रिका, जोधपुर, 19 अप्रैल, 2021 पृ. 5*
31. *कल्ला, नन्दलाल, वहीं. पृ. 166*
32. *गहलोत, सुखवीर सिंह, जोधपुर का सांस्कृतिक वैभव, पृ. 61*
33. *राजस्थान पत्रिका, जोधपुर, 14 दिसम्बर, 2020*
34. *राजस्थान पत्रिका, जोधपुर, 19 अप्रैल, 2021*
35. *दैनिक भास्कर, वहीं जोधपुर, मंगलवार 03 अगस्त 2021*

केंद्र–राज्य सम्बंधः नवीन प्रवृतियां (सहकारी संघवाद के विशेष संदर्भ)

डॉ. विक्रांत कुमार शर्मा
सहायक आचार्य, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्रस्तुत लेख मे केंद्र–राज्य संबन्धों के सैद्धांतिक आधारभूत सिद्धांतों की अपेक्षा भाजपा शासित केंद्र सरकार की राज्यों से संबन्धित नूतन नीतियों की विवेचना है। जिसमें नीति आयोग का प्रभाव, सामान्य वस्तु एवं सेवा कर प्रणाली, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की राज्यों के प्रति कार्यशेली, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की सरकार एवं केंद्र के पारस्परिक सम्बंध, अखिल भारतीय न्यायिक सेवा ''सृजन'' के प्रयास एवं ''अंतर राज्य परिषद का पुनर्गठन" का प्रासंगिक विश्लेषण है। केंद्र के इन प्रयासों में अधिकांश से भारत का संघात्मक ढाँचा सहकारी संघवाद की तरफ अभिमुख हुआ है, साथ ही राष्ट मे एकीकृत रहने की प्रबल भावना एवं सुदृढ़ता आयी है।

संकेताक्षर : *परिसंघ, यूनियन, प्रारूप समिति, अर्ध संघात्मक व्यवस्था, सहकारी संघवाद, भाजपा, जी.एस.टी. परिषद, परिसंघ संघ, अंतर–राज्य परिषद, क्षेत्रीय परिषदें, सांकेतिक नियोजन, राष्ट्रीय भारत परिवर्तन संस्थान (नीति आयोग)।*[1]

परिसंघ (फेडरेशन) आधारित संघवाद के विपरीत भारत एक ''विशिष्ट प्रकार का संघ" है । भारत के संविधान में ''भारत" राज्यों का संघ (यूनियन ऑफ स्टेट्स) है। संविधान में कहीं भी ''संघ'' [Federation] शब्द का उल्लेख नहीं है । संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अंबेडकर का अभिमत है– ''प्रारूप समिति के द्वारा ''यूनियन" शब्द का प्रयोग यह स्पष्ट करने के लिये किया है, यद्यपि भारत एक संघीय व्यवस्था वाला राज्य है, लेकिन यह संघीय राज्य किसी प्रकार से राज्यों के पारस्परिक समझौंते का परिणाम नहीं होने के कारण किसी भी राज्य को संघ से प्रथक्क होने का अधिकार नहीं है।[2]

भारत मे केंद्र – राज्य संबंध प्रारंभ से ही ''प्रासंगिक एवं सामयिक समीक्षा" का विषय रहा है। स्वतन्त्रता के उपरांत केंद्र एवं अधिकांश राज्यों में ''कांग्रेस दल" की सरकार होने के कारण भारत सैद्धांतिक के साथ व्यावहारिक दृष्टि से भी केंद्राभिमुखी रहा है, जो प्रो. के.सी. व्हीयर की टिप्पणी कि ''भारत अर्द्ध संघात्मक व्यवस्था वाला राज्य है।"[3] के पूर्णतः अनुकूल था।

अतः स्वतंत्रता के उपरांत लोकतांत्रिक भारत में ''शक्तिशाली केंद्र" के विरुद्ध राज्यों द्वारा विरोध के स्वर उठने लगे। दक्षिण भारत के राज्यों विशेषतः तमिलनाडु राज्य के शासकों ने सक्रिय रूप से केंद्र के समक्ष अपना पक्ष रखा। धीरे–धीरे उत्तर भारत मे ''राज्य केन्द्रित क्षेत्रीय दलों'' का उदय हुआ, निष्कर्षतः राज्यों में कांग्रेस दल के स्थान पर क्षेत्रीय दलों की सरकार बनने लगीं। केंद्र मे भी ''गठबंधन सरकारों" का लम्बा दौर रहा । उक्त संदर्भ में भारत के पूर्व राष्ट्रपति श्री के. आर. नारायणन (28 अप्रेल 1998) ने सही टिप्पणी की है कि ''भारत मे गठबंधन सरकारों का बनना, उसके सकारात्मक संघवाद का परिणाम है, जो ''अनेकता में एकता'' हमारी विशेषता को भी प्रतिबिम्बित करती है।[4]

परंतु वर्ष 2014 मे भारत की राजनीति में परिवर्तन आया, वर्षों के बाद ''नेहरू – इन्दिरा युग" जैसी पूर्ण बहुमत की सरकार अस्तित्व में आयी। इस बार श्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व मे भाजपा को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ ।

अतः भारतीय राजनीति के विश्लेषकों, मनीषियों राजनीति शास्त्र के मनीषियों में यह प्रश्न पुनः समीक्षा का विषय

बना कि इस दौर में केन्द्र – राज्य संबंधो का स्वरूप क्याहै ? इस प्रश्न का जवाब ग्रेनविल आस्टिन द्वारा भारतीय संघ को प्रदान संज्ञा–सहकारी संघवाद (Cooperative Federation) के निकट है।[5] ''सहकारी संघवाद'' में केंद्र प्रभावी तो होता है परंतु राज्य कमजोर नहीं होते। केंद्र एवं राज्य परस्पर पूरक होते है, दोनों ही सकारात्मक रूप से परस्पर सहयोग कर राष्ट्र को मजबूत एवं विकास पथ पर अग्रसर करते हैं ।

अतः उपर्युक्त संदर्भ में परिवर्तनों का उल्लेख प्रासंगिक है–

योजना आयोग का नीति आयोग द्वारा प्रतिस्थापन– भारत के ''सामाजिक–आर्थिक विकास" मे योजना आयोग का महत्वपूर्ण योगदान है। वर्ष 1951–52 में निर्मित प्रथम पंचवर्षीय योजना से 2015 तक इन योजनाओं का क्रियान्वयन ''योजना आयोग के द्वारा किया गया'' योजना आयोग को तानाशाह केंद्र के प्रतिनिधि आदि सम्बोदित कर इसे संघीय व्यवस्था हेतु अनुपयुक्त बतलाया है। राजनीति शास्त्र एवं लोक प्रशासन के विद्वानों सहित योजना आयोग के भूतपूर्व उपाध्यक्षों ने भी इसको ''संघीय व्यवस्था" की मूल भावना के विपरीत माना। राज्यों द्वारा कहा जाता था कि केंद्र योजना आयोग द्वारा राज्यों की इच्छा जाने बिना योजनाओं को क्रियान्वित करता हे। केंद्र पर योजना आयोग के माध्यम सें विरोधी दल की सरकार वाले राज्यों ने अनुदान देने में भेदभाव के आरोप भी लगाये।

''योजना आयोग'' का प्रतिनिधित्व मण्डल अनुदान देने के मापदण्ड निर्धारित करने हेतु राज्यों के दौरे पर जाता था। राज्य सरकारों को उनकी बड़ी महमानबाजी (Hospitality) करनी पड़ती थी। योजना आयोग के पूर्व अध्यक्ष श्री अशोक चंदा ने इसे ''सुपर केबिनेट" की संज्ञा दी थी।[6]

परिणाम स्वरूप तत्कालीन भाजपा सरकार ने एतिहासिक निर्णय लेते हुए निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार 01 जनवरी 2015 को योजना आयोग को नीति आयोग से प्रतिस्थापन कर दिया । केंद्र सरकार ने नीति आयोग का उद्देश्य ''बॉटम अप अप्रोच" का उपयोग कर राज्यों को आर्थिक नीति निर्धारण प्रक्रिया मे शामिल कर सहकारी संघवाद को बढावा देना बतलाया।[7]

नीति आयोग का अध्यक्ष प्रधानमंत्री पदेन है, इसके अलावा सभी राज्यों के मुख्यमंत्री (दिल्ली एवं पुंडुचेरी सहित) तथा केंद्र शासित राज्यों के उपराज्यपाल इसके सदस्य हैं।[8]

नीति आयोग, राज्यों को स्वयं की प्राथमिकता एवं क्षेत्रीय परिस्थितियों के आधार पर योजना बनाने में मार्गदर्शन प्रदान करता है, अर्थात् सांकेतिक नियोजन (Indicative Planning) इसका महत्वपूर्ण कार्य है।[9]

नीति आयोग ने राज्यों को सामाजिक–आर्थिक विकास की योजना बनाने एवं क्रियान्वित करने मे स्वायत्ता प्रदान की है। निष्कर्षतः नीति आयोग की स्थापना सहकारी संघवाद की दिशा मे आधारभूत एवं ठोस निर्णय है।

सामान्य वस्तु एवं सेवा कर प्रणालीः– भारत मे 01 जूलाई 2017 से वस्तु एवं सेवा कर प्रणाली लागू की गई। इसके तहत केंद्र एवं राज्य सरकारों ने भिन्न–भिन्न दर से लगने वाले करों को हटाकर सम्पूर्ण भारत मे एक ही अप्रत्यक्ष कर प्रणाली लागू की गई । परिणामस्वरूप सम्पूर्ण भारत को एकीकृत साझा बाज़ार बनाकर आर्थिक एकीकरण की नींव डाली गई ।

केंद्र ने सामानों (एक्साइज कर) एवं सेवाओं के प्रावधान (सेवा कर) के निर्णय हेतु अपनी विशेष शक्ति को छोड़ दिया, वहीं राज्यों ने अपनी विशेष शक्ति माल पर बिक्री कर (वेट) को छोड़ दिया। अर्थात् केंद्र एवं राज्य सरकारों ने एक समानता प्राप्त करने हेतु अपनी शक्तियों का त्याग एवं साझा करने को तैयार हो गये जो सहकारी संघवाद का सटीक उदाहरण है ।

सहकारी संघवाद की भावना के अनुरुप केंद्र एवं राज्यों ने अलग–अलग शक्तियों मे संशोधन कर एकरूपता उत्पन्न की है, भारत के संविधान मे भी इसके अनुरूप संशोधन किया है। इससे केंद्र–राज्य वित्तीय सम्बन्धों के विवादों का निराकरण हुआ है, सम्बन्धों में स्पष्टता आयी है।

जी.एस.टी. परिषद में भी नीति आयोग के जैसे ही राज्यों को समान प्रतिनिधित्व दिया गया है। इसमे केंद्रीय वित्त मंत्री एवं राज्यों के वित्त मंत्रियों एवं राजस्व मंत्रियों को पदेन सदस्य बनाया गया है। जी.एस.टी. परिषद में 2/3 मतदान पावर राज्यों के पास है, साथ ही यह भी प्रावधान है कि सभी निर्णय बहुमत से लियें जायेंगे।[10]

स्पष्ट है कि राज्यों को सामान्य वस्तु एवं सेवा परिषद में संघीय भावना के अनुरूप शक्ति एवं स्थान दिया है।

यह भी महत्वपूर्ण हे कि उक्त परिषद मे अभी तक वोटिंग की नोबत नहीं आई है ।

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो एवं राज्यः– केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो केंद्र सरकार कि महत्वपूर्ण जांच एजेंसी है, जो व्यापक कदाचार, घोटालों सहित दुर्लभ प्रकृति कि आपराधिक घटनाओं की जांच करती है।[11] ''केंद्र सरकार पर प्रारम्भ से ही सी.बी.आई. के दुरुपयोग के आक्षेप लगते रहे हैं। उच्चतम न्यायालय भी टिप्पणी कर चुका है कि" केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो पिंजरे मे बंद तोता है जो अपने मालिक (केंद्र सरकार) के इशारों पर कार्य करता है।"

डॉ. मनमोहन सिंह के नेतृत्व मे सयुंक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) की सरकार के समय भाजपा शासित राज्य राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश आदि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के दुरुपयोग के आरोप लगाते रहे थे।

वर्तमान मे समाजवादी पार्टी, कांग्रेस पार्टी, बसपा सहित आम आदमी पार्टी के दिल्ली में मुख्यमंत्री श्री अरविंद केजरीवाल ने भी सी.बी.आई. के दुरुपयोग के आरोप लगे हैं, पूर्व वित्त मंत्री श्री पी. चिदम्बरम की गिरफ्तारी पर भी कांग्रेस (आई) ने मोदी सरकार पर प्रवर्तन निदेशालय एवं सी.बी.आई. के दुरुपयोग की शिकायत की थी। वर्तमान मे नेशनल हेराल्ड केस में कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी एवं श्री राहुल गांधी से प्रवर्तन निदेशालय द्वारा सघन पूछताछ से भी कांग्रेस पार्टी मे संस्थानो के राजनैतिक दुरुपयोग की संज्ञा दी है।

वर्ष 2019 मे पश्चिमी बंगाल में शारदा चिटफंड घोटाले के अभियुक्त श्री राजीव कुमार (तत्कालिक कोलकाता पुलिस कमिश्नर) को गिरफ्तार करने गई सी.बी.आई. टीम को ही पश्चिमी बंगाल पुलिस ने राज्य सरकार के इशारे पर हिरासत में ले लिया । यही नहीं सी.बी.आई. के कोलकाता स्थित क्षेत्रीय कार्यालय की सुरक्षा हेतु केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल (सी.आर.पी.एफ.) की टुकड़ी को केंद्र सरकार द्वारा भेजा गया।

केंद्र–राज्य सम्बन्धों मे यही अनूठी एवं सहयोगी संघ भावना के विपरीत दुर्भाग्यवश घटना थी। अखिल भारतीय सेवा का अधिकारी होने के कारण पुलिस कमिश्नर की अंतिम जवाबदेहता केंद्र सरकार एवं राष्ट्रपति के प्रति भी है, अतः प्रकारांतर से इस घटना से यह भी जाहिर होता है कि संघीय ढांचे की सुरक्षा हेतु केंद्र का अखिल भारतीय सेवाओं पर नियंत्रण अपरिहार्य है। हालांकि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो का राज्यों मे हस्तक्षेप व्यापक एवं संरचनात्मक, संघात्मक ढांचे की अपेक्षा व्यक्तिगत एवं राजनैतिक वैमनस्य से प्रभावित है, उक्त विवादों का हल परिपक्व राजनैतिक संस्कृति के विकास से संभव होगा।[12]

केंद्र एवं राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली :– भारत की राजधानी दिल्ली की सुरक्षा व्यवस्था एवं आधारभूत विकास महत्वपूर्ण है, वहीं दिल्ली मे रहने वाले एक करोड़ से अधिक नागरिकों को प्राथमिक सुविधाएं उपलब्ध करना कल्याणकारी राज्य का परम दायित्व है। इसी उद्देश्य से राष्ट्रिय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में विधायिका का गठन कर अधिकांश सामान्य मामलों में राज्यों के समकक्ष माना गया है । उक्त व्यवस्था का उद्देश्य केंद्र सरकार को दिल्ली की जनता के दैनिक प्रशासन एवं समस्या निराकरण में स्वमं न उलझ कर सम्पूर्ण भारत के शासन संचालन को सुगम बनाना था, अर्थात् पावन उद्देश्य से यह व्यवस्था की गई। परंतु केंद्र एवं एन सी आर दिल्ली मे अलग दलों की सरकार होने पर कई प्रकार के विवाद खड़े हो गये, जिनमे मुख्यतः एन सी आर दिल्ली की सरकार एवं उपराज्यपाल के मध्य विधायी एवं प्रशसानिक शक्तियों के बँटवारे पर मतभेद, दिल्ली पुलिस के केंद्र सरकार के नियंत्रण में होना मुख्य हैं।

हालांकि पूर्व मे भी केंद्र एवं एन सी आर दिल्ली मे अलग–अलग दलों की सरकार रही है। उनमें इतने विवाद सामने नहीं आए, परंतु आप दल की सरकार ने केंद्र पर अनेक आक्षेप लगाए। उक्त विवाद उलझनपुर्ण हैं, क्योंकि एक तरफ केंद्र सरकार की सुदृढ़ता का मुदा है और दूसरी तरफ दिल्ली के नागरीकों को सुगम सुविधाएं उपलब्ध करवाना।

दिल्ली की राज्य सरकार को सदैव यह ध्यान रखना चाहिय कि वह सामान्य राज्यों के समान स्वायत्त नहीं हो सकती है, शासन के व्यावहारिक मापदण्डों के अनुसार होना भी नहीं चाहिये। दिल्ली राज्य सरकार लोकतान्त्रिक पारिस्थितिक विकल्प है। केंद्र सरकार का सुदृढ़ एवं पर्यवेक्षीय होना स्वाभाविक है, ऐतिहासिक परिपेक्ष्य से भी देखें तो दिल्ली की व्यवस्था कमजोर होने पर सम्पूर्ण राष्ट्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है, अतः दिल्ली की सरकार को शालीन तरीके से सहयोगी के रूप में कार्य करना चाहिये। दूसरी तरफ केंद्र सरकार को भी वित्तीय एवं प्रशासनिक मुद्दों पर संतुलन दृष्टि रखनी चाहिय। इस संदर्भ मे हमें सयुंक्त राज्य अमेरिका का अनुसरण करना चाहिये। वाशिंग्टन डी.सी. को स्वायत्त राज्य का दर्जा प्राप्त हे, परंतु संघात्मक सरकार के लिय उसने समस्यायें पैदा नहीं की है।

अंतर राज्य परिषद का पुनर्गठनः– अंतर राज्य परिषद

सविंधान के अनुछेद 263 मे वर्णित संवैधानिक निकाय हे, सरकारिया आयोग (1988) की सिफ़ारिशों को व्यावहारिक स्वरूप देते हुये राष्ट्रपति महोदय के आदेश से 28 मई 1990 को अंतरराज्यीय परिषद का गठन किया गया।

उक्त परिषद को राज्यों के बीच उत्पन्न होने वाले विवादों की जांच करने और सलाह देने, कुछ या सभी राज्यों या केंद्र और एक या अधिक राज्यों के समान हित वाले विषयों की पड़ताल और विमर्श का अधिकार है। उक्त परिषद पर ऐसे विवादों पर सिफारिशें देने तथा नीति एवं कार्य के बीच बेहतर समन्वय के लिए सुझाव देने का दायित्व भी है।[13] मई 2022 मे केंद्र सरकार ने सहकारी संघवाद को बढावा देने हेतु अंतर–राज्य परिषद का पुनर्गठन किया है। वर्तमान मे उक्त परिषद की सरंचना निम्नलिखित है–

सदस्य– सभी राज्यों के मुख्यमंत्री एवं छह केंद्रीय मंत्री। आमंत्रित सदस्य – दस केंद्रीय मंत्री स्थायी आमंत्रित सदस्य। गृह मंत्रालय ने अलग से अधिसूचना जारी कर अंतर–राज्य परिषद की स्थायी समिति का भी पुनर्गठन किया है । स्थायी समिति के पदेन अध्यक्ष गृह मंत्री होते हें।[14]

परिषद का उद्देस्य देश में सहकारी संघवाद को बढावा देने और समर्थन करने के लिय मजबूत संस्थागत ढांचा तैयार करना है। इसकी नियमित बैठकों का आयोजन कर परिषद एवं क्षेत्रीय परिषदों को मजबूत करना है। अंतर राज्य परिषद द्वारा केंद्र–राज्य ओर अंतर–राज्य सम्बन्धों के सभी लंबित एवं उभरते मुद्दों पर विचार करने की सुविधा प्रदान करती हे।

निष्कर्षतः वर्तमान भाजपा की सत्तारुढ केंद्र सरकार ने अपने पूर्व कार्यकाल एवं सतत जारी वर्तमान कार्यकाल हेतु अनेक येसे महत्वपूर्ण अभिनव कार्य किए हैं। जिससे प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से केंद्र–राज्य संबंध प्रभावित हुए हैं, इनमे से अधिकांश कार्य केंद्र एवं राज्य दोनों के हित में हैं, हालांकि कुछ कार्यों से राज्यों की स्वविवेकीय शक्तियाँ कम हुई हैं, परंतु राष्ट्र मजबूत हुआ है। केंद्र सरकार के निर्णय सहकारी संघवाद के अधिक निकट हैं परंतु विशुध्द संघ (Federation) के अनुरूप नहीं है। हमारे सविंधान निर्माताओं ने भी भारत को Federation या Co operative Federation का दर्जा नहीं दिया हैं, ''यूनियन'' शब्द का प्रयोग किया है। हमारे सविंधान निर्माताओं ने भी भविष्य को ध्यान में रखकर निर्णय लिया। संघ एवं परिसंघ पर आधारित कई राष्ट्र बिखर चुके हैं, पूर्व सोवियत ःस इसका सटीक उदाहरण हैं। अतः केंद्राभिमुखी भारत में पूर्ण स्वायत्त राज्य आदर्श एवं व्यावहारिक व्यवस्था है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *वसु, डी. – भारत का सविंधान : एक परिचय : पेंटिस हॉल इंडिया, प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1991 ।*
2. *कटारिया, सुरेन्द्र – भारत मे राज्य प्रशासन : मलिक एंड कम्पनी, जयपुर, 2009 ।*
3. *प्रो. के.सी. व्हेअर – आस्ट्रेलिया में जन्मे ब्रिटेन के प्रख्यात संविधान विशेषज्ञ हैं, ''उन्हे सर की उपाधि'' से ब्रिटिश सरकार ने सम्मानित किया । वह ब्रिटेन के ऑक्सफोर्ड विश्वविधालय के कुलपति (1964–1966) तक रहे। ^^Modern Constitution'' उनकी प्रसिद्ध पुस्तक है।*
4. *''द अपील ऑफ कोनसेस फ़ाउंडेशन" द्वारा 1998 मे सर्वश्रेष्ठ राजनेता के पुरस्कार–समारोह मे तत्कालीन राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायण का वक्तव्य।*
5. *वसु, डी. भारत का सविंधान : एक परिचय : पेंटिस हॉल इंडिया, प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1991*
6. *अवस्थी एवं अवस्थी भारतीय प्रशासन : लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा : 2006*
7. *NITI AAYOG की website :https://www.niti.gov.in से साभार*
8. *उपयुक्त ।*
9. *सांकेतिक नियोजन : फ्रांस की नियोजन अवधारणा हैं जिसमे सरकार दिशा निर्देशन पत्र तैयार करती हैं, सार्वजनिक क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र उक्त निर्देशन पत्र के तहत सामाजिक–आर्थिक नियोजन की योजनाओं का क्रियान्वयन करता हैं, सरकार मार्गदर्शन एवं समन्वयक की भूमिका मे रहती हैं ।*
10. *जी.एस.टी. परिषद की वेबसाइट www.gstcouncil.gov.in से साभार ।*
11. *https://en.m.wikipedia.org पर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सी.बी.आई.) का विवेचन ।*
12. *www.aajtak.in कोलकाता, 07 जून 2019।*
13. *कटारिया, सुरेन्द्र – भारत मे राज्य प्रशासन : मलिक एंड कम्पनी, जयपुर ।*
14. *गृह मंत्रालय की वेबसाइट से जारी नोटिफ़िकेशन।*

प्रभा खेतान का उपन्यास 'छिन्न.मस्ता' : आधुनिक स्त्री के व्यक्तित्व की स्थापना

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद खीचड़
सहायक आचार्य, राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

सामान्यतः 'आधुनिकता' के अर्थ को फैशन और नयेपन से जोड़ दिया जाता है। यह 'आधुनिकता' का ठीक अर्थ नहीं है। 'आधुनिकता' का सीधा सम्बन्ध तर्क, विचार और परिवर्तन से है।

प्रभा खेतान के 'छिन्न–मस्ता' उपन्यास में आधुनिक स्त्री के व्यक्तित्व की खोज और स्थापना का सफल प्रयास किया गया है। 'छिन्न–मस्ता' की प्रिया जब आर्थिक स्वावलम्बी जीवन जीने की कोशिश करती है, स्वयं का व्यवसाय करती है तो उसकी राह में न केवल परिवार बल्कि समाज की तरफ से बाधाएँ उत्पन्न की जाती हैं। आर्थिक स्वावलम्बन की तरफ बढ़ती प्रिया जब अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व की घोषणा व्यावहारिक रूप से करती है तो उसका पति, परिवार और समाज उसे घृणा की दृष्टि से देखता है। स्त्री का अपनी प्रतिष्ठा और आत्म सम्मान, सामाजिक स्वीकृति का विषय नहीं बनता है। अच्छी पत्नी, अच्छी माँ, अच्छी बहू न बन पाने का अपराध बोध समाज के द्वारा लगातार स्त्री के मन में पैदा किया जाता है। परिवार के मोर्चे पर सफल होना ही स्त्री के जीवन का उद्देश्य माना जाता है।

संकेताक्षर : *आधुनिकता, अवधारणा, रूढ़ि, परम्परा, मनोवैज्ञानिक, विमर्श, महत्वाकांक्षा, दैहिक, अपराधबोध।*

आधुनिकता शब्द स्वयं अपने अर्थ की सही–सही व्याख्या की स्थापना की चुनौती से घिरा हुआ है। अधिकतर, मात्र परम्परा के विरोध और प्राचीनता के परित्याग को ही 'आधुनिकता' मान लिया जाता है। 'आधुनिकता' के अर्थ के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न हमारे समक्ष होते हैं। 'आधुनिकता' का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है–" 'आधुनिक' शब्द संस्कृत के 'अधुना' शब्द से बना है जिसका अर्थ होता है– इस युग का। 'हलायुद्ध कोश' में इसे 'अस्मिन काले' कहा गया हैं।"[1] अंग्रेजी में इसका पर्याय 'मॉडर्न' है, जिसका अर्थ भी है– ''वर्तमान समय का, हाल का, नये फैशन का।''[2] डॉ. नरेन्द्र मोहन के अनुसार– ''आधुनिकता गतिशील आधुनिक स्थित है जिसका स्वभाव उभरना नहीं निरन्तर बदलना है।''[3]

इस प्रकार 'आधुनिकता' एक निरन्तर गतिशील अवधारणा है। किसी भी समाज के समक्ष दो शब्द या स्थितियाँ रहती हैं, पहली परम्परा व दूसरी रूढ़ि। रूढ़ि एक जड़ स्थिति है, अर्थात् एक गन्दे तालाब की भाँति जिसमें जल सदैव स्थित रहता है। धीरे–धीरे वह जल सड़ाँध देने लगता है। इसके विपरीत परम्परा एक गतिशील अवधारणा है। एक नदी के जल के समान जो निरंतर चलायमान रहकर अपनी स्वच्छता को बरकरार रखती है। परम्परा में युगानुरूप परिवर्तन की सम्भावना बनी रहती है। कह सकते हैं कि परम्परा जब परिवर्तनों को अस्वीकार करने लगे तो वह रूढ़ि में बदलने लगती है। इस प्रकार रूढ़ि एक नितान्त त्याज्य स्थिति है। इसमें अपरिवर्तन की स्थिति रहती है। अर्थ यह कि, पूर्वजों नें ऐसा किया इसलिए हमें भी ऐसा करना पड़ेगा। यह एक दमघोंटू धुएँ के समान प्रतीत होता है। ऐसा धुआँ जिसमें व्यक्ति के प्राण भी न जाएँ, परन्तु जीवन भी न रहे। दूसरी और परम्परा विचारों में परिवर्तन की प्रतीक है। इससे कोई भी समाज सच्चे अर्थों में आधुनिक बनता है।

प्रभा खेतान का उपन्यास ''छिन्न–मस्ता'' आधुनिक स्त्री के व्यक्तित्व की खोज और स्थापना का सफल प्रयास है। उपन्यास में प्रिया अपने होने का अर्थ खोजती हुई अपने जीवन की राह स्वयं चुनती है। प्रिया का परिवार जिस सम्पन्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, वहाँ पैसे की कमी नहीं, करोड़ों का व्यवसाय है, हीरे जवाहरात हैं, मौज–मस्ती

के लिए विदेश यात्राएँ हैं, महँगी शॉपिंग के अवसर हैं। ऐसे परिवार में स्त्री का आर्थिक स्वावलम्बन परम्परागत मस्तिष्क में प्रश्न खड़े करता है– ''और माँ हम लोगों को रुपयों की तो जरूरत नहीं।''[4] ''अब परिवार को आर्थिक सहयोग देने की भावना मात्र स्त्री को आर्थिक स्वावलम्बन की ओर प्रेरित नहीं करती वरन् उसके पीछे सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारण भी महत्वपूर्ण हैं। अपनी प्रतिभा का उपयोग अपने लिए पद–प्रतिष्ठा प्राप्त करना, अपनी अलग पहचान बनाने की दृष्टि भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है, जो इससे पूर्व कम देखने में आती थी।''[5]

जब स्त्री स्वयं का व्यवसाय करना चाहती है, अपना पैसा बनाना चाहती है, पूँजी की बनी बनाई व्यवस्था को तोड़ती है–प्रश्न खड़े करती है तब परिवार की भूमिका को 'छिन्न–मस्ता में रेखांकित किया गया है। प्रिया ने जब अपने लिए पैसा कमाना चाहा, सजा उसके हिस्से में आनी ही थी। उसे दो में से एक चुनने का विकल्प मिला– परिवार अथवा व्यवसाय। प्रिया ने व्यवसाय चुना। स्त्री को महत्वाकांक्षी होने के अपराध की सजा मिलती है– ''मैं सीरियस हूँ फिर कहता हूँ यदि आज लन्दन गई तो मेरे घर में तुम्हारी जगह नहीं। यह भी साली कोई जिन्दगी है, जब देखों तब बिजनेस।''[6] घर नरेन्द्र का है, उसमें प्रिया रहे या नहीं, यह निर्णय मात्र नरेन्द्र का अधिकार है– ''फिर सुन लो, यहां मत आना। आओगी तो मै धक्के देकर बाहर निकलवा दूँगा।''[7]

पति के धनाढ्य परिवार में, पति के नाम से ही पहचान होना प्रिया को स्वीकार्य नहीं, उच्च वर्ग के दिखावटी जीवन के मध्य वह सहज नहीं होती, बचपन व किशोरावस्था में माता–पिता के परिवार का उसके प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार और रवैया भी कहीं इसके लिए जिम्मेदार है। प्रभा खेतान उच्चवर्गीय सामन्ती परिवेश के कच्चे चिट्ठे खोलती है– ''जहाँ स्त्री के पास पैसा है, जेवरात है, महँगी पार्टियाँ हैं जिसमें पैसा खर्च किया जा सकता है, ब्लू फिल्म देखी जा सकती है, जेवर पहने जा सकते हैं। यदि व्यवसाय के लिए उन जेवरों को बेचना चाहे तो संयुक्त परिवार की सम्पति के कारण कोई सम्भावना नहीं। व्यक्ति के निजी कोने पर उसका कोई अधिकार नहीं, उसकी अभिरूचियों का कोई सम्मान नहीं, वह कपड़ों पर खर्च कर सकती है, किताबों पर नहीं। चूँकि कमाती नहीं इसलिए गरीब नौकर की मौके पर मद्द का हक उसे नहीं। अपने सिद्धान्तों के क्रियान्वयन, मानवीयता की भावना के तहत यदि कुछ करना चाहे तो स्त्री को कमाना होगा अथवा गुलाम की तरह पति की दया पर जीवित रहना होगा।''[8]

प्रिया कैरिअर के प्रति सचेत प्रारम्भ से नहीं, पति का उच्च वितवर्गीय होना भी प्रिया के पक्ष में नहीं जाता। अनायास जब उसे पति के व्यवसाय में डमी पार्टनर (स्वीपिंग पार्टनर) बनने का मौका मिलता है, तो वह अपना रास्ता निकाल लेती है। 'अपना व्यवसाय' 'अपना पैसा' बनाने के लिए खून–पसीना एक करती है, और देश विदेश में अपना व्यवसाय फैलाने में सफल होती है और राष्ट्रपति पुरस्कार से नवाजी जाती है। अरविन्द जैन स्वीकार करते हैं कि– ''शायद पहली बार हिन्दी उपन्यास की नायिका परिवार, पूँजी और परम्परा की चौखट लाँघ देशी–विदेशी सभी सीमाओं के उस पार तक 'स्त्री के पक्ष में वकालत' के साथ– साथ एक खतरनाक बौद्धिक विमर्श का जोखिम भी उठाती है।''[9]

व्यक्ति के तौर पर बड़ा होना और हर एक का अपनी प्रतिभा का भरपूर दोहन करने का तर्क परम्परागत परिवारों में समझा या समझाया नहीं जा सकता। बौद्धिक क्षमता का उपयोग होना चाहिए अथवा 'काम' स्त्री के लिए जीवनी शक्ति हो सकता है, यह न प्रिय के पिता का परिवार समझता है न पति का। नरेन्द्र तो यह स्वीकार करने को तैयार नहीं कि प्रिया में कोई प्रतिभा है, वह जीनियस है। ''स्त्री यदि जीनियस नहीं है, तब भी क्या साधारण औरत का अपनी तरह से जीने का अपने लिए रास्ता खोजने का अधिकार नहीं। नरेन्द्र यह भी नहीं स्वीकार करना चाहता है कि व्यवसाय प्रिया के लिए आइडेन्टी का विषय है।''[10] वह प्रिया के व्यवसाय को या तो रुपए की हवस समझता है अथवा अकेले मौज–मस्ती करने का साधन। प्रिया की उद्दाम महत्वाकांक्षाओं में वह सेक्सुअल फ्रस्टेशन खोजता है। ''जब तक प्रिया नरेन्द्र के अधीन रहती है, सब स्वीकृत था किन्तु कार्य जगत में जब वह स्वतन्त्र निर्णय लेने वाली, पत्नी की भूमिका नहीं निभा सकी, तब पत्नी में खामियाँ नजर आने लगती हैं।''[11]

स्त्री की चेतना जहाँ विकसित होने लगती है, परम्परागत व्यवस्थाएँ चरमराने लगती हैं, स्त्री की महत्वाकांक्षाएँ अस्वीकार्य होने लगती हैं। यदि स्त्री अपने व्यवसाय में व्यस्त है, घर में समय नहीं दे रही, पति की दैहिक जरूरतों को पूरा नहीं कर रही, तब

बिजनेस का औचित्य परिवार नहीं समझता। अच्छी स्त्री की परम्परागत भूमिका से भिन्न स्त्री–छवि न परिवार को स्वीकार्य है न ही समाज को। अपने लिए जगह बनाती स्त्री से व्यवस्था को भी खतरा है, इस 'घरफोड़' स्त्री से अपने परिवार को बचाकर रखना चाहता है, समाज– ''घृणा से जलती हुई आँखें, इस औरत को हम कैसे अपने घर बुलाएँ? कैसे सम्मान दें? कल हमारी भी बहू–बेटियाँ ऐसे ही कदम उठाएँगी।''[12] ''नरेन्द्र की पत्नी बिल्कुल आवारा हो गई है। ऐसी घर फोड़ औरत को सजा मिलनी चाहिए। एक औरत लड़कर कुछ हासिल कर लेती है तो दूसरी औरतें भी तो उन्ही रास्तों पर चलेंगी।''[13]

स्त्री का अपनी प्रतिष्ठा और आत्म सम्मान, सामाजिक स्वीकृति का विषय नहीं बनता। अच्छी पत्नी, अच्छी माँ, अच्छी बहू न बन पाने का अपराधबोध लगातार स्त्री के मन में पैदा किया जाता है। परिवार के मोर्चे पर सफल होना ही स्त्री के जीवन का उद्देश्य है– ''प्रिया जानती है कि व्यवस्था तोड़ने वाली स्त्री को समाज सौ कोड़े लगाता है।"[14] यह सच है कि इस अपराध बोध से निकलने में प्रिया को वक्त लगता है, किन्तु वह इस अपराध बोध से बाहर आने को सम्भव बनाती है और इस सत्य को प्राप्त करती है कि– ''मृत सम्बन्धों को ढोने में जितनी ताकत लगती है, उससे एक चौथाई ताकत में व्यापार किया जा सकता है। भले ही अपने पैरों पर खड़ी एक औरत को स्वीकार करने में अभी अपने समाज को समय लगे।"[15]

'सुरक्षा और व्यवस्था का सम्मोहन' जिसके कारण प्रिया निरन्तर अपने को दोहरे–तिहरे संघर्ष का अंग बनाए रहती है, खत्म होने की सम्भावना बनाती है। राजेन्द्र यादव का विचार है कि– ''प्रतिभा और अस्मिता से लैस प्रिया पहली नारी है जो सामाजिक चुनौतियों की तरह उभरती है।"[16]

प्रिया अपने व्यवसाय के उत्तराधिकारी के रूप में अपने ससुर की अवैध सन्तान नीना को चुनकर बेहतर विकल्प स्वीकार करती है, वहीं नीना, उसकी माँ और अपने माध्यम से 'केवल स्त्री परिवार' की सम्भावना को भी जन्म देती है। यद्यपि शुरुआती तौर पर किसी पुरुष की कमी उसे खलती है लेकिन शीघ्र ही स्वीकार करती है कि– ''पुरुष की कोई भूमिका मुझे परिवार में लगती नहीं।"[17]

उत्तराधिकार की स्त्री परम्परा का संकेत प्रभा खेतान 'छिन्न–मस्ता' में देती है, किन्तु नीना के विवाह कर जर्मनी जाते ही स्त्री की बनाई सम्पत्ति, व्यवसाय को आगे बढ़ाने वाले प्रश्न पुनः खड़े हो जाते हैं। सारे संघर्षों और उपलब्धियों पर पुनः सोचना प्रारम्भ हो जाता है। जब छोटी माँ कहती है, बेटी तो पराया धन होती है– ''नीना पराया धन है और उसे ससुराल जाना ही है।"[18] यदि प्रभा खेतान उत्तराधिकार बनाम पुत्री अधिकार की परम्परा का विकल्प ही नहीं स्वीकारना चाहती है, तब प्रिया के व्यवसाय का भविष्य क्या होगा? प्रभा खेतान कोई अन्य विकल्प नहीं सौंपती। स्त्री उत्तराधिकारी के अभाव में सम्भवतः वह संजू के पास जाएगा। पूँजी पर पुरुष के अधिकार व वर्चस्व को पोषित करेगा और प्रारम्भ में खड़ा प्रश्न पुनः अनुत्तरित हो जाएगा। स्त्री और पुरुष की आर्थिक समानता में अभी हजार वर्ष और लगेंगे।

नीना का व्यक्तित्व विशिष्ट है। लॉरेटो में बचपन से अब तक पढ़ी हुई उस लड़की में गजब का खुलापन था। कहीं कोई कुंठा नहीं। सहज सीधी, आर से पार बातें करने वाली। उसे क्या करना है अच्छी तरह जानती थी– ''देखो भाभी, पापा चाहते हैं कि मेरी शादी हो जाए लेकिन मैं नहीं करूँगी। मैं पहले अपने पैरों पर खड़ी होऊँगी।"[19] वो ग्रैन्ड होटल में इंटरव्यू देकर आई है और उसे पूरा विश्वास भी है कि नौकरी उसे मिल जायेगी। नीना अपने पापा की इच्छा–अनिच्छा का भी ख्याल नहीं रखती है। वो अपने आपको नाजायज संतान मानती है। उसका मानना है– ''जिंदा रहने और अपनी लड़ाई स्वयं लड़ने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि हम अपमान और वंचना को भी याद रखें। मुझे आप ये सब 'चुप चुप रहो' वाली बातें न सिखलाएँ।"[20] ''नीना के लिए आग हो या पानी, वह सब कुछ को जिंदगी का धर्म मानती है। उसके जीवन की अपनी लय है। ऐसा नहीं कि अकेलापन उसे नहीं चुभता पर वह हर तूफान का हँसकर स्वागत करती है और निर्भय होकर हँसती है।"[21]

संक्षेप में 'छिन्न–मस्ता' उपन्यास एक ऐसी आधुनिक नारी का आख्यान है जो समाज की जर्जर मान्यताओं से भी और पुरुष की प्रताड़नाओं से भी टूट जाने की हद तक पहुँचकर भी नहीं टूटती है। वह पुरातन शक्तियों के लिए चुनौती बनकर एक नई राह पर चल पड़ती है और यहाँ से आरम्भ होती हैं उसकी आन्तरिक और बाहरी यात्राएँ, समाज से संघर्ष का एक अटूट सिलसिला। बीच–बीच में वह शिथिलता अनुभव जरूर करती है लेकिन उसके सामने एक लक्ष्य है– वह लक्ष्य

जर्जर मान्यताओं को ध्वस्त करने का एक आग्रह या शक्ति से जीने की चाह भर है। इसी प्रयास में वह अपनी निरीहता से उबरती है। अपनी खोई हुई अस्मिता पुनः प्राप्त करके एक सबल नारी के रूप में उपस्थित होती है। संक्षेप में कहें तो प्रिया के माध्यम से लेखिका ने नारी स्वातंयिं की भावना का वास्तविक रूप उद्घाटित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *जयशंकर जोशी (सम्पादक)– हलायुद्ध कोश, पृ.सं.– 115*
2. *एडीटर अर्नेस्ट बीकली – न्यू जेन डिक्सनरी, वॉल – 2, पृ.सं.– 1577*
3. *डॉ नरेन्द्र मोहन – आधुनिकता और समकालीन रचना संदर्भ (प्रस्तावना) पृ.सं.– 11*
4. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 15*
5. *प्रमिला कपूर – कामकाजी भारतीय नारी, राजपाल एंड संस 1978, पृ.सं.– 59–60*
6. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 14*
7. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 14*
8. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 194*
9. *अरविन्द जैन – औरत, अस्तित्व और अस्मिता, पृ.सं. – 56*
10. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 157*
11. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 203*
12. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 200*
13. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 206*
14. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 187*
15. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 208*
16. *राजेन्द्र यादव – आदमी की निगाह में औरत, पृ.सं.– 230*
17. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 222*
18. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 219*
19. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 145*
20. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 145*
21. *प्रभा खेतान – छिन्न–मस्ता, पृ.सं.– 185*

ISSN 2277-5587

धार्मिक व स्थापत्य कला का वैभव : 'रणकपुर जैन मन्दिर'

खुशबू जैन
शोधार्थी, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

मध्यकालीन राजस्थान में जैन धर्म का बहुआयामी वैभव सम्पन्न इतिहास राजस्थान की सांस्कृतिक विरासत की एक अमूल्य धरोहर है। मध्ययुगीन जैन मन्दिर, मूर्तियां एवं स्मारक तत्कालीन धर्म, सभ्यता एवं संस्कृति के दर्पण है। मन्दिर सांस्कृतिक वैभव की पराकाष्ठा के प्रतीक है। धर्म और दर्शन उनकी आधारशिला है। स्थापत्य कला के वे सिरमार है। राजस्थान में स्थित 'रणकपुर' जैन धर्म के पांच प्रमुख तीर्थ स्थलों में से एक है। यह स्थान खूबसूरती से तराशे गए प्राचीन जैन मन्दिरों के लिए प्रसिद्ध है। 'रणकपुर' मन्दिर जैन धर्म में आस्था रखने वालों के साथ-साथ वास्तुशिल्पी रखने वालों को भी यह जगह बहुत भाती है।

संकेताक्षर : *रणकपुर जैन मंदिर, कला, स्थापत्य, धर्म, तीर्थ।*

पश्चिम रेलवे की छोटी लाइन पर आबू रोड़ व अजमेर के बीच फालना से 22 मील तथा छोटी सादड़ी से 6 मील दूरी पर स्थित रणकपुर जैन मन्दिर उत्तरी भारत का विशिष्ट श्वेताम्बर जैन तीर्थ ही नहीं अपितु कला तीर्थ भी है।[1]

रणकपुर जैन मन्दिर का इतिहास

आचार्य सोमसुन्दरसूरि विक्रम की 15 वीं सदी के एक प्रभावशाली आचार्य थे। श्रेष्टी धरणाशाह रणकपुर के समीपस्थ नदियां गांव के निवासी थे बाद में वे मालगढ़ में जा बसे थे। इनके पिता का नाम श्रेष्टी कुरपाल, माता का नाम रत्नाशाह था। वे पोरवालवंशीय थे। तत्कालीन प्रभावक पुरुष जैन आचार्य सोमसुन्दुरसूरि जी के संपर्क से धरणाशाह विशेष धर्मपरायण बने। अपनी कुशाग्र बुद्धि कार्यशक्ति और राजनैतिक क्षमता के बल पर वे मेवाड़ के राणा कुंभा के मंत्री बने थे।

किसी शुभ क्षण में मंत्री धरणाशाह के हृदय में भगवान ऋषभदेव का एक भव्य मंदिर बनवाने की भावना जगी। एक जनश्रुति के अनुसार मंत्री धरणाशाह ने एक बार रात्रि के समय सुन्दर स्वप्न देखा और उसमें उन्होंने स्वर्गलोक के नलिनीगुल्म विमान के दर्शन किये। नलिनीगुल्म विमान स्वर्गलोक का सर्वांग सुन्दर विमान माना जाता है। 'धरणाशाह' ने निश्चय किया कि मुझे ऐसा ही मनोहारी जिन प्रसाद बनवाना है। फिर तो उन्होंने अनेक शिल्पियों से मंदिर के नक्शे मंगवायें। आखिर मुन्डारा गांव के निवासी शिल्पी देपा का बनाया हुआ चित्र श्रेष्टी के मन में समा गया।

मंत्री धारणाशाह ने राणा कुम्भा के पास मंदिर के लिए जमीन की मांग की। राणाजी ने मंदिर के लिए उदारता से जमीन भेंट दी ओर साथ ही साथ वहां नगर बसाने की भी सलाह दी। इस प्रकार मंदिर के साथ-साथ नगर भी खड़ा हुआ। राणा के नाम पर ही उस नगर का नाम 'रणकपुर' रखा गया। बाद में वही 'रणकपुर' के नाम से अधिक प्रसिद्ध हुआ।[2]

रणकपुर जैन मन्दिर का निर्माण कार्य– आज से करीब 600 वर्ष पुर्व 1446 विक्रम संवत् में इस मंदिर का निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ था जो 50 वर्षों से अधिक समय तक चला। 'जैन सर्व तीर्थ संग्रह' के अनुसार इस मन्दिर के निर्माण पर धरणाशाह ने लगभग 99 लाख रूपए व्यय किए थे।[3]

आदीश्वर प्रभु की प्रतिमा

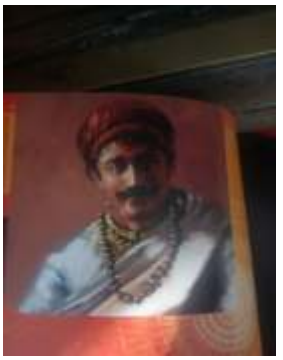

सेठ धरणाशाह का काल्पनिक फोटो

आदीश्वर जी प्रतिष्ठा संवत् 1496 में आचार्य देव सोमसुन्दुरसूरि जी महाराज के वरद् हस्तों से सम्पन्न हुई थी। इसका जीणोद्धार सेठ की पीढ़ी की ओर से किया गया है और उसकी प्रतिष्ठा पूज्य आचार्य श्री उदयसूरीश्वर जी महाराज के हस्तों से संवत् 2009 फाल्गुन सुद पंचमी के दिन हुई थी।[4] इस मन्दिर के निर्माण कथा के चार मुख्य स्तम्भ है। आचार्य सोमसुन्दुरसूरि जी, मंत्री धरणाशाह राणा कुम्भा और शिल्पी देपा या देपाक। इन चारों की भावनारूप चार स्तम्भों के आधार पर शिल्पकला के सौन्दर्य की पराकष्ठा के समान इस अद्भुत जिन मन्दिर का निर्माण हो सका था।

रणकपुर जैन मन्दिर की बनावट

मन्दिर में 13 शिलालेख स्थापित है जिनमें सबसे महत्त्वपूर्ण वह शिलालेख है जो मंदिर के मुख्य द्वार पर लगा है। विक्रम संवत् 1496 के इस 3 फुट 3 इंच ऊंचे शिलालेख के अनुसार इसका निर्माण प्राग्वाट जाति के पोरवाल वंशी, महाराणा कुम्भा के प्रीति पात्र धरणाक सेठ ने अपने भाई रत्ना व पूरे परिवार के सहयोग से करवाया।

मन्दिर में स्थापित शिलालेख

यह मन्दिर 48000 वर्ग फुट जमीन पर निर्मित है। इसके तलीय भाग में सेवाड़ी का पत्थर प्रयुक्त हुआ है। शिखर की भीतरी भाग ईंटों से तथा मूर्तियां भी सोनणा के पत्थर से निर्मित है। मूलनायक आदिनाथ की भव्य प्रतिमाएं, श्वेतसंगमरमर (मकराना) की बनी हुई है यह प्रतिमा 5 फुट ऊंची व एक दूसरे की पीठ से लगी हुई, चारों दिशाओं में मुख किये हुए है। 24 सीढ़ी चढ़कर, चबूतरे पर सुन्दर कारीगरी की गई है। मंदिर में घुसते ही दोनों ओर तहखाने है जहां मुस्लिम आक्रमणों के समय सुरक्षा के लिए मूर्तियां रखी जाती होगी।

गुम्बद/मण्डप का चित्र

मन्दिर के मुख्य गृह में तीर्थकर आदिनाथ की संगमरमर की बनी चार विशाल मूर्तियां है। करीब 72 इंच ऊंची ये मूर्तियां, चार अलग दिशाओं की और उन्मुख है। इसी कारण इसे 'चतुर्मुखी मंदिर' भी कहा जाता है। इसके अलावा मन्दिर में 76 छोटे गुम्बुदनुमा पवित्र स्थान, चार बड़े पूजनस्थल है, साथ ही 24 मण्डप, 84 शिखर और 1444 स्तम्भ है। स्तम्भों का संयोजन इस प्रकार किया गया है कि मन्दिर में कहीं भी खड़े होने पर सामने की दिशा को देवकुलिका की प्रतिमा तथा उस दिशा के स्तम्भ एक पंक्ति में दिखाई देते है। इन स्तम्भों की ऊँचाई 40 फुट की और उसमें भी बहुत बारीक नक्काशी है।

मुख्य मन्दिर के चरणों तरफ उत्कीर्ण मूर्तियां में जनजीवन की झाकियां दिखाई देती है। संगीत के विभिन्न वाद्य, प्राकृतिक दृशवलियों, पौराणिक दृश्य, समकालीन, आभूषण, वेशभूषा आदि अत्यन्त सुन्दरता के साथ प्रस्तुत किए गए है।[5]

स्तम्भों के फोटों

प्रमुख शिखर

तोरण द्वार

अनेक मूर्तियों में कामातुर स्त्री व युग्म के अप्राकृतिक विलासी प्रयत्नों को अश्लीलता की सीमा तक दिखाया गया है। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. गोपीनाथ ने इसी कारण इस मन्दिर को वैश्या मन्दिर कहा है। पृथ्वी तल के मन्दिर के प्रत्येक द्वार के सामने सभा मण्डप के सामने एक छोटा मन्दिर है जो 'खूंट का मन्दिर' है जो क्रमशः चार मण्डपों के चार कोणों पर खूंट के मन्दिर है जो क्रमशः विक्रम संवत् 1503, 1507, 1511 एवं 1516 में बनकर तैयार हुए। सबसे बड़ा मण्डप द्वार के सामने है जिसकी छत पर नृत्य करती हुई, सुन्दर पुतलियां बनी है। उन्हें श्रृंगार करते, घुंघरू बांधते, नृत्य करते तथा वीणा एवं बांसुरी बजाते हुए प्रदर्शित किया गया है। उत्तरी द्वार की और एक अधूरा 'रणक स्तम्भ' है जिसके बारे में कहा जाता है कि इसे महाराणा कुम्भा ने बनवाया था। यह एक मन्दिर के आकार का है जिसके नीचे गज ओर नर थर है। मध्य भाग में अनेक प्रतिमाएं है जिनमें सहस्त्रफणा पार्श्वनाथ की प्रतिमा विशेष रूप से दर्शनीय है।[6] साथ ही इस मन्दिर के उत्तर की ओर रायण वृक्ष एवं भगवान ऋषभदेव के चरण है ये भगवान ऋषभदेव के जीवन तथा शंत्रुजय का स्मरण दिलाते है।

सहस्त्राफणा पार्श्वनाथ

ऋषभदेव के चरण

रायण वृक्ष

रणकपुर जैन मन्दिर का वर्तमान स्वरूप

भारतीय कला और साहित्य की रक्षा की दृष्टि से राजस्थान के जैन मन्दिरों में 'रणकपुर मन्दिर' का बड़ा ऐतिहासिक व गौरवमय स्थान है। मेरे द्वारा जब 'रणकपुर मन्दिर' की यात्रा की गई, उसके दौरान मैंने जो जानकारी प्राप्त की है वो इस प्रकार है–यह मन्दिर 600 साल पुराना महाराजा कुम्भा के काल में उनके मंत्री धरणाशाह के द्वारा निर्माण करवाया गया, जिसके लिए उन्हें 48000 वर्ग जमीन राणा कुम्भा द्वारा भेंट स्वरूप मिली। 'रणकपुर मन्दिर' का नक्शा मुण्डारा के निवासी शिल्पी के देपा द्वारा बनवाया गया, यहां के संगमरमर का पत्थर सोनना खेतड़लाजी से आया, जो रणकपुर से 40 किमी दूर है।

मन्दिर के नीचे 84 कमरे है जो वर्तमान में बन्द किए गए है। साथ ही 84 शिखर है जिस पर 84 ध्वजा चढ़ाई जाती है तथा कुल 1444 स्तम्भ है। 'रणकपुर मन्दिर' में पुजारी क्रमशः पृथ्वीराज की 18 वीं पीढ़ी के कुल आठ परिवार के 10 से 12 पुजारी पीढ़ी दर पीढ़ी मन्दिर के रख–रखाव प्रभु आदिनाथ की सेवा अर्चना में कार्यरत है इन्हें मन्दिर या ट्रस्टी की ओर से कोई मूल्य अथवा तनख्वाह नहीं मिलती है बल्कि जो पूजा अर्चना

के समय भक्तों द्वारा चढ़ावा चढ़ाया जाता है, वे उन्हें आपस में बांट लेते है। इसके अलावा भी 'आनन्द जी कल्याण जी पेढ़ी' द्वारा कुछ अन्य पुजारी भी नियुक्त किए गए है जिन्हें हर महीने तनख्वाह दी जाती है। तीर्थ के यात्रिक सुविधा से रह सके, इस हेतु एक पुराने ढंग की व तीन आधुनिक ढ़ंग की धर्मशालाएं भी बनी हुई है।

'रणकपुर मन्दिर' के प्रथम ट्रस्टी कस्तूरबाई लालबाई ग्रुप था जो 100 वर्ष तक रहा, उसके बाद वर्तमान में मन्दिर का ट्रस्ट आनन्द जी कल्याण जी पेढी को सुपुर्द कर दिया गया है। 'धरणाशाह' की अठाहरवीं पीढ़ी जो वर्तमान में मुम्बई में निवास कर रही है, उन्हीं के द्वारा प्रत्येक वर्ष भर में एक बार फाल्गुन सुदी व पंचमी तिथी के दिन मेला भरता है तथा मन्दिर के प्रमुख शिखर पर ध्वजा बड़ी धूमधाम से चढ़ाई जाती है। इस दिन अनेक जैन ऋद्धालुओं व विदेशियों का आगमन होता है। हाल ही में 2 से 3 वर्ष के अन्तर्गत रणकपुर के मुख्य मन्दिर में विदेशियों को प्रवेश नहीं करने दिया जा रहा है, जब मेरे द्वारा इसका कारण पूछा गया तो पता चला कि वे मांस मदिरा का सेवन करते है साथ में स्थानीय लोगों द्वारा यह भी ज्ञात हुआ कि 'रणकपुर मन्दिर' अब मन्दिर कम तथा पर्यटक स्थल या म्युजियम का रूप ले चुका है क्योंकि लोगों में धीरे-धीरे धार्मिक भावना कम देखी जा रही है। इसके बावजूद इस तीर्थ के दर्शनाथ आने वाले देश-विदेश के जैन जैनेत्तर यात्रियों की संख्या भी, उत्तरोत्तर बढती ही जाती है।

भक्ति और परम्परा के संगम का यह बेजोड़, अद्भुत व आश्चर्यजनक प्रभाव 'रणकपुर जैन मन्दिर' में देखने को मिलता है। 'रणकपुर जैन मन्दिर' राजस्थान की कला व संस्कृति का अद्भुत प्रदर्शन करवाता है।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मध्यकालीन राजस्थान में जैन धर्म : डॉ. श्रीमती राजेश जैन, पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, वाराणसी संस्करण प्रथम 1991-92, पृ. 251*
2. *श्री रणकपुर महातीर्थ : कर्नल गौतमशाह मैनेजर सेठ, आनन्द जी कल्याण जी आन्नद जी ट्रस्ट, अहमदाबाद, आठवां सवंद्धित संस्करण, दिसम्बर 2013, पृ. 193*
3. *राजस्थान जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन : मोहनलाल गुप्ता, भाग 2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004, पृ. 193*
4. *श्वेताम्बर जैन तीर्थ दर्शन हिन्दी : आचार्य श्री विजयसूरीश्वर एवं श्री विजय अमृत सूरीश्वर महाराज, भाग 1, श्री हर्ष पुष्पामृत जैन ग्रन्थामाला (लाखाबावला) जामनगर गुजरात, सन् 1999, पृ. 387*
5. *मध्यकलीन राजस्थान में जैन धर्म : डॉ. श्रीमती राजेश जैन, पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, वाराणसी संस्करण प्रथम 1991-92, पृ. 252, 253*
6. *राजस्थान जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन : मोहनलाल गुप्ता, भाग 2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004 पृ. 191, 192*
7. *मेरे द्वारा 'रणकपुर जैन मन्दिर' का निरीक्षण किया गया।*

कम्पनी अधिनियम 2013 में अंश पूंजी में कमी– प्रावधान, प्रक्रिया एवं अनुपालना

shodhshree@gmail.com

डॉ. हेमन्त कडूणिया
सहायक आचार्य, सेठ मथुरादास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा

शोध सारांश

किसी कम्पनी में आयगत अथवा पूंजीगत हानियां यदि बहुत अधिक एकत्रित हो जाती है और उनको संचयों से अपलिखित करना सम्भव नहीं होता है तो कम्पनी अपनी अंश पूंजी में कमी करने का प्रयास करती है। इस प्रकार का प्रयाय कम्पनी के हितधारियों को नुकसान पंहुचा सकता है। प्रस्तुत लेख में अंश पूंजी में कटौती हेतु कम्पनी अधिनियम 2013 एवं राष्ट्रीय कम्पनी न्यायाधिकरण (कम्पनी के अंश पूंजी में कमी करने की प्रक्रिया) नियम, 2016 के विभिन्न नियंत्रणीय प्रावधानों की व्याख्या की गई है।

संकेताक्षर : *पूंजी, अंश पूंजी में कमी, कम्पनी अधिनियम 2013, लेनदार सूची, राष्ट्रीय कम्पनी न्यायाधिकरण, विशेष प्रस्ताव।*

अंशों द्वारा सीमित या गारन्टी द्वारा सीमित और अंश पूंजी रखने वाली प्रत्येक कम्पनी अंश पूंजी में कमी कर सकती है। किसी कम्पनी की अंश पूंजी को कम करने के लिए कम्पनी के पास मेमोरेन्डम ऑफ ऐसोसिएशन के तहत शक्ति होनी चाहिए। यदि मेमोरेन्डम में अंश पूंजी को कम करने का कोई प्रावधान नहीं है तो मेमोरेन्डम को बदला जाना चाहिए ताकि अंश पूंजी में कमी करने की शक्ति उपलब्ध हो सके। उनकी शक्ति और प्राधिकारण के साथ कम्पनी अंशधारकों द्वारा सामान्य बैठक में अनुरोधित विशेष प्रस्ताव पारित कर सकती है और कम्पनी की अंश पूंजी को कम करने में आगे बढ़ सकती है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि विभिन्न परिस्थितियों में अंश पूंजी को कम करने की आवश्यकता उत्पन्न हो सकती है। इसमें संचित व्यापार हानि जैसे स्थिति शामिल हो सकती है। उपरोक्त के परिणामस्वरूप कम्पनी की मूल पूंजी खो सकती है या कम्पनी यह पा सकती है कि उसके पास अधिक संसाधन हैं जो वह लाभप्रद रूप से नियोजित कर सकती है। इन मामलों में कम्पनी की पूंजी को कम करने की आवश्यकता उत्पन्न हो सकती है। यह लेख राष्ट्रीय कम्पनी कानून अपीलीय न्यायाधिकरण (National Company Law Appellete Tribunal) द्वारा की जाने वाली प्रक्रिया पर प्रकाश डालता है।

अंशपूंजी में कमी के लिये कम्पनी अधिनियम 2013 के तहत आवश्यकता

1. अंश पूंजी में कमी के लिये बोर्ड की बैठक आयोजित करना।

2. धारा 66(1) के अनुसार अंश पूंजी में कमी नहीं की जायेगी, यदि कम्पनी द्वारा स्वीकार की गई किसी भी जमा राशि या उस पर देय ब्याज के पुर्नभुगतान में बकाया है। किसी भी चूक या ब्याज का भुगतान बकाया होने की सिथति में कम्पनी अपनी पूंजी को कम करने के लिए पात्र नहीं होगी।

3. यह अनिवार्य है कि कम्पनी के प्रत्येक लेनदार का ऋण या दावा या तो चुका दिया गया है या निर्धारित कर दिया गया है या सुरक्षित कर दिया गया है या उससे इसकी सहमति प्राप्त कर ली गई है।

4. राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण (कम्पनी की अंश पूंजी में कमी करने की प्रक्रिया) नियम 2016 के साथ पठित कम्पनी अधिनियम 2013 की धारा 66(1) के अनुसार, विशेष संकल्प के माध्यम से कम्पनी के सदस्यों के अनुमोदन एवं राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण से पुष्टि की आवश्यकता होती है।

5. धारा 66(3) के अनुसार अंश पूंजी में कमी के लिये कोई भी आवेदन ट्रिब्युनल द्वारा स्वीकृत नहीं किया जायेगा, जब तक कि कम्पनी द्वारा इस तरह की कमी के लिये प्रस्तावित लेखांकन उपचार धारा 133 या किसी अन्य प्रावधान में निर्दिष्ट लेखांकन मानकों के अनुरूप नहीं हो तथा साथ ही इस अधिनियम तथा कम्पनी अंकेक्षक द्वारा इस आशय का एक प्रमाण पत्र ट्रिब्युनल के पास दायर कर दिया गया है।

6. कम्पनी की आम सभा बुलाने तथा कम्पनी के अंशधारकों द्वारा अंश पूंजी में कमी के लिये विशेष प्रस्ताव पारित किया जायेगा।

अंश पूंजी में कमी की प्रक्रिया एवं प्रणाली

पहली बोर्ड बैठक

(a) अन्य बातों के साथ साथ कम्पनी की अंश पूंजी में कमी के प्रस्ताव विचार करने के लिए निदेशक मण्डल की बैठक आयोजित करना।

(b) आमसभा में अंशधारकों की सहमति के अधीन अंश पूंजी में कमी के लिये आवश्यक बोर्ड प्रस्ताव पारित करना। बोर्ड अंश पूंजी में कमी करने हेतु मेमोरेन्डम तथा आर्टिकल ऑफ एसोसिएशन में बदलाव (यदि आवश्यक हो) पर भी विचार करेगा।

(c) कम्पनी अधिनियम 2013 की धारा 102 की आवश्यकतानुसार सामान्य सभा का दिन, तिथि, समय तथा स्थान तय करने के लिये तथा आदेश के साथ सलंग्न व्याख्यात्मक विवरण के साथ आम बैठक बुलाने के प्रारूप आदेश को मंजूरी देने के लिये तथा कम्पनी सचिव/निदेशक को हस्ताक्षर करने के लिये अधिकृत करने तथा आम सभा का आदेश जारी करना।

(d) सामान्य सभा – निश्चित दिन पर आम सभा आयोजित की जायेगी और अंश पूंजी में कमी के लिये विशेष प्रस्ताव पारित किया जायेगा और कम्पनी के मेमोरेन्डम ऑफ एसोसिएशन में परिवर्तन को मंजूरी दी जाये।

कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास फॉर्म दाखिल करना (धारा 117)

आम सभा में विशेष प्रस्ताव पारित होने के 30 दिनों के भीतर कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास निम्न दस्तावेजों का साथ में लगाते हुये फॉर्म संख्या एमजीटी 14 फाइल किया जायेगा–

(1) व्याख्यात्मक विवरण के साथ एक विशेष संकल्प की प्रमाणित सत्य प्रति;

(2) बैठक की सूचना, सभी सदस्यों और सभी हितधारकों को सभी अनुलग्नकों के साथ भेजे गये आदेश की प्रति;

(3) संशोधित मेमोरेन्डम ऑफ एसोसिएशन एवं आर्टिकल ऑफ एसोसिएशन की एक मुद्रित प्रति;

(4) अल्प समय आदेश पर सहमति, यदि कोई हो।

(e) लेनदारों की सूची राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण (कम्पनी की अंश पूंजी में कमी करने की प्रक्रिया) नियम 2016

(1) यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि कम्पनी के लेनदारों का विवरण दर्शाने वाली लेनदार सूची वर्गवार उनके नाम, पते, राशि को दर्शाते हुए तैयार कर ली गयी है एवं तैयार है।

(2) सूची आवेदन किये जाने की तारिख के आस पास बनाई जानी चाहिए किन्तु 15 दिन से पूर्व की नहीं होनी चाहिए।

(3) लेनदारों की सूची को प्रबन्ध निर्देशक द्वारा प्रमाणित करने की आवश्यकता है या उसकी अनुपस्थिति की दशा में कम्पनी के दो संचालकों द्वारा जोकि सूची को सत्य एवं सही को प्रमाणित करे।

(f) द्वितीय बोर्ड बैठक – द्वितीय बोर्ड बैठक में बोर्ड द्वारा निम्न एजेन्डा को अनुमति/सहमति प्रदान की जायेगी –

- लेनदारों की सूची का अनुमोदन करना तथा प्रबन्ध निर्देशक या दो संचालकों द्वारा उसके प्रमाणीकरण को अधिकृत करना।
- कम्पनी की ओर से घोषणा करने के लिए एक निदेशक को अधिकृत करना।
- राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थित होने हेतु कम्पनी सचिव या संचालकों (तथा वकील अथवा काउन्सिल को भी) को अधिकृत करना तथा किसी सलाहकार को नियुक्त करना अथवा अन्य किसी पेशेवर को आवश्यकता होने पर नियुक्त करना।
- नोटिस भेजने और लेनदारों के अभ्यावेदन प्राप्त

करने के लिए एक अधिकारी को अधिकृत करना।

(g) निदेशक द्वारा घोषणा – कम्पनी के एक निदेशक द्वारा यह घोषणा की जायेगी कि आवेदन दाखिल करने की तिथि पर कम्पनी जमा की अदायगी अथवा उस पर ब्याज भुगतान में कोई बाकियात नहीं है।

(h) अंकेक्षक से प्रमाणीकरण

(1) कम्पनी के अंकेक्षकों से लेनदारों की सूची के सत्यापन का प्रमाण पत्र कि यह सूची कम्पनी के लेखों के अनुसार सही है।

(2) निम्नलिखित बिन्दुओं के सम्बन्ध में कम्पनी के अंकेक्षकों से प्रमाण पत्र –

- कि आवेदन दाखिल करने की तिथि पर कम्पनी की जमाओं की अदायगी अथवा उस पर ब्याज भुगतान में कोई बाकियात नहीं है।
- कि कम्पनी द्वारा अंश पूंजी में कमी हेतु किये जाने वाले लेखांकन व्यवहार धारा 133 अथवा अधिनियम के अन्य प्रावधानों में निर्धारित लेखांकन मानदण्डों के अनुसार है।

(i) राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थिति हेतु मेमोरेन्डम – कम्पनी को कानूनी पेशेवर के पक्ष में राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के फॉर्मेट में उपस्थिति मेमोरेन्डम को जारी करना होगा, साथ में बोर्ड प्रस्ताव की एक प्रति अथवा किसी वकील की नियुक्ति की दशा में वकालतनामा हस्ताक्षरित किया जायेगा।

(j) लेनदारों की सूची – जांच हेतु उपलब्ध करवाना – किसी कम्पनी को राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण (कम्पनी की अंशपूंजी में कमी करने की प्रक्रिया) नियम 2016 के नियम 2(2) में यह सुनिश्चित करना होगा कि लेनदारों की सूची जांच हेतु उपलब्ध करवाई जाये तथा कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में कारोबार के सामान्य घण्टों के दौरान प्रति उपलब्ध करवाना।

(k) राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के समक्ष आवेदन (फॉर्म आरएससी– 1) – विशेष प्रस्ताव के पास होने के 3 माह के भीतर अंश पूंजी में कमी पर राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण की अनुमति हेतु आवेदन तथा प्रस्तावित कार्यवृत को दाखिल किया जाना चाहिये।

(l) आदेश जारी करना (आरएससी – 2) या तो राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण देगा या निम्न को आदेश जारी करने हेतु सम्बोधित करेगा –

- आवेदन की प्रति के साथ फॉर्म संख्या आरएससी–2 केन्द्रीय सरकार तथा कम्पनियों के रजिस्ट्रार को।
- कम्पनी के लेनदरों को फॉर्म संख्या आरएससी–3 में।

(m) लेनदारों को आदेश भेजना (फॉर्म आरएससी–3) – यदि राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण को नोटिस भेजने की आवश्यकता के बिना लेनदारों को आदेश भेजने हेतु निर्देशित किया जाता है तो राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण द्वारा अनुमत निर्देशों की तारिख से 7 दिन या अन्य कोई निर्धारित अवधि में फॉर्म आरएससी–3 में लेनदारों को आदेश भेजा जायेगा।

(n) आदेश का प्रकाशन (फॉर्म आरएससी–4) – राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण कभी कभी आदेश के प्रकाशन की आवश्यकता को समाप्त कर देता है, इस सन्तुष्टि पर कि प्रत्येक लेनदार के ऋण या दावे का निर्वहन कर दिया गया है या निश्चित कर दिया गया है या सुरक्षित कर दिया गया है या लेनदारों से सहमति प्राप्त कर ली गई है।

यदि समाप्त नहीं किया जाता है तो राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के द्वारा निर्देश जारी करने के तिथि से 7 दिन के भीतर आरएससी–4 फॉर्म में आदेश के प्रकाशन का आदेश दिया जायेगा जो कि –

(1) जिस राज्य में कम्पनी स्थित है उस राज्य में अधिक संख्या में वितरित होने वाले अंग्रेजी अखबार में अंग्रेजी भाषा में;

(2) जिस राज्य में कम्पनी स्थित है उस राज्य में अधिक वितरीत होने वाले अखबार में मातृभाषा में या राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण द्वारा दिये गये निर्देशों के अनुसार किसी अन्य अखबार में।

(o) शपथ पत्र भरना (आरएससी–5) – आदेश जारी

होने तथा प्रकाशन के आदेश फॉर्म संख्या आरएससी 4 के आदेश की अनुपालना में 7 दिन के भीतर आरएससी 5 में आदेश की तामिल हेतु शपथ पत्र प्रस्तुत किया जायेगा।

(p) प्रतिनिधित्व का प्रस्तुतीकरण – राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण (कम्पनी की अंश पूंजी कम करने की प्रक्रिया) नियम 2016 के नियम 5(1) के अनुसार अभ्यावेदन या आपत्तियों मांगने की अवधि समाप्त होने पर यह जांचने के लिये कि क्या कम्पनी ने 7 दिनों के भीतर कम्पनी की प्रतिक्रियाओं के साथ अभ्यावेदन या आपत्तियां राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण को प्रस्तुत कर दी है।

(q) राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण द्वारा निर्देश यदि कोई हो – कभी कभी, राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण किसी भी जांच, निर्णय, आपत्ति को सुनवाई आदि के लिए निर्देश दे सकता है। कम्पनी को इस दशा में भाग लेते हुये निर्णय का अनुपालन करना होता है यदि कोई हो। यदि राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण ने उन लेनदारों के ऋण या दावों को सुरक्षित करने के लिये कोई निर्देश दिया है जिन्होनें पूंजी की प्रस्तववित कमी के लिए सहमति नहीं दी है, तो कम्पनी यह सुनिश्चित करेगी कि राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के निर्देशों का पालन किया जाये।

(r) कमी को मंजूरी देने वाला आदेश और कार्यवृत (आरएससी–6) – आवेदन के पक्षकारों को सुनने और सन्तुष्ट होने के बाद राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण फॉर्म आरएससी – 6 में कार्यवृत्त में आदेश पारित करेगा।

(s) राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के आदेश का प्रकाशन – कम्पनी को पूंजी में कमी की अनुमति का आदेश प्राप्त होने पर राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण द्वारा निर्देशित तरीके के अनुसार इसे प्रकाशित किया जायेगा।

(t) रजिस्ट्रार को आदेश प्रस्तुत करना – कम्पनी राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण के आदेश और उसके कार्यवृत को फॉर्म आईएनसी 28 में आदेश प्राप्त होने की तारीख से 30 दिनों की अवधि के भीतर रजिस्ट्रार को सौंप देगी।

(u) आदेश एवं कार्यवृत्त के पंजीकरण का प्रमाण पत्र (आरएससी–7) – रजिस्ट्रार आर एस सी –7 के रूप में आदेश और कार्यवृत्त के पंजीकरण का प्रमाण पत्र जारी करेगा।

उपरोक्त विश्लेषण से यह कहा जा सकता है कि यदि कोई कम्पनी अपनी अंश पूंजी में कमी करना चाहती है तो उसे कम्पनी अधिनियम 2013 एवं राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण (कम्पनी की अंश पूंजी कम करने की प्रक्रिया) नियम 2016 के नियमों का पालन अनिवार्य रूप से करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *भारतीय कम्पनी अधिनियम 2013*
2. *राष्ट्रीय कम्पनी कानून न्यायाधिकरण (कम्पनी की अंश पूंजी कम करने की प्रक्रिया) नियम 2016*
3. *कॉरपोरेट प्रोफेशनल टुडे, अपैल 16–22, 2022 निर्गमन आईएसएसएन 0975–9948*
4. *अमोआको.अदु, बी., राशिब, एम. एवं स्टेबिन्स, एम. (1992) पूंजीगत लाभ कर और समता मूल्य : पूंजीगत लाभ कर छूट की शुरूआत और कमी के लिए स्टॉक मूल्य प्रतिक्रिया का अनुभवजन्य परीक्षण, बैंकिग एण्ड वित्त जर्नलख 16(2), 275:287।*
5. *स्टल्ज, आर.एम.(1999), वैश्वीकरण, कॉर्पोरेट वित्त और पूंजी की लागत, जर्नल ऑफ एप्लाइड कॉरपोरेट फाइनेंस, 12(3),8–25।*
6. *विवयन, जेएल (2008), पूंजी संरचना निर्धारक : शराब उद्योग में फ्रांसीसी कम्पनियों का एक अनुभवजन्य अध्ययन, वाइन बिजनेस रिसर्च के इन्टरनेशनल जर्नल।*
7. *https://www.researchgate.net/publication/296261235_Statistical_analysis_leads_to_working-capital_reductions*
8. *https://www.researchgate.net/publication/251340910_Payout_Policy_in_Taiwan_Cash_Dividends_Repurchases_and_Capital_Reduction*

बाड़मेर जिले के ग्रामीण विकास में पंचायती राज व्यवस्था का योगदान

भजन लाल विश्नोई
शोधार्थी, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाडा

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् शुरुआती दौर में ही सरकार ने ग्रामीण विकास को अपना मुख्य लक्ष्य बनाया और ग्रामीण विकास से सम्बन्धित दायित्त्वों को अपने जिम्मे ले लिया। सरकार द्वारा ग्रामीण उत्थान की दिशा में कई कार्यक्रम चालू किए गए जैसे – देश की 2/3 जनता का अधिकार–पत्र, मुक्ति की इच्छा पत्र आदि। सरकार व ग्रामीण जनता को एक बार पुनः यह विश्वास होने लगा कि गाँव का अब पुनर्निर्माण सम्भव हो जायेगा। अनेक कारकों ने पंचायतीराज व्यवस्था के उद्‌भव एवं विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। भारत में पंचायतीराज व्यवस्था शुभारम्भ 2 अक्टूबर 1952 को किया गया। स्थानीय स्वशासन की दृष्टि से राजस्थान राज्य का विशेष स्थान है। स्वतंत्रता के बाद राजस्थान को जिला ईकाइयों में तथा जिले को स्थानीय शासन की दृष्टि से उपखण्डों और तहसीलों में बाटंकर स्थानीय स्वशासन को अमली जामा पहनाया गया। बाड़मेर जिला राजस्थान के संयुक्त राज्यों में जोधपुर रियासत के विलय के बाद 7 अप्रैल सन् 1949 को अस्तित्व में आया बाडमेर जिले को प्रशासनिक एवं स्वशासन की दृष्टि से छोटी–छोटी ईकाईयों में विभक्त किया गया। बाडमेर जिले की पंचायत समितियां सबसे अधिक उन्नतिशील अवस्था में है। क्योंकि यहाँ पर प्रत्येक ग्राम पंचायत को सड़क मार्ग, विद्युत और टेलीफोन से जोड़ दिया है जिससे शहर से गाँवों की निकटता बढ़ गयी है। लगभग सभी गाँवों में पेयजल स्त्रोतों की स्थिति अच्छी है और यहाँ पर शिक्षा की स्थिति में भी निरन्तर विकास हो रहा है।

संकेताक्षर : *पंचायती राज, स्थानीय स्वशासन, संविधान, सामुदायिक विकास, ग्राम पंचायत, पंचायत समिति, जिला परिषद, लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण।*

पंचायती राज व्यवस्था भारत की सबसे महत्त्वपूर्ण खोज है। दिसम्बर 1960 में भारत के प्रधानमन्त्री स्वर्गीय प. जवाहरलाल नेहरू ने राजपुरा (पटियाला) में भाषण देते हुए कहा था कि पंजाब तथा समस्त देश में तीन क्रान्तियां चल रही हैं : प्रथम – शिक्षा का प्रसार, द्वितीय कृषि के नये औजारों तथा तकनीकों का प्रयोग तथा तृतीय पंचायती राज की स्थापना। पंचायती राज के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि इसकी स्थापना गाँवों में की जा रही है तथा इसके द्वारा लोगों को अपनी मामलों का प्रशासन तथा अपने इलाके का विकास स्वयं करने की शक्ति दी जा रही है। इसके द्वारा लोग अपने गाँवों को उन्नत तथा आत्मनिर्भर बना सकेंगे। इसमें एक और विशेषता यह है कि पंचायती राज द्वारा गाँव के लोग आत्मनिर्भर तथा आत्मविश्वासी बन जायेंगे। इस क्रान्ति से गाँवों की शक्ति बढ़ेगी और ग्रामवासियों को नया जीवन मिलेगा और इन्ही से नये भारत का निर्माण होगा।[1]

स्थानीय स्वशासन की ग्रामीण व्यवस्था के अन्तर्गत पचांयती राज आता है। ग्रामीण जीवन में राजनीतिक जागरूकता लाने, ग्रामीण क्षेत्र में विकास की बागडोर अपने हाथ में लेने तथा व्यापक राजनीतिक भागीदारी के लिए पंचायती राज व्यवस्था स्थापित है। पंचायती राज व्यवस्था को लोकतन्त्र का पर्यायवाची माना है। लोकतन्त्र का वास्तविक सारांश यह है कि निरीह से निरीह व्यक्ति को सत्ता में भागीदारी प्राप्त हो, जनता ही शासकीय सत्ता का स्त्रोत है और वह ही इससे लाभान्वित होती है।

भारत में पंचायती राज व्यवस्था

भारत में पंचायती राज व्यवस्था प्राचीन काल से ही चली आ रही है। पंचायती राज के अन्तर्गत ग्रामीण जनता का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास उनके द्वारा स्वयं किया जाता है। ग्राम पंचायतों का अधिकार गांव के मकानों, मार्गों, बाजारों, श्मशानों, मन्दिरों, तालाबों तथा बंजर भूमि पर होता था। पंचायत गांव की रक्षा करती थी, झगड़े तय करती थी, सार्वजनिक सेवा सम्बन्धी कार्य करती थी, लगान वसूल करके राज्य के खजाने में जमा कराती थी।[2]

भारत में स्थानीय स्वशासन अपनी वर्तमान संरचना और कार्य प्रणाली में मूलतः ब्रिटिश शासन काल की देन है। ब्रिटिश शासन से पूर्व भारत में भी स्वायत्त शासन व्यवस्था थी, उसे अंग्रेजों ने नष्ट कर दिया और उसके स्थान पर अपनी पद्धति के समान भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन की व्यवस्था थी। इस प्रकार भारत की अपनी मौलिकता जाती रही और भारतीय स्थानीय संस्थाओं पर पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा। ग्राम पंचायतों का महत्त्व जाता रहा, ग्रामीणों के अधिकार छीन लिये गए, ग्राम असंगठित हो गए, प्राचीन भारतीय शासन की गौरवशाली परम्परा छिन्न-भिन्न हो गई और देश में अंग्रेजी पद्धति का श्रीगणेश हुआ।

इस परिवर्तन के कारण गांव के लोगों को भी सहायता के लिए केन्द्रीय सरकार पर निर्भर रहना पड़ता था, न्यायिक व्यवस्था में आए बदलाव के कारण गांवो में उपस्थित विवाद, प्रथाओं और लोकाचारों के आधार पर गांव में सुलझाने के बदले गांव के बाहर विदेशी शासन द्वारा निर्मित कानूनों के आधार पर निपटाए जाने लगे, इस प्रकार गांव के बाहर की संस्थाओं पर ग्रामीणों की निर्भरता बढ़ गई। फलस्वरूप गांव के नेतृत्त्व का अभाव हो गया और सामुदायिक वृत्तियों में दरारें आने लगी, ब्रिटिश शासकों ने गांव के बदले जिले को प्रमुख प्रशासनिक इकाई के रूप में स्थापित किया।

15 अगस्त 1947 को भारत की आजादी के बाद में स्थानीय स्वायत्त शासन में नवयुग का सूत्रपात हुआ। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान ही कॉंग्रेस स्थानीय संस्थाओं की प्रगति को अपना लक्ष्य बना चुकी थी। अतः लक्ष्य को व्यावहारिक रूप देने के लिए स्वतन्त्र भारत के संविधान में स्थानीय संस्थाओं के विकास पर विशेष बल दिया गया।[3]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार ने ग्रामीण पुनः निर्माण की योजना को प्राथमिकता के तौर पर अपने हाथों में लिया। इस परियोजना को अनेक नामों से पुकारा गया। जैसे – ''देश के दो-तिहाई जनता की आशा ओर सुख का अधिकार-पत्र'', ''मुक्ति का इच्छा-पत्र'' आदि उस समय सरकार और जनता दोनों को आशा थी कि यदि इस कार्य को सफलतापूर्वक सम्पादित किया जाए तो गांव में एक बार पुनः विकास को गति प्रदान की जा सकती है। स्वतन्त्रता के बाद भारत में पंचायती राज के उद्भव और विकास के कई कारक थे। इनमें चार कारक प्रमुख थे-

- गांधीजी की शिक्षाएं,
- राज्य के नीति-निदेशक तत्त्व,
- पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जन सहयोग पर बल एवं
- सामुदायिक विकास कार्यक्रम।[4]

संविधान के अनुच्छेद 40 के तहत पंचायती व्यवस्था को राज्य के नीति निर्देशक तत्त्वों के अन्तर्गत रखा गया है जिसमें यह कहा गया है कि ''यह अनुच्छेद राज्य से यह अपेक्षा करता है कि वह ग्राम-पंचायतों के गठन के लिए कदम उठाए जाएं, जो कि उनको स्वशासित इकाई के रूप में कार्य करने के योग्य बना सके।''[5]

आज भारत में ग्रामीण स्थानीय शासन की जो व्यवस्था विद्यमान है उसका श्रेय देश के प्रथम प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू को है। सरकार ने 1957 में सामुदायिक परियोजनाओं तथा राष्ट्रीय विकास सेवा अध्ययन समिति का गठन किया। उसके अध्यक्ष बलवन्त राय मेहता थे। इस समिति ने भारत में स्वशासन का विशेष रूप से अध्ययन करके वर्ष के अन्त में, अपने प्रतिवेदन में सुझाव दिया कि शक्ति को एक ऐसे निकाय को सौंप दिया जाय जो निमित्त हो जाने पर अपने क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत सम्पूर्ण विकास का भार अपने ऊपर ले ले। सरकार पथ प्रदर्शन, परीवीक्षण तथा उच्चस्तरीय आयोजन का कार्य अपने हाथों में सुरक्षित रखें और जहां आवश्यक हो वहां अतिरिक्त वित्तीय सुविधा प्रदान करें। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए समिति ने ग्रामीण स्थानीय प्रशासन के लिए त्रिस्तरीय व्यवस्था का सुझाव दिया –

गांव स्तर पर – ग्राम पंचायत,

ब्लॉक स्तर पर – पंचायत समिति, तथा

जिला स्तर पर – जिला परिषद्।

उपरोक्त तीनों में से सबसे अधिक प्रभावकारी ब्लॉक (खण्ड) स्तरीय निकाय को परिकल्पित किया। बलवन्त राय मेहता समिति ने इस खण्ड स्तरीय निकाय को पंचायत समिति का नाम दिया।

भारत में सामुदायिक विकास का शुभारम्भ 2 अक्टूबर 1952 को किया गया। भारत में पंचायती राज व्यवस्था त्रिस्तरीय है –

1. ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायतें,
2. खण्ड स्तर पर पंचायत समितियां और
3. जिला स्तर पर जिला परिषदें

सबसे निचले धरातल पर ग्राम पंचायत और सबसे ऊपर जिला परिषद् है। देहाती क्षेत्रों में इन स्थानीय संस्थाओं का ढाँचा सीढ़ीनुमा है। इस त्रिकोणात्मक तथा त्रिस्तरीय व्यवस्था द्वारा देश के ग्रामीण जीवन में एक नयी चेतना लाने का प्रयत्न किया गया है। सरकारी यन्त्र को विभाजित करके और सत्ता को बांट कर ग्रामीण भारत का पुनर्निमाण करने का यह एक सफल प्रयत्न है। तीन स्तरों की समूची व्यवस्था को सामुदायिक रूप में 'पंचायत राज' की संज्ञा दी जाती है। पंचायती राज में ग्रामीण आर्थिक विकास का दायित्त्व सरकार के साथ–साथ जनता की त्रिस्तरीय लोकतान्त्रिक संस्थाओं के हाथ में आ गया है। पंचायती राज व्यवस्था में त्रिस्तरीय स्वरूप इसलिए अपनाया गया है कि गाँव के मसले ग्राम पंचायत सुलझायेगी। जो उससे सुलझने सम्भव नहीं होंगे, उन्हें पंचायत समिति सुलझायेगी। पंचायत समिति अपने क्षेत्र का कार्य करेंगी जो उससे नहीं होगा उसे जिला परिषद् के सामने रखेगी। जिला परिषद् जिले के काम के साथ ही पंचायत समिति की कठिनाईयों को भी निपटायेगी। दूसरी तरफ जिला परिषद् की सलाह पंचायत समितियों को बराबर मिलती रहेगी। पंचायत समिति अपनी सलाह सूचना पंचायत को देगी। विधान सभा जो योजना और नीति बनायेगी, जिला परिषद् उन्हें अमल में लायेगी। विधान सभा का लोक सभा से सम्बन्ध है जो देश के लिए योजना बनाती है। इस प्रकार राज्य सरकार और संसद का सम्बन्ध जुड़ा हुआ है। पंचायती राज के ग्राम सभा का विधान सभा तथा लोकसभा तक विचारों का लेनदेन चलता रहता है। ग्राम सभा के कार्यो का असर लोकसभा तक पहुँचता है, इस तरह ज्ञान गंगा ऊपर से नीचे और कर्म की सुगन्ध नीचे से ऊपर पहुँचती है।[6]

बाड़मेर जिले का सामान्य परीचय

राजस्थान राज्य का बाड़मेर जिला पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर स्थित है। यह जिला 24.58 से 26.32 उतरी अक्षांश एवं 70.5 से 72.52 पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। बाड़मेर का कुल क्षेत्रफल 28387 वर्ग कि.मी. है जिसमें से ग्रामीण क्षेत्र का क्षेत्रफल 28341.99 वर्ग0 कि.मी. तथा शहरी क्षेत्रफल 45.01 वर्ग कि.मी. है तथा वन क्षेत्र 592. 28 वर्ग कि.मी. है।

वर्तमान बाड़मेर जिला राजस्थान के संयुक्त राज्यों में जोधपुर रियासत के विलय के बाद 7 अप्रैल सन् 1949 को अस्तित्व में आया। भारत विभाजन का असर इस जिले पर अधिक पड़ा। 210 किमी लम्बी सीमा पाकिस्तान से जुड़ जाने के कारण यह जिला अन्तर्राष्ट्रीय नक्शे पर उभर गया इसके उत्तर में जैसलमेर, दक्षिण में जालौर, पूर्व में पाली एवं जोधपुर जिला तथा पश्चिम में लम्बी सीमा पाकिस्तान से सटी हुई है।

एक क्षेत्र के दो बंटवारे जिसकी भाषा एक, पहनावा समान, खान–पान में फर्क नहीं, रहन–सहन में एक जैसा लेकिन दो देशों के दो वासी बन गया बाड़मेर क्षेत्र। बाड़मेर की सीमा पर पाकिस्तान ने दो बार हमले किये तो हमारे वीर सैनिकों के हाथों मुह की खाई। युद्धकाल में बाड़मेर ने जो धैर्य, साहस, निष्ठा का परिचय दिया व जगजाहिर बन गया। यहाँ के सूरवीरों ने मातृभूमि की रक्षार्थ प्राणों की बाजी लगाई। बाड़मेर का शहीद स्मारक इन्हीं वीरों की स्मृति दिलाता है। धोरीमन्ना व गुडामालानी अन्य जीवों व पेड़–पौधों की रक्षा के लिए जाने जाते है। यहाँ के विश्नोई लोग अपने प्राणों की बाजी लगाकर इनकी रक्षा करते हैं।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार बाड़मेर जिले की कुल जनसंख्या 2603751 है जिसमें पुरूषों की संख्या 1369022 तथा स्त्रियों की संख्या 1234729 है। यहां का जनसंख्या घनत्व 92 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। साक्षरता दर 57.49 प्रतिशत है, जिनमें पुरूष साक्षरता दर 72.32 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 41.03 प्रतिशत है।

बाड़मेर जिले में प्रशासनिक एवं स्थानीय स्वशासन

स्थानीय स्वशासन की दृष्टि से राजस्थान राज्य का विशेष स्थान है। स्वतंत्रता के बाद राजस्थान को जिला

ईकाइयों में तथा जिले को स्थानीय शासन की दृष्टि से उपखण्डों और तहसीलों में बाटंकर स्थानीय स्वशासन को अमली जामा पहनाया गया। इसी परिपेक्ष्य में बाडमेर जिले को प्रशासनिक एवं स्वशासन की दृष्टि से छोटी–छोटी ईकाईयों में निम्न प्रकार से विभक्त किया गया है –

- सांसद – 1 (श्री कैलाश चौधरी)
- जिला प्रमुख – 1 (श्री महेन्द्र चौधरी)
- जिला कलेक्टर – 1 (श्री लोक बन्धु)
- जिला प्रभारी मन्त्री – 1 (श्री सुखराम विश्नोई)
- नगर परिषद – 2 (बाड़मेर एवं बालोतरा)
- विधानसभा क्षेत्र एवं सदस्य – 7
  1. बाड़मेर – श्री मेवाराम जैन
  2. बायतु – श्री हरीश चौधरी
  3. गुड़ामालानी – श्री हेमाराम चौधरी
  4. सिवाना – श्री हमीर सिंह भायल
  5. पचपदरा – श्री मदन प्रजापत
  6. चोहटन – श्री पदमा राम
  7. शिव – श्री अमीन खांन
- उपखण्ड – 12 (बाड़मेर, बालोतरा, गडरारोड, सेडवा, बायतु, चोहटन, सिवाना, गुड़ामालानी, शिव, रामसर, सिणधरी एवं धोरीमन्ना)
- तहसील – 16 (बाड़मेर, पचपदरा, बायतु, चोहटन, सिवाना, गुडामालानी, शिव, सिणधरी, सेडवा, रामसर, धोरीमन्ना, समदड़ी, गिड़ा, गडरारोड, धनाउ एवं कल्याणपुर)
- पंचायत समिति – 21 (बाड़मेर, बाड़मेर (ग्रामीण), बालोतरा, बायतु, चोहटन, सिवाना, धोरीमन्ना, शिव, सिणधरी, आडेल, धनाउ, फागलिया, गडरारोड, गिड़ा, गुडामालानी, कल्याणपुर एवं पाटोदी)
- बाड़मेर जिला परिषद सदस्य – 37
- पंचायत समिति सदस्य – 389
- ग्राम पंचायत – 689
- सरपंच – 689
- वार्ड पंच – 4792

बाड़मेर जिले के ग्रामीण विकास में पंचायती राज व्यवस्था का योगदान

पंचायती राज की संस्थाओं ने बाड़मेर जिले के ग्रामीण विकास के विभिन्न क्षेत्रों में निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण कार्य किये हैं –

1. लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का केन्द्र बिन्दु

पंचायती राज व्यवस्था लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की आधारशिला है। इससे शासकीय अधिकारों एवं शक्तियों का विकेन्द्रीकरण हुआ और पंचायती राज संस्थाओं को ग्रामीण पुनर्निर्माण के लिए शक्तियां एवं वित्तीय साधन प्राप्त हुए।

2. स्थानीय संसाधनों के उपयोग का माध्यम

पंचायती राज संस्थाओं ने स्थानीय विकास के लिए स्थानीय संसाधनों का उपयोग किया है। स्थानीय निर्माण कार्य, स्थानीय सामग्री एवं स्थानीय श्रम से सम्पन्न करने का युग प्रारम्भ हुआ। पंचायती राज संस्थाओं ने निर्माण के लिए श्रमदान को महत्त्व देकर श्रम की गरिमा बढ़ाई।

3. प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था

राजस्थान में पंचायती राज की स्थापना के साथ ही पंचायत समितियों को प्राथमिक शिक्षा हस्तान्तरित कर दी गई है और अब प्रायः प्रत्येक पंचायत क्षेत्र में कम से कम एक प्राथमिक शाला की स्थापना कर दी गई है। प्राथमिक शिक्षा का प्रचार–प्रसार ग्रामीण विकास की प्राथमिक आवश्यकता है।

4. प्रौढ़ शिक्षा का प्रसार

प्राथमिक शिक्षा के साथ–साथ प्रौढ़ शिक्षा एवं अनौपचारिक शिक्षा का प्रबन्ध भी पंचायती राज की संस्थाएं कर रही हैं इससे अशिक्षा एवं निरक्षरता के उन्मूलन में पंचायती राज संस्थाओं की प्रभावी भूमिका सिद्ध होती है।

5. कृषि का विकास

पंचायती राज व्यवस्था ने किसानों को उन्नत बीज, खाद, कृषि के उन्नत औजार, कृषि की आधुनिक पद्धतियां, कीटाणुनाशक दवाएं, एवं कृषि प्रशिक्षण की व्यवस्था करके कृषि के विकास में महत्त्वपूर्ण अंशदान दिया है इसके अतिरिक्त पड़त भूमि को भी कृषि योग्य बनाया गया है। 2

6. सिंचाई के साधनों का विकास

सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत कुओं,

तालाबों तथा एनीकटों का निर्माण किया गया। इस निमित्त अनुसूचित जाति–जनजाति के सदस्यों और सीमान्त किसानों को अनुदान एवं ऋण भी दिये गये हैं।

7. पशुपालन के क्षेत्र में विकास

पशु धन ग्रामीण जीवन का अभिन्न अंग होता है। पंचायती राज संस्थाओं ने इस दिशा में अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये। जैसे पशु औषधालयों की स्थापना, पशु चिकित्सा के शिविरों का आयोजन, ऊन को श्रेणीबद्ध करना, सुधरा हुआ चारा तथा पशु खाद्य की व्यवस्था, दुग्धशालाओं की स्थापना और गाय, सांड, ऊँट, भेड़ तथा कुक्कुटादि तथा सुधरी नस्लों को कृत्रिम गर्भाधान के माध्यम से प्रस्तुत करना।

8. स्वास्थ्य तथा सफाई

पंचायती राज ने ग्रामीण अंचलों में स्वास्थ्य एवं सफाई को भी महत्त्व दिया, टीका लगवाने, परिवार कल्याण, औषधालय, प्रसूति केन्द्रों की स्थापना से गाँवों में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार किया।

9. कुटीर उद्योग धन्धों की स्थापना

बेरोजगारों एवं भूमिविहीन किसानों के लिए पंचायती राज संस्थाओं ने कुटीर उद्योग धन्धों में प्रशिक्षण के लिए ऋण की भी व्यवस्था की है और कुटीर उद्योग धन्धों की व्यवस्था के लिए ऋण की भी व्यवस्था की है।

10. सहकारी समितियां

किसानों को साहूकार के ऋण तथा ऊँचे दर से ब्याज से मुक्त कराने के लिए सहकारी समितियों तथा सहकारी समितियों के माध्यम से ऋण की व्यवस्था की गई है।

11. पोषाहार योजना

पोषाहार योजना से ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन बच्चों को लाभ हुआ है। 1965–66 में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से विद्यालयों में पोषाहार कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया।

12. ग्रामीण नेतृत्त्व का विकास

पंचायती राज संस्थाओं ने परम्परागत सामन्तवादी नेतृत्त्व से ग्रामीण जीवन को मुक्त करके स्थानीय स्तर पर ग्रामीण नेतृत्त्व का विकास किया। ग्रामीण नेतृत्त्व ने ग्रामीण जीवन के अभावों एवं विकास की इच्छाओं को अभिव्यक्ति तथा वाणी प्रदान की।

13. लोकतान्त्रिक प्रशिक्षण

पंचायती राज ने गाँवों को सामन्तवादी शोषण से मुक्त किया है। ग्रामीण स्थानीय संस्थाओं ने ग्रामवासियों को राजनैतिक शिक्षा, सामाजिक चेतना और लोकतान्त्रिक प्रशिक्षण प्रदान किया।

14. ग्रामीण विद्युतिकरण की योजनाएं

ग्रामीण जीवन को अन्धकार से मुक्त करने के लिये ग्रामीण विद्युतिकरण की योजनायें लागू की गई हैं। अनुसूचित जाति–जनजाति के सदस्यों के मौहल्लों में बिजली की सुविधा उपलब्ध कराई। प्राथमिकता के आधार पर किसानों को कुओं से सिंचाई हेतु बिजली के कनेक्शन दिये गये।

15. एकीकृत ग्रामीण विकास का माध्यम

सरकार ने ग्रामीण विकास की विभिन्न योजनाओं के स्थान पर प्रत्येक जिले में जिला ग्रामीण विकास एजेन्सी (डी.आर.डी.ए.) की स्थापना की हैं। इसका प्रमुख कार्य पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीण अंचलों का एकीकृत विकास करना है। इसके अन्तर्गत गांवों के सर्वांगीण विकास की योजनाओं को कार्यान्वित की जाती है। कृषि, सिंचाई के साधन, पशु धन, संवर्धन सहकारिता, ग्रामीण विद्युतिकरण, यातायात तथा सन्देश वाहन के साधनों का विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई ग्रामीण रोजगारों एवं कुटीर उद्योग धन्धों आदि का विकास एकीकृत ग्रामीण विकास का परम लक्ष्य है। भारत सरकार ने एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम की योजनाओं को 2 अक्टूबर, 1980, से सारे देश में लागू किया।

बाड़मेर जिले में प्रशासन गांवों एवं शहरों के संग अभियान[7]

राज्य सरकार द्वारा किसानों, ग्रामीणों तथा शहरी क्षेत्र की जनता की समस्याओं का मौके पर ही समाधान करने के लिए 'प्रशासन गांवों एवं शहरों के संग अभियान 2021' दिनांक 2 अक्टूबर, 2021 को माननीय मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत ने वर्चुअल रूप से गांधी जयन्ती के अवसर पर दोनों अभियानों का विधिवत प्रारम्भ किया। अभियान के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में जिले की प्रत्येक ग्राम पंचायत स्तर पर तथा शहरी क्षेत्र में नगर परिषद बाड़मेर, बालोतरा एवं यूआईटी कार्यालय में शिविरों का आयोजन किया गया। इस दौरान माननीय मुख्यमंत्री ने इस अभियान को जनसेवा का शाश्वत अनुष्ठान बनाने का आह्वान किया। वर्चुअल कार्यक्रम के दौरान तत्कालीन राजस्व मंत्री हरीश चौधरी भी मौजूद रहे। जिला मुख्यालय पर

विधायक मेवाराम जैन, जिला प्रमुख महेन्द्र चौधरी, जिले के प्रभारी सचिव एवं संभागीय आयुक्त डॉ. राजेश शर्मा, जिला कलेक्टर लोक बंधु, उप सभापति सुरतानसिंह, अतिरिक्त जिला कलेक्टर ओमप्रकाश विश्नोई मौजूद रहे। नगर परिषद् बाड़मेर में अभियान के शुभारम्भ के दौरान विधायक मेवाराम जैन, संभागीय आयुक्त डॉ. राजेश शर्मा, सभापति दिलीप माली, जिला कलेक्टर लोक बंधु ने पट्टों एवं पेंशन योजनाओंकी स्वीकृतियों का वितरण किया।

इस अभियान के तहत राजस्व एवं उपनिवेशन विभाग के अतिरिक्त अन्य 21 विभाग यथा ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज, जलदाय एवं भू जल, कृषि, जन जाति क्षेत्रीय विकास, ऊर्जा, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता, सैनिक कल्याण, महिला एवं बाल विकास, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य परिवार कल्याण, खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति, आयोजना, पशुपालन, श्रम, आयुर्वेद, सहकारिता एवं राजस्थान को–ऑपरेटिव डेयरी फेडरेशन लि., सार्वजनिक निर्माण विभाग, शिक्षा, वन विभाग, जल संसाधन एवं सिंचित क्षेत्र विकास विभाग एवं परिवहन विभाग के कार्य बिन्दूओं को शामिल किया गया।

इस अभियान के तहत जिले में 15 दिसम्बर तक कुल 661 ग्राम पंचायतों में शिविरों का आयोजन किया गया उक्त शिविरों में 148006 राजस्व अभिलेखों के शुद्धिकरण, 12871 आपसी सहमति से खातों का विभाजन, 5608 रास्ते के प्रकरण, 270 आबादी आवास भूमि आवंटन, 104119 नामान्तरकरण, 7368 सीमाज्ञान/पत्थरगढ़ी के प्रकरण, 1080 सार्वजनिक/राजकीय प्रयोजनार्थ भूमि आवंटन के प्रकरण स्वीकृत किए गए। इसी प्रकार 29 भूमीहीन किसानों को भूमि आवंटन, 86 नये राजस्व गांवों के प्रस्ताव, 119652 जाति, मूल, हैसियत एवं अन्य विभिन्न प्रमाण–पत्र तथा 136777 राजस्व रेकार्ड की प्रतिलिपियों का वितरण किया गया।

इसके अतिरिक्त 3656 प्रधानमंत्री आवास योजना के लाभार्थियों को द्वितीय एवं तृतीय किश्त का भुगतान, 19503 नवीन जॉब कार्ड एवं 34738 आवासीय पट्टे जारी किए गए। शिविरों में 2045 हैण्ड पम्प मरम्मत, 20963 मृदा नमूनों का संग्रहण,9358 पानी की गुणवता जाँच, 12235 मृदा स्वास्थ्य कार्डो का वितरण एवं 3153 विद्युत व्यवधान संबंधी प्रकरणों का निस्तारण किया गया। वहीं मुख्यमंत्री वृद्धजन सम्मान पेंशन योजना के 14357, मुख्यमंत्री विशेष योग्यजन सम्मान पेंशन के 1404, मुख्यमंत्री एकल नारी सम्मान पेंशन योजना के 1946, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन के 1875, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय निःशक्तजन पेंशन के 408, मुख्यमंत्री कन्यादान योजना के 165, मुख्यमंत्री पालनहार योजना के 2641, एवं मुख्यमंत्री सुखद दाम्पत्य योजना के 124 पात्र लाभार्थियों को लाभान्वित किया गया। साथ ही पूर्व सैनिकों के 241 पेंशन संबंधी प्रकरण भी निस्तारित किए गए। शिविरों में 14468 व्यक्तियों के आधार सीडिंग, 1230 आधार सीडिंग शुद्धिकरण, 53049 राशन सामग्री वितरण का भौतिक सत्यापन, 1707 नवीन जन आधार नामांकन, 9625 जन आधार संशोधन, 3541 जन आधार वितरण, 415312 पशुओं का टीकाकरण, 28848 छात्रवृत्ति के प्रकरण, 228 क्षतिग्रस्त सड़कों एवं 58 राजकीय भवनों की मरम्मत, 1296 विशेष योग्यजन एवं 11098 अन्य पात्र व्यक्तियों को रोड़वेज पास जारी किए गए। 15 दिसम्बर, 2021 तक जिले में आयोजित कुल 661 शिविरों के दौरान 369168 व्यक्तियों ने भाग लिया तथा 1070953 कुल प्रकरण दर्ज हुए।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पंचायती राज की संस्थाओं की स्थापना का उद्देश्य सामुदायिक विकास कार्यों में सक्रिय सहभागिता पैदा करना और ग्रामीण विकास को बढ़ावा देना है। उद्देश्य यह भी है कि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए लोग स्वयं सक्षम हो और पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से स्थानीय स्तर पर निर्णय ले सकें। पंचायती राज संस्थायें न केवल राज्य सरकार की विकास एजेन्सी है अपितु वे स्वायत्तशासी इकाईयां भी हैं। अब पंचायती राज संस्थाओं को स्थानीय स्वायत्त शासन की प्रभावी इकाई के रूप में कार्य करना होगा और वित्तीय स्तर पर मजबूत बनना होगा। राज्य सरकार द्वारा किसानों, ग्रामीणों तथा शहरी क्षेत्र की जनता की समस्याओं का मौके पर ही समाधान करने के लिए 'प्रशासन गांवों एवं शहरों के संग अभियान 2021 से स्पष्ट है कि बाडमेर जिले की पंचायत समितियां सबसे अधिक उन्नतिशील अवस्था में है। क्योंकि यहाँ पर प्रत्येक ग्राम पंचायत को सड़क मार्ग, विद्युत और टेलीफोन से जोड़ दिया है जिससे शहर से गाँवों की निकटता बढ़ गयी है। लगभग सभी गाँवों में पेयजल स्त्रोतों की

स्थिति अच्छी है और यहाँ पर शिक्षा की स्थिति में भी निरन्तर विकास हो रहा है। यहाँ पर प्रत्येक गाँव में प्राथमिक विद्यालय तो अवश्य ही हैं। इसके अलावा राजीव गाँधी पाठशाला योजना के अन्तर्गत बच्चों को शिक्षित किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *एस. पुरी, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था', जालन्धर, न्यू ऐकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, 2001, पृ.सं. 22.*
2. *रविन्द्रनाथ मुखर्जी एवं गिरीशचन्द्र कुलश्रेष्ठ, ''भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र'', बरेली, 1982, पृ. सं. 63-64.*
3. *डॉ. हरीशचन्द्र शर्मा, ''भारत में स्थानीय शासन'', जयपुर कॉलेज बुक डिपो, 1991, पृ.सं. 26.*
4. *सन्दीप कुमार मल्लिक, ''पंचायती राज : विकास एवं भूमिका'', प्रतियोगिता दर्पण, आगरा, मार्च 1996, पृ.सं. 1273.*
5. *भारतीय संविधान अनुच्छेद 40.*
6. *विनोद सुरौलिया'', पंचायती राज : जनता की सहभागिता'', प्रतियोगिता दर्पण, आगरा, मई - 1995, पृ.सं. 1546.*
7. *बाड़मेर दर्शन, डी. आई. पी. आर. बाड़मेर 2022 पृ. सं. 18*

प्राचीन भारत मे वर्ण व्यवस्था (600 ई. –1250 ई. के विशेष संदर्भ में)

मंजु कंसारा
शोधार्थी, जयनारायण व्यास विश्व विद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

संचार के सभी माध्यमों का पूरक है– डिजिटल मीडिया।

वर्ण व्यवस्था भारतीय समाज का मौलिक तत्व है तथा ऋग्वेद के अनुसार प्राचीन समय में समाज का सम्पूर्ण कार्य व्यवस्थित ढंग से चलता था समाज में प्रत्येक व्यक्ति का स्थान तथा उससे संबंधित कार्य तथा उसकी प्रवृत्तियों अर्थात् गुणों पर आधारित होती थी। वर्ण –व्यवस्था तथ आश्रम दो ऐसी व्यवस्थाये है जिनके आधार पर हिन्दुओं का व्यक्तित्व एवं सामाजिक जीवन संगठित हुआ है। वर्णाश्रम व्यवस्था व्यक्ति की प्रकृति एवं पालन–पोशण से संबंधित है तथा इस व्यवस्था में व्यक्ति को सामाजिक प्राणी या समाज का अंग बनने का महत्त्व मिला तथा समाज का विकास व्यक्तित्व के विकास के लिये आवश्यक है और उसकी समुचित व्यवस्थाओं के उपलब्ध होने पर ही सामाजिक व्यवस्था को स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है इन्ही दो लक्ष्यों को दृश्टि में रखकर वर्ण व्यवस्था एवं आश्रम व्यवस्था का निर्माण किया गया है।

संकेताक्षर : *ऋग्वेद, वर्ण –व्यवस्था, सामाजिक जीवन, व्यक्तित्व।*

वर्ण शब्द की व्युत्पत्ति 'वृ' (वृत–वरणे) धातु से हुई है जिसका अर्थ वरण अथवा चुनाव करना। व्यक्ति अपने कर्म अथवा स्वभाव के आधार पर जिस व्यवसाय का चुनाव करता है वही वर्ण है। वर्ण शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में रंग अर्थात् काले और गौरे रंग के लोगों के लिये किया गया और प्रारंभ में दो वर्णों आर्य तथा दास का ही उल्लेख मिलता है।[1] डॉ. धुरिये के अनुसार आर्य लोगों ने यहां के आदिवासियों को पराजित करके उन्हें दास या दस्यु नम दिया और अपने या उनके बीच अंतर प्रकट करने के लिये वर्ण शब्द का प्रयोग किया जिसका अर्थ रंग–भेद से है।[2] वर्ण के इस अर्थ से ज्ञात होता है कि यह शब्द आर्यो तथा दस्युओं के बीच पाये जाने वाले प्रजातीय अंतर को स्पष्ट करने के लिये किया गया। इस संसार की रचना परमात्मा ने वर्ण–व्यवस्था के आधार पर अर्थात् वर्ण व्यवस्था सृष्टि से पूर्व ही मनुष्यों के हित के लिए बनाई है, यदि ईश्वरवर्ण व्यवस्था का निर्माण नहीं करते तो मनुष्य सृष्टि भी नहीं होती और अंधकार ही रहता तथा इस अंधकार को मिटाने के लिये वर्ण व्यवस्था की स्थापना की गई।[3] वर्ण–व्यवस्था के अंतर्गत मात्र वर्ण शब्द का तात्पर्य यह माना जाता है कि इस सृष्टि को ब्रह्म कहा गया हे तथा विश्व का नियन्ता प्रविष्ट ब्रह्मा है तथा अव्यय रूप भी ब्रह्म है तथा इन तीनों में अव्यय ब्रह्म ज्ञान ज्योतिप्रधान, अक्षर ब्रह्म क्रियाशक्ति प्रधान और क्षर ब्रह्म अर्थ शक्ति प्रधान बताया गया है। अर्थ तत्त्व ही ज्ञान क्रिया का संवरण करता हुआ। सृष्ट रूप में परिणत है इसी सृष्ट रूप में आत्म विकास आवृत है। आवरण लक्षण इसी संवरण भाव से सृष्टात्मक क्षर पुरुष को वर्ण कहा जा सकता है और संवरण धर्म आगे जाकर भागों में विभक्त होता हुआ 'चातुर्वर्ण्य' भाव का प्रेरक बनता है।[4] सारांश रूप में समझा जाये तो संवरण और प्रेरणाधर्मो से ही परब्रह्म क्षर भाग एवं शब्द ब्रह्म का व्यंजन भाग वर्ण कहलाता है।

सामाजिक वर्ग विश्व के सभी समाजों में किसी न किसी रूप में अवश्य पाये जाते हैं वहीं पर सामाजिक वर्गों का निर्माण जन्म के आधार पर होता है तो कहीं पर धन के आधार पर और यह सामाजिक वर्ग प्रत्येक समाज में पाये जाते हैं मनुष्यों की प्रवृत्तियों तथा व्यवसायों के आधार पर उन्हें विभिन्न वर्गों में बांटने का प्रयत्न प्राचीन समय से ही हो रहे हैं। इन प्रवृत्तियों तथा व्यवसायों के आधार पर समाज का विभाजन संसार के सभी देशों में पाया जाता है।[5]

ISSN 2277-5587

मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों के आधार पर समाज विभाजन से समाज का श्रेष्ठ विकास होता है तथा उसकी शक्ति बढ़ती है।[6] सामाजिक वर्गों के विश्लेषण के आधार पर समाज अपनी स्थिरता एवं उन्नति के लिये अपने व्यक्तियों को उनकी योग्यता एवं प्रशिक्षण को ध्यान में रखते हुए विभिन्न वर्गों में बांट देता है।[7] मनुष्य ने मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों के आधार पर सामाजिक स्तरीकरण की प्रक्रिया को अपनाया तथा विभिन्न कार्यों के आधार पर समाज को चार वर्गों में विभाजित किया। सामाजिक वर्गों के आधार पर मनुष्य अपने वर्ग विशेष के आधार पर अपना जीवनयापन करता, यह वर्ग समाज में आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्थाओं का समूह होता था। सामाजिक स्तरीकरण उच्च वर्ग, मध्यमवर्ग व निम्न वर्ग से बना होता है तथा प्रत्येक वर्ग अनेक छोटे वर्ग में विभाजित किया गया है। सामाजिक वर्गों को अधिकांशता कुलीन वर्ग के रूप में भी देखा जाता है। यदि समाज को इस प्रकार वर्गों में विभाजित नहीं किया जाता तो समाज में सदैव नवीनीकरण का अभाव हो जाता। वर्गहीन समाज में व्यक्ति अपने अनुभव एवं कार्यों के आधार पर अपने सामाजिक स्तरीकरण का निर्माण करता है।

वर्ण–व्यवस्था भारतीय समाज का मौलिक तत्त्व है तथा ऋग्वेद के अनुसार प्राचीन समय में समाज का सम्पूर्ण कार्य व्यवस्थित ढंग से चलता था समाज में प्रत्येक व्यक्ति का स्थान तथा उससे सम्बन्धित कार्य उसकी प्रवृत्तियों अर्थात् गुणों पर आधारित होती थी। वर्ण–व्यवस्था तथा आश्रम दो ऐसी व्यवस्थाएं हैं जिनके आधार पर हिन्दुओं का व्यक्तित्व एवं सामाजिक जीवन संगठित हुआ है।[8] वर्णाश्रम व्यवस्था व्यक्ति की प्रकृति एवं पालन–पोषण से सम्बन्धित है तथा इस व्यवस्था में व्यक्ति को सामाजिक प्राणी या समाज का अंग बनने का महत्त्व मिला तथा समाज का विकास व्यक्तित्व के विकास के लिये आवश्यक है और उसकी समुचित व्यवस्थाओं के उपलब्ध होने पर ही सामाजिक व्यवस्था को स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है इन्हीं दो लक्ष्यों को दृष्टि में रखकर वर्ण–व्यवस्था एवं आश्रम व्यवस्था का निर्माण किया गया है। भारतीय सामाजिक विचारधारा के वास्तविक स्वरूप के अध्ययन के लिये वर्ण–व्यवस्था के अंतर्गत समाज को चार भागों में बांटा गया है तथा इसी के आधार पर आश्रम व्यवस्था को भी व्यक्तिगत जीवन को समुन्नत बनाने एवं व्यक्तिगत विकास के लिये जीवन को चार भागों में विभाजित किया गया है।[9] इसी विभाजन के आधार पर व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास करता है तथा अनुशासित रूप में अपने जीवन के दायित्वों का निर्वाह करता है। वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत वही व्यक्ति अपनी शक्तियों का सदुपयोग सामूहित हित में करता है जो सामाजिक कल्याण हेतु अपने वर्ण–धर्म का पालन करता है।

वर्ण–व्यवस्था की उत्पत्ति

वर्ण व्यवस्था की उत्पत्ति के सम्बन्ध में भिन्न–भिन्न विचार व्यक्त किये गये हैं। वेद, उपनिषद्, महाभारत, गीता तथा अन्य धर्म ग्रंथों में इस व्यवस्था की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला गया है यहां इन्हीं ग्रन्थों में विद्वानों द्वारा प्रकट किये गये विचारों के आधार पर हम वर्णों की उत्पत्ति को समझने का प्रयत्न करेंगे। ऋग्वेद के पुरुष सुक्त में वर्णों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बतलाया गया है कि

ब्राह्मणोऽस्य मुखमसीद् बाहू राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्या शुद्धोऽअजायत।।

ब्राह्मण पुरुष अर्थात् विराट स्वरूप परमात्मा के मुख्य रूप है, क्षत्रिय उनकी भुजायें हैं, वैश्य उनकी जंघाएं अथवा उदर है और शुद्ध उनके पांव है।[10] ब्राह्मण की उत्पत्ति पुरुष के मुख से हुई है और मुख का कार्य बोलना और अध्यापकों और गुरुओं के रूप में अन्य व्यक्तियों की शिक्षित करना है। भुजाएं शक्ति की सूचक है इसलिये क्षत्रियों का कार्य शासन संचालन एवं शस्त्र धारण कर समाज की रक्षा करना। जंघाएं बलिष्ठता एवं पुष्टता की प्रतीक है इसलिये वेश्यों का कार्य कृषि तथा व्यापार के द्वारा सम्पत्ति का उत्पादन और पैरों का कार्य शरीर के भार को वहन करना है विराट पुरुष के शरीर के विभिन्न अंगों से चार वर्णों की उत्पत्ति इस बात को व्यक्त करती है कि चारों वर्णों में भिन्न–भिन्न स्वभावगत विशेषताएं पायी जाती हैं तथा एक ही शरीर के अलग–अलग अवयव या भाग होने के कारण उनमें पारस्परिक अंतर्निर्भरता दिखायी देती है।

ब्रह्मा ने प्रारंभ में केवल ब्राह्मणों को ही जन्म दिया लेकिन वे समाज से सम्बन्धित कार्यों को ठीक प्रकार से पूर्ण नहीं कर सके ऐसी दशा में समाज कल्याण के लिये ब्रह्मा ने क्षत्रिय वर्ण की रचना की क्षत्रियवर्ण के अंतर्गत अनेक देवता जैसे – इन्द्र, वरुण, सोमतया यम आदि आते हैं अतः ब्रह्म के अनुसार क्षत्रियों की उत्पत्ति के बाद भी कार्य प्रगति नहीं हो सकी, सामाजिक कार्यों का पूर्णता के साथ सम्पादन नहीं हो सका तब पुशान देवता के रूप में शुद्ध की उत्पत्ति

हुई।[11] स्वर्ग लोक की इस वर्ण–व्यवस्था के आधार पर ही पृथ्वी लोक के वर्णों की उत्पत्ति हुई इससे स्पष्ट है कि अलग–अलग समय पर सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार भिन्न–भिन्न वर्णों की उत्पत्ति हुई और इनका मूल आधार इनके द्वारा की जाने वाली विभिन्न प्रकार की सेवाएं रही हैं। विशिष्ट वर्ण के सम्बन्ध में बताया गया है कि व्यक्ति के पूर्व जन्म में किये गये कर्मों की प्रगति पर निर्भर करता है जिन्होंने पूर्व जन्म में अच्छे कार्य और आचरण किये हैं उन्हें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्ण में जन्म लेने का सुअवसर प्राप्त होता है अर्थात् पूर्वजन्म के कर्मों के आधार पर व्यक्ति की स्वभावगत विशेषताएं बनती है और उसके वर्ण का निर्धारण होता है। इस प्रकार उपनिषदों में विभिन्न वर्णों की उत्पत्ति का आधार व्यक्तियों के विविध गुण तथा कर्म माने गए हैं।

समाज का वर्णों में विभाजन अत्यंत प्राचीन है इसकी प्राचीनता का प्रमाण वैदिक युग से मिलता है इसकी उत्पत्ति ब्रह्म से मानी गई है। सर्वप्रथम 'वर्ण' का उल्लेख ऋग्वेद में हुआ है। वर्ण का अर्थ विभिन्न लोगों के जातिगत समूह की ओर इंगित करता ह। इस सम्बन्ध में अलबरूनी ने लिखा है ''हिन्दू अपनी जातियों को 'वर्ण' या 'रंग' कहते हैं और वंश वृक्ष की दृष्टि से उनका नाम 'जातक' अर्थात् 'जन्म' रखते हैं, ये वर्ण पहले से चार हैं जातियों की 'वर्ण' अथवा 'रंग' संज्ञा अलबरुनी ने सही दी है किन्तु वंश–परम्परा के अनुसार जाति का नाम 'जातक' या 'जन्म' नहीं था। साथारण व्यक्ति के लिए कहा जाता है वह जिस जाति का है अथवा किस जाति में जन्मा है। 'जाति' और 'जन्म' शब्द मूलतः एक ही उत्पत्ति के है। वहीं से 'जन', 'जेन्स', 'जनेसिस' और 'गौत्र' भी निकलते हैं। जातक का भी सम्बन्ध उत्पत्ति से ही है और रंग के आधार निश्चित हुए पर बाद में जन्म के आधार पर जाति भी कहा जाने लगा। अलबरूनी के समय वर्ण का आधार निश्चित हुए पर बाद में जन्म के आधार पर उन्हें 'जाति' भी कहा जाने लगा। अलबरुनी के समय वर्ण का आधार कर्म और गुण न रहकर जन्म रह गया संभवतः इसीलिये उसने जातक अथवा 'जन्म' शब्दों का प्रयोग किया है। वस्तुतः ब्राह्मणों की संज्ञा ही 'अग्रजन्मा' हो गई।''[12] वर्ण–व्यवस्था का जो स्वरूप प्राचीनकाल में विद्यमान था वर्तमान काल में भी वर्ण–व्यवस्था विद्यमान है परंतु इसमें कई नवीन जातियों ने अपना स्थान बना लिया परंतु पूर्वमध्यकाल में देखा जाये तो भारत में अनेक आक्रमण हुए जिससे वर्ण–व्यवस्था में परिवर्तन आने लगा, ये वर्ण जाति के नवीन स्वरूप को इंगित करते हैं अर्थात् वर्ण के आधार पर ही जातियों का विकास हुआ है। वर्ण–व्यवस्था एक नवीन समाज का निरूपण करती है तथा जातियों का निर्माण समाज में होने वाले परिवर्तन को प्रदर्शित करता है क्योंकि प्राचीन काल में व्यक्ति समाज में वर्ण के आधार पर ही निवास करता था परंतु जातियों के आगमन से समाज अनेक नवीन वर्गों का निर्माण होने लगा।

महाभारत के शांति पर्व में वर्गों की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला गया है ब्राह्मण वेद को सुरक्षित करने के लिए उत्पन्न किये गए, क्षत्रिय पृथ्वी पर शासन करने, दण्ड धारण करने और जीवों की रक्षा के लिए, वैश्य दोनों को तथा अपनों को खेती एवं व्यापार में सहायता के लिए और शूद्र दास बनकर सभी की सेवा के लिए।[13] वर्ण–व्यवस्था का प्रेरक तत्त्व निश्चित ही व्यक्ति का व्यवसाय और कर्म था जिस पर समाज की रचना की नींव थी। वैदिक युग से चार वर्णों में विभाजित भारतीय वर्ग मध्य युग में ही तदनुरूप ही रहा यद्यपि वर्ण विभाजन में जन्मगत आधार की बीज 'कुल' और 'वंश' नाम से आ गया था तथापि वर्ण–व्यवस्था में व्यक्ति के व्यवसाय और कर्म का महत्त्व अपेक्षाकृत अधिक था। अलबरूनी लिखता है – प्राचीनकाल में अत्यंत कर्त्तव्यपरायण राजा, जनता को अनेक श्रेणियों और कर्मों में विभक्त करने में योग देते थे साथ ही उन्हें एक दूसरे से मिलने और क्रम तोड़ने से सम्बन्ध रखने से रोक दिया और प्रत्येक श्रेणि के लोगों को विशेष प्रकार का कार्य और शिल्पकला सौंप दिया वे किसी भी व्यक्ति को अपने वर्ग का अतिक्रमण करने की अनुज्ञा नहीं देते थे जो अपनी श्रेणी के साथ संतुष्ट नहीं थे उन्हें दण्ड दिया जाता था।[14]

अलबरूनी के उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि समाज की रचना में वर्णों के विभाजन का महत्त्वपूर्ण योग था वह किसी वर्ग का अन्य वर्ग के व्यवसाय और कार्य को अपनाने की अनुमति नहीं देता था अगर कोई उसकी अनुमति के विरूद्ध सम्बन्ध रखना चाहता था तो उसे दण्डित किया जाता था। प्रत्येक वर्ण के लिए एक सुनिश्चित व्यवस्था थी जिसके अनुरूप प्रत्येक वर्ण अपने–अपने कर्म करता था।

वर्ण शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में हुआ जो पूर्व वैदिक युग की समाज रचना को स्पष्ट करता है।

ऋग्वेद में वर्ण का प्रयोग 'रंग' अथवा 'आलोक' के अर्थ में है तथा शारीरिक त्वचा के रंग के आधार पर भी वर्ण का प्रयोग किया है।[15] तत्कालीन समाज में दो ही वर्ण थे, एक 'आर्य' और दूसरा 'अनार्य' या दास (अथवा दस्यु)[16]। यह अत्यंत प्रारम्भ की सामाजिक व्यवस्था थी, जिसमें त्वचा को भेदक आधार माना गया था। ऋग्वेद के अनेक स्थलों पर 'आर्य' और 'दास' (अनार्य) की अनेकता और भिन्नता 'वर्ण' के रूप में दर्शित की गई है। ''दास'' वर्ग को 'अव्रत' (दिवताओं के नियम और व्यवहार को अस्वीकार करने वाले), 'मृध्रवाच' (अमधुरभाषी) 'अपनास' (चपटी नासिका वाले) तथा 'अक्रतु' (यज्ञ न करने वाले) कहा गया है इस प्रकार 'आर्य' और 'दास' दो प्रतिपक्षी वर्ण थे, जो एक दूसरे से कार्य, व्यवहार, आचरण, संभाषण, रंग आदि में भिन्न थे। तत्कालीन समाज का यह विभाजन वर्गीय और सांस्कृतिक था। 'आर्य' सदाचरण और सवृत्तियों का अनुसरण करने वाले थे तथा 'दास' दुर्वृत्तियों और अव्यवस्थाओं को उत्पन्न करने वाले थे।[17] आर्य बाहर से आये थे उन्होंने यहां के मूलनिवासियों को पराजित किया और दास बनाया। आर्यों तथा यहां के मूल निवासियों के रूप में अंतर था, रंग में अंत था तथा आचार-विचार और रहन-सहन में अंत था। दोनों वर्गों में जन्मगत, रक्तगत, शरीरगत और संस्कारगत प्रजातीय भेद था।

वर्ण-व्यवस्था का प्रारंभिक स्वरूप

वैदिक काल के पूर्व युग में ही वर्णों का समाज संगठित होने लगा था। आर्य और दास दो प्रधान वर्ग सामने आ चुके थे। ये वर्गीकृत विभाग उनके प्रजातीय और सांस्कृतिक पार्थक्य का प्रतीत था तथा ये दोनों वर्ग परस्पर विरोध के रूप में आगे बढ़े इसी के साथ उत्तरवैदिककाल तक आते आते आर्य और अनार्य (दास) का विरोध अर्थात् द्विवर्ण का स्वरूप समाप्त हो गया तथा इसके स्थान पर चातुर्वर्ण का उल्लेख प्रारंभ हो गया इन चारों वर्णों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित थे।[18] ये सम्बन्ध अंतर्जातीय विवाह के कारण थे जिसके परिणामस्वरूप अनेक आर्यों ने अपने मूल अस्तित्व को ही खेा दिया तथा अपनी मौलिकता को बनाये रखने में असमर्थ हो गए। इस युग में दासीपुत्र औशिज, वत्स और दीर्घतमा जैसे लोग भी ऋषि कहलाए। श्यामवर्णीय शुद्र के अतिरिक्त धूसर-वर्णीय क्षत्रि भी समाज में अवस्थित हो गये तथा आर्य व दासवर्ग का अंतर लगभग समाप्त हो गया।[19] इससे व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन में वृहत् परिवर्तन आए उनकी अनावश्यक प्रतिस्पर्धा निर्बल पड़ गई तथा सामूहिक सहयोग की भावना को बल मिला। सामंजस्य और समन्वय के कारण चार पृथक्-पृथक् वर्णों का विकास हुआ।

चतुर्थ वर्ण के अंतर्गत शुद्र को सामाजिक व्यवस्था में सम्मिलित किया किन्तु इस चतुर्थ वर्ण के बन जाने के बावजूद तीनों वर्णों के जो आर्यों के रक्त से सीधे सम्बन्धित थे, अपनी रक्त शुद्धता, श्रेष्ठता और उच्चता को बनाये रखा। यद्यपि इन तीनों वर्णों का भी पारस्परिक भेदभाव था परंतु अनार्यों के संघर्ष में वे एक समूह के रूप में आर्य थे इन चारों वर्णों का विकास एक समुचित व्यवसाय और श्रम के आधार पर हुआ था, जिसमें आर्य और आर्येत्तर दोनों का सम्मिलन था। प्रारंभिक युग में इनके सम्मिश्रण पर कोई विशेष बन्धन नहीं था। आर्यों और अनार्यों का जो कुछ भी सम्पर्क होता रहा उसमें कठोरता और पार्थक्य नहीं था वे उसी सामाजिक स्वरूप में गृहित किये जाते रहे। आर्यों के परिवारों में अनार्य अथवा दास सेवक के रूप में स्थान पाते थे तथा सामाजिक व्यवस्था में सेवा-भाव से योग प्रदान करते थे।[20] आर्यों ने अपनी संस्कृति और रक्त की शुद्धता का बनाये रखने के लिए सम्पूर्ण समाज का पुनर्गठन किया और चारों वर्णों को समाज में नियमित रूप से व्यवस्थित किया। प्रारंभिक तीनों वर्णों में आर्यों को संयोजित किया तथा समाज के संगठन के इस नवीन स्वरूप से आर्य संस्कृति और परम्परा अक्षुण्ण बनी रही तथा अनार्य संस्कृति एक विजेता की संस्कृति से प्रभावित होने लगी बावजूद इसके अनार्यों की मूल प्रवृत्ति और संस्कृति अपनी कुछ निम्नस्तरीय संस्कृति को नहीं परिवर्तित कर सकी। उनकी कुछ घृणास्पद परम्पराएं बनी रही जिससे उन्हें पृथक् और निम्न बनाये रखने में आर्यों को सहायता मिली अतः आर्यों की सामाजिक व्यवस्था कठोर और रूढ़िवाद होने लगी। अनेक ऐसे नियम और निर्देश सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत सम्मिलित किये गये जो एक दूसरे वर्ण को आपस में संयुक्त होने से अवरूद्ध करते थे। आर्य संस्कृति अपने मूलभूत स्वरूप को इसी सामाजिक व्यवस्था के कारण सुरक्षित रख सकने में समर्थ हुई। वर्ण-व्यवस्था के प्रारंभिक स्वरूप से यह स्पष्ट है कि सामाजिक व्यवस्था को संगठित रूप प्रदान करने के लिये सामाजिक कर्त्तव्यों का निर्धारण किया गया तथा व्यवसाय और कर्म को प्रधानता देते हुए

गुणों का आदर किया गया तथा सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत आर्यों ने समाज में जिन वर्गों का निर्माण किया तथा उन वर्गों को गुण के साथ–साथ उनके कर्म को भी प्रधानता दी गई इस प्रकार वर्ण–व्यवस्था के अंतर्गत विभिन्न वर्णों अथवा समूहों को उनके प्रधान गुण और कर्म के आधार पर विभाजित किया गया तथा उनके कर्मों को प्रबल रूप से व्यवस्थित करके सही दिशा प्रदान की गई।

600 ई. से 1200 ई. तक वर्ण–व्यवस्था का स्वरूप

हर्षकालीन अभिलेखों से विदित होता है कि प्रभाकर वर्धन ने वर्णाश्रम–व्यवस्था को स्थिर रखा था।[21] उसने इस सामाजिक व्यवस्था को स्थिर रखने के लिए सक्रिय सहयोग प्रदान किया। श्वानच्वांग ने भी परम्परागत जाति विभेद के चार वर्णों का उल्लेख किया है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र का वर्णन करते हुए उसने उसके प्रधान कर्मों का भी उल्लेख किया है। बाण ने 'हर्षचरित' में धर्म के विषय में उल्लिखित किया कि वह ऐसा शासक था जो मनु के समान वर्णों और आश्रमों के सभी नियमों का पालन करता था। श्रीकण्ड जनपद के जीवनतया सम्पन्नता के सम्बन्ध में वर्णन करते समय वह कहता है कि वर्ण–सम्बन्धी नियम सर्वदा से संकीर्ण नहीं थे।[22] ग्यारहवीं सदी के लेखक अलबरूनी का कथन है, ''प्राचीनकाल में अत्यंत कर्त्तव्यपरायण राजा जनता को अनेक श्रेणियों और कर्मों में विभक्त करने में योग देते थे। साथी ही उन्हें एक दूसरे से मिलने और क्रम तोड़ने से रोकने का यत्न करते थे। अतः उन्होंने भिन्न–भिन्न श्रेणियों के लोगों को एक दूसरे से सम्बन्ध रखने से रोक दिया और प्रत्येक श्रेणी के लागों को विशेष प्रकार का कार्य और शिल्प सौंप दिया। वे किसी भी व्यक्ति को अपने वर्ग का अतिक्रमण करने की अनुज्ञा नहीं देते थे। जो अपनी श्रेणी के साथ संतुष्ट नहीं थे उन्हें दण्ड दिया जाता था।''[23] अलबरूनी के इस कथन से स्पष्ट है कि समाज की रचना में राजा का महत्त्वपूर्ण योग था। राजा किसी वर्ग को किसी अन्य वर्ग के व्यवसाय और कार्य अपनाने की अनुमति नहीं देता था। अगर कोई व्यक्ति राजा की आज्ञा के विरूद्ध सम्बन्ध रखना चाहता था तो उसे दण्डित किया जाता था। प्रत्येक वर्ण के लिए एक सुनिश्चित व्यवस्था थी, जिसके अनुरूप प्रत्येक वर्ग अपने कर्म करता था किन्तु वर्णगत कर्मों का उल्लंघन नहीं किया जा सकता था। राजा का यह प्रधानकर्त्तव्य था कि वह वर्णाश्रम धर्म की रक्षा करें।

''ब्राह्मण'' की प्रधानता समाज में बहुत पहले से हो रही है। विवेच्य काल से उसका आदर और सम्मान श्रेष्ठतर रहा है। जीवन के सभी क्षेत्रों में उसे विशेष सुविधाएं प्राप्त रही हैं। अध्ययन–अध्यापन, यजन–याजन और दान–प्रतिग्रह जैसे प्रमुख कार्यों में राज्य और समाज के सभी कार्यक्रम में उसे सर्वोच्च पद प्राप्त था। इस तरह की व्यवस्था उत्तरवैदिक काल से ही चली आ रही थी जो मौर्य–युग के पतन के बाद से पुनः तीव्र गति से अग्रसर हुई। मौर्य युग में अशोक ने अपने अभिलेखों में ब्राह्मण और श्रमण को एक साथ ही उद्धृत किया है।[24] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्राह्मणों के प्रति समुचित व्यवहार न करके उसकी उच्चता को विनष्ट करके उस पर अर्थात् उसकी भावनाओं को आघात किया गया तथा ब्राह्मणों की श्रेष्ठता और व्यापकता पर आक्षेप किया गया है।

सर्वापराधेष्वपीडनीयो ब्राह्मणः।
तस्याभिशतांकोललाटेस्याद्व्यषहार पतनाय।
स्तेयेश्वा, मनुष्यवधेकबन्धः, गुरुतल्पे भगम्,
सुरापाने मद्यध्वजः।

कौटिल्य ने ब्राह्मण को अवध्य बताते हुए कहा है कि किसी भी प्रकार का अपराध करने वाले ब्राह्मण को दंड दिया जाये। उसने जिस प्रकार का अपराध किया हो, उसकी सूचना देने वाला चिह्न अवश्य उसके ललाट पर अंकित कर दिया जाये। जिस प्रकार के व्यवहार से उसका पतन हुआ होगा, उसे वह चिह्न देखकर ही लोग जान जायेंगे। चोरी करने पर कुत्ते का चिह्न, मनुष्य की हत्या करने पर कबंध (बिना सिर के शव) का चिह्न, गुरुपत्नी के साथ दुराचार करने वाले ब्राह्मण के मस्तक पर स्त्री की योनि का चिह्न और मदिरापान करने पर मद्यपात्र का चिह्न अंकित कर दिया जाये।[25] खानचांग के अनुसा जातियों और श्रेतियों में ब्राह्मण सर्वाधिक सम्मानित और पवित्र थे। उनकी ख्याति और व्यापकता के कारण भारत के लिए 'ब्राह्मण देश' नाम का भी प्रचलन रहा। वे अपने सिद्धांतों के पालन में संयम, शुद्धता और सदाचार का सर्वदा ध्यान रखते थे।[26] ''असंस्कृतमतयोपि जात्येव द्विजन्माने माननीया'' बाण के अनुसार असंस्कृत बुद्धिवाला ब्राह्मण, जन्म से ब्राह्मण होने के कारण माननीय था।[27] अलबरूनी लिखता है कि ब्राह्मण सबसे ऊंचे वर्ण के है। उनके विषय में हिन्दू धर्म ग्रंथ कहते हैं कि ब्रह्मा के सिर (मुख) से उत्पन्न हुए हैं। जिस शक्ति को माया कहते हैं इसका दूसरा नाम ब्रह्मा है। शरीर का सबसे

ऊंचा अंग सिर है इसलिए ब्राह्मण सभी जातियों में श्रेष्ठ है। अतः हिन्दू उन्हें सर्वोत्तम मानते हैं।[28] अलबरूनी के पूर्ववर्ती अबूर्जेद सराफी का कथन है कि ''भारत के लोग ब्राह्मण कहलाते हैं। उसमें कवि भी है, जो राजाओं के दरबार में रहते थे तथा ज्योतिष, दार्शनिक फल निकालने वाले और इन्द्रजाल जानने वाले भी होते थे।''[29] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि जो विद्वान् कवि, दार्शनिक, ज्योतिषी होते थे वे ब्राह्मण कहे जाते थे। समाज में ब्राह्मणों की स्थिति उच्च थी तथा समाज में ब्राह्मणों को प्रतिष्ठित या उच्च पद प्राप्त था तथा अपने उच्च आदर्शों के कारण यह वर्ण समाज में वंदनीय था तथा पूर्वमध्ययुगीन समाज में भी ब्राह्मणों को प्रतिष्ठता तथा लोकप्रियता प्राचीनकाल जैसी थी तथा समाज में सदैव ब्राह्मणों का सम्मान किया जाता था साथ ही धार्मिक कार्यों में इनकी उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती थी तथा यज्ञ एवं धार्मिक अनुष्ठान कार्य ब्राह्मणों के द्वारा ही सम्पन्न होते थे।

'क्षत्रिय' समाज का पोषण और रक्षण करता था। समाज के संवर्धन में उसका महत्त्वपूर्ण योग रहा है। देश और समाज का रक्षात्मक भार उसी के कंधों पर रहा है। बौद्ध युग में क्षत्रिय वर्ण की श्रेष्ठता स्थापित हो चुकी थी उसके पश्चात् हिन्दू धर्म समर्थक राज्यों की स्थापना होने से वर्ण-व्यवस्था सुव्यवस्थित हो लगी। मौर्य युग के पश्चात् क्षत्रिय वर्ण व्यवस्था के सक्रिय होने लगी। मौर्य युग के पश्चात् क्षत्रिय वर्ण-व्यवस्था के सक्रिय सदस्य बन गये और उन्होंने वर्ण धर्म का अनुगमन किया।

क्षत्रियस्याव्ययनं यजनं दानं शस्त्रजीवोभूतरक्षणं च।[30]

प्रजानां रक्षण दानमिज्याऽध्ययनमेव च।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः।।[31]

कौटिल्य का कथन है कि अध्ययन, यजन, दान, शास्त्रजीविका तथा भूतरक्षण क्षत्रिय के प्रधानकर्म है। मनु ने कहा है कि प्रजा की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, वेद पढ़ना, विषयों में आसक्त न होना क्षत्रियों का मुख्य कर्त्तव्य था।

ब्राह्मणं दशवर्ष तु शतवर्ष तू भूमिपम्।
पिता पुत्रौ विजानीयाद्ब्राह्मणस्तु तयोः पिता।।

मनु के अनुसार दस वर्षीय ब्राह्मण सौ वर्षीय क्षत्रिय से श्रेष्ठ था। ब्राह्मण और क्षत्रीय क्रमशः पिता और पुत्र के समान थे।[32] प्राचीनकाल से ही क्षत्रिय का समाज में द्वितीय स्थान था। उसका प्रधान कर्म देश की सुरक्षा, जनता का पालन-पोषण बाह्य आक्रामकों और प्रतिस्पर्धा राज्यों से युद्ध, राज्य की शासन-व्यवस्था तथा दानादि प्रदान करना था। यह सर्वविदित है कि जब-जब देश पर शत्रुओं का आक्रमण हुआ, क्षत्रियों ने एक निष्ठता और साहस के साथ देश और प्रजा की रक्षा की है। समाज मे क्षत्रिय का कर्म निश्चय ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण था। प्रजा की रक्षा करना, वेद पढ़ना, दान देना, यज्ञ करना आदि उसका प्रधान कर्म था। रण-कौशल उसके लिए अनिवार्य था। हस्ति और अश्व की शिक्षा में वह निपुण होता था। वह कर्मवीर के साथ-साथ संकटापन्न परिस्थितियों में सहनशील और क्षमताशाली होता था। व्यूहरचना आदि युद्ध विषयक कलाओं में वह पारंगत होता था, उसकी सर्वश्रेष्ठ जीविका शस्त्र थी, क्षत्रिय वेद पढ़ता था परंतु पढ़ाता नहीं। वह यज्ञ करता था और पुराणों के अनुरूप आचरण करता था। वह प्रजा पर शासन करता और उसकी रक्षा करता था क्योंकि वह इसी कार्य के लिये उत्पन्न हुआ था। क्षत्रिय वही है जो दक्ष, वीर, पराक्रमी तथा दुष्टों को दण्ड देने में समर्थ हो और दूसरों की सेनाओं को जीतकर धर्मपूर्वक पृथ्वी का पालन करता था।

पूर्वमध्यकालीन समाज में वैश्य वर्ण की स्थिति पतनोन्मुख होने लगी क्योंकि उनको शुद्रों के साथ समेटा जाने लगा और इसका प्रमुख कारण यही था कि पूर्वमध्यकाल में व्यापार-वाणिज्य का ह्रास होने लगा तथा इस समय शुद्र वर्ण कृषिकार्य में व्यस्त रहने लगा तो शुद्र वर्ण आर्थिक स्थिति में सक्षम होने लगा। शुद्रों ने कृषक के रूप में वैश्यों का स्थान ग्रहण कर लिया इस प्रकार दोनों वर्णों की स्थिति एक समान हो गयी। पराशर स्मृति में वैश्यों तथा शुद्रों के लिये समान रूप से कृषि, वाणिज्य तथा शिल्प कार्य कने का विधान किया गया है।[33] इस प्रकार कृषि, वाणिज्य तथा शिल्प दोनों का सामान्य धर्म हो गया। विष्णुपुराण में बताया गया है कि कलियुग में वैश्य कृषि तथा व्यापार छोड़ देंगे तथा अपनी जीविका का दास कर्म एवं कलाओं द्वारा कमायेंगे।[34] स्कन्द पुराण के अनुसार 'कलियुग में व्यापारियों का पतन होगा। इनमें कुछ तेली तथा अनाज फटकने वाले होंगे तथा अन्य राजपुत्रों पर आश्रित होकर रहेंगे।'[35] वैश्य वर्ग की यह स्थिति सामंतों तथा जागीरदारों के कारण हो गयी क्योंकि सामंत वर्ग शोषण वर्ग तथा जो स्वयं का लाभ अत्यधिक देखा करता था। जिससे वैश्य वर्ण के

व्यापार–वाणिज्य का ह्रास होने लगा और आर्थिक स्थिति कमजोर होने लगी। आर्थिक स्थिति में गिरावट के साथ वैश्यवर्ण की सामाजिक स्थिति में भी गिरावट आ गई।

पूर्वमध्यकाल में कृषि को वैश्य तथा शुद्र दोनों वर्णों का समान कार्य बताया है। शुद्रों की स्थिति में यह परिवर्तन सामंती प्रवृत्तियों के विकसित हो जाने के कारण हुआ। भूमि अनुदानों की अधिकता के कारण सामंतों तथा भूस्वामियों की संख्या अधिक हो गयी इन्हें अपने खेतों में कार्य करने के लिये बड़ी संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता पड़ी और इसकी पूर्ति शुद्र वर्ण द्वारा ही संभव थी जो संख्या में अत्यधिक था। अत्यधिक उत्पादन के कारण शुद्रों को भी कृषि की आय का अच्छा लाभ प्राप्त हुआ जिससे उनकी आर्थिक दशा काफी अच्छी हो गयी। इस प्रकार उन्होंने कृषि को वैश्यों के अधिकार से छीन लिया।[36] इस प्रकार वैश्य वर्ण कृषि का अधिकारी नहीं रहा क्योंकि इनमें कुछ निम्न श्रेणी के लोग जिनकी आर्थिक स्थिति कमजोर थी वे शुद्र वर्ण के साथ सम्मिलित हो गये किन्तु ग्यारहवीं–बारहवीं सदी में जब व्यापार–वाणिज्य का पुनरुत्थान हुआ तब वैश्य वर्ण की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ इनमें से कुछ भू–सम्पदा के स्वामी बन गये जो सामंत वर्ग के अंतर्गत आने लगे।

वर्ण–व्यवस्था सामाजिक परिवर्तन की एक ऐसी व्यवस्था थी जिसके माध्यम से मनोवैज्ञानिक आधार पर समाज का कार्यात्मक विभाजन किया गया था। इस व्यवस्था ने सभी वर्णों के लोगों को अपना दायित्व समुचित ढंग से निभाने की प्रेरणा दी, समाज के हित की दृष्टि से प्रत्येक वर्ण के कार्य को महत्त्व दिया गया और प्रत्येक व्यक्ति में इस भावना को भरा गया कि उनका हित इसी में है कि वे अपने वर्ण धर्म का पालन करे जब तक व्यक्ति के सम्मुख दायित्व निर्वाह की समुचित प्रेरणा नहीं होगी तब तक वह अपने कार्य को सुचारु रूप से नहीं कर पायेगा। इस व्यवस्था ने व्यक्ति को कर्त्तव्य–पालन की प्रेरणा प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया इसके द्वारा व्यक्तियों को यह विश्वास दिया गया कि जो व्यक्ति अपने वर्ण धर्म का पालन करेंगे, उन्हें उच्च सामाजिक स्थिति प्राप्त होगी। इस व्यवस्था ने समाज को विभिन्न खंडों में बांटने के बजाय उसे संगठित बनाये रखने का प्रयास किया, पारस्परिक अंतर्निर्भरता को प्रोत्साहन दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मोतीलाल गुप्ता, भारतीय सामाजिक संस्थाएं, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1978, पृ. 12*
2. *जी.एस.धुर्ये, कास्ट एण्ड रेस इन इंडिया, पॉपुलर प्रकाशन, मुम्बई, 1950, पृ. 175*
3. *दीपचंद्र आचार्य, वर्ण–व्यवस्था, श्री सन्मति लाइब्रेरी, जयपुर, 1988, पृ. 1*
4. *पं. आद्यादत्त ठाकुर, वेदों में भारतीय संस्कृति, हिन्दी समिति, लखनऊ 1967, पृ. 197*
5. *आर.एम.मैकाइवर, सोसायटी, मेकमिलन एवं सीओ लिमिटेड, लंदन, 1959, पृ. 136*
6. *H.G. Wells, A Short History of the world, The Macmillan Company London, 1922, p. 65*
7. *Erik Olin Wright, Class Counts, Cambridge University Press. New York, 1997, P.249*
8. *मोतीलाल गुप्ता, पूर्वोक्त, पृ. 11*
9. *वही, पृ. 11–12*
10. *ऋग्वेद, अनुवादक भारतेन्दूनाथ, दयानंद संस्थान, नई दिल्ली, पृ. 122*
11. *छांदोग्यउपनिषद्, अनुवादक स्वामी कृष्णानंद, द डिवाइनलाइफ सोसायटी, शिवानंद नगर, 1984, पृ. 299*
12. *जयशंकर मिश्र, ग्यारहवीं सदी का भारत, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी, 1968, पृ. 18*
13. *वेदव्यास, महाभारत, शांतिपर्व, सन्मति पुस्तकालय, जयपुर, पृ. 11*
14. *जयशंकर मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 18*
15. *ऋग्वेद, अनुवादक, भारतेन्द्रनाथ, दयानन्द संस्थान नई दिल्ली, पृ. 126*
16. *वही, पृ. 126*
17. *जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहारी हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1974, पृ.10*
18. *वही, पृ.10–11*
19. *वही, पृ.11*
20. *वही, पृ.11*
21. *एपिग्राफिक इंडिका, अनुवादक, इ. Hultzsch, The Director General Archaeological Survey of India Janpath, New Delhi. 1941] पृ. 208–11*
22. *शांतिकुमार पांड्या, हर्षचरित, पार्श्व प्रकाशक, अहमदाबाद, 2007, पृ. 36*

ISSN 2277-5587

23. जयशंकर मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 59–60
24. वही, पृ. 60
25. अर्थशास्त्र कौटिल्य, Jaico Publishing House, Mumbai,2009, पृ. 256
26. जयशंकर मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 61
27. शांतिकुमार पांड्या, पूर्वोक्त, पृ. 18
28. जयशंकर मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 61
29. वही, पृ. 61–62
30. कौटिल्य, पूर्वोक्त, पृ. 290
31. मनुस्मृति, अनुवादक, जनार्दन शास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1984, पृ. 236
32. वही, पृ. 236
33. पाराशरस्मृति, अनुवादक, गुरुप्रसादशर्मा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1998, पृ. 66
34. विष्णु पुराण, अनुवादक, श्री राम शर्मा आचार्य, संस्कृति संस्थान, बरेली, 1967, पृ. 218–219
35. स्कन्द पुराण, अनुवादक, श्री राम शर्मा आचार्य, संस्कृति संस्थान, बरेली, 1970, पृ. 123
36. के.सी.श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2019, पृ. 525

कोरोना संकट का प्रभाव : आत्मनिर्भर भारत के परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन

डॉ. यशमाया राजोरा
दौसा

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

आज आधुनिकता की अंधाधुंध दौड़ में विश्व के सभी देशों की गति पर कोरोना संकट ने ब्रेक लगा दिया हैं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि कोरोना संकट का प्रभाव तेज़ी से पूरे विश्व में फैल रहा है। वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार कोरोना एक वायरस है, और इसकी शुरूवात चीन के हुवेई प्रांत के वुहान शहर में घातक बीमारी के रुप में देखने को मिला है। यह वायरस एक इंसान से दूसरे इंसान में फैलता है, इस बीमारी का प्रकोप दुनियाभर में फैल चुका है। कोरोना संकट का प्रभाव पूरे विश्व पर मंडरा रहा है। दुनियाभर में तेजी से फैल रहा घातक कोरोना संकट के प्रभाव से वैश्विक अर्थव्यस्था को बुरी तरह से प्रभावित किया है। इसके चलते भारत की नहीं पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था की हालत खराब है। कोरोना वायरस 21 वीं शताब्दी की पहली ऐसी विकराल विभिषिका हो गई, जिसने मानव को मानव से अलग कर दिया।12 मई 2020 को आत्मनिर्भर भारत अभियान की घोषणा की गई। ''आत्मनिर्भर भारत अभियान'' की मूल अवधारणा एक महत्वकांक्षी परियोजना है। जिसका उद्देश्य सिर्फ़ कोरोना संकट के दुष्प्रभावों से लड़ना नहीं, बल्कि भविष्य के भारत का पुननिर्माण करना है।

संकेताक्षर : *कोराना प्रभाव, आत्मनिर्भर भारत, स्वदेशी संसाधन, स्वदेशी प्रौद्योगिकी (लोकल मैन्यूफैक्चरिंग) स्थानीय विनिर्माण (लोकल मार्केट) स्थानीय बाजार, संसाधनों मेंड इन इंडिया से मेंड फॉर द वर्ल्ड।*

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कोरोना संकट के खिलाफ बहुत सर्तक, निर्णायक कदम उठाने से देश में इस वायरस के प्रसार को धीमा करने में मदद मिली है। भारत को अन्य देशों से अलग खड़ा किया। प्रधानमंत्री द्वारा देश को महत्वपूर्ण क्षति से बचाने की त्वरित कार्रवाई को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सराहा जा रहा है। केंद्र सरकार ने समय रहते देशव्यापी लॉकड़ाउन लागू करने का फैसला करके पूरे देश को एक सूत्र में बांधा है। देश की जनता पूरी तरह प्रधानमंत्री मोदी के साथ खड़ी नजर आ रही है। देश में लॉकड़ाउन लागू करते समय चिकित्सा सेंवाओं की दृष्टि से भारत का दुनिया में 115 वां स्थान था। उस वक्त देश में एकमात्र पुणे में कोरोना जॉच की बायों लेबोरेटरी कार्यरत थी।

कोरोना संकट का प्रभाव

दुनियाभर में तेजी से फैल रहा घातक कोरोना संकट के प्रभाव से वैश्विक अर्थव्यस्था को बुरी तरह से प्रभावित किया है। इसके चलते भारत की नहीं पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था की हालत खराब है। वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग और आपूर्ति दोनों पर असर पड़ा है। कोरोना संकट का प्रभाव दुनिया के व्यवसायों पर साफतौर पर देखा जा सकता है। भारत की अर्थव्यवस्था पर भी कोरोना संकट का प्रभाव काफी पड़ा है। देशभर में कोरोना के कारण लॉकड़ाउन की वजह से सभी फैक्ट्री, ऑफिस, मॉल्स, शिक्षण संस्थाऐ, उद्योग एवं व्यवसाय बन्द है। लॉकड़ाउन के कारण लोगों की आमदनी को स्त्रोत कम हो गये। इस कारण घरेलू आपूर्ति पर भी विशेष प्रभाव पड़ा है। दुनिया लॉकडाउन में घरों में सिमट कर रह गई। इस संकट के समय पूरी दुनिया का आय स्त्रोंत कम हो गया। देशभर में लॉकडाउन की वजह से लोगों की आवाजाही बन्द हो गई। मानव जीवन अस्त-व्यस्त हो गया। यातायात, परिवहन, उद्योगों, एयरपोर्ट, पर्यटन, सभी पर इसका प्रभाव पड़ा है। मानव जीवन की जीवन शैली पूरी तरह से कोरोना संकट के प्रभाव से जूझ रही है।

कोरोना संकट का प्रभाव वैश्विक प्रसार के साथ–साथ प्रत्येक समाज की विसंगतियां भी सामने आ रही है। चाहे वह विकसित देश हो या विकासशील देश हो कोरोना संकट से निपटने के लिए किसी भी देश की कोई तैयारी नहीं है। इक्कीसवी सदीं में मानवता की सुरक्षा को लेकर कोई भी देश काम नहीं कर पाये। इस (वायरस) कोरोना का प्रभाव उच्च वर्ग, निम्न वर्ग,सभी वर्गो पर पड़ा है। कोरोना संकट का प्रभाव सबसे ज्यादा निम्न वर्ग पर पड़ा हैं। उनके पास पर्याप्त संसाधन नहीं है। मजदूरों के पास सुविधाओं का अभाव है। सोशल डिस्टेंसिंग का पालन नहीं कर पायेगे। क्योंकि वो इस बीमारी के बारे में ज्यादा जागरुक नहीं है। इंटरनेशनल लेबर ऑर्गनाइजेशन ने कहा है कि कोरोना वायरस वैश्विक स्वास्थ्य संकट नहीं बल्कि एक बड़ा लेबर मार्केट (श्रमिक बाजार) और आर्थिक संकट बन गया है। भारत को आर्थिक व्यवस्था के संकट को संभालने के लिए प्रतिभाशाली अर्थशास्त्रियों की कमेटी का गठन करना चाहिए। अर्थव्यवस्था को सही स्थिति मे लाने के लिए चरणबद्ध तरीके से नीतिगत समाधान निकाले जिससे अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाया जा सके।

कोरोना वायरस 21 वीं शताब्दी की पहली ऐसी विकराल विभिषिका हो गई। जिसने मानव को मानव से अलग कर दिया। सामाजिक रुप से व्यक्ति कट गया। जीवन के इस महासमर में मरने वालों को केवल गिना जा सकता है मनुष्य को पहचाने की फुर्सत किसी को नहीं है। सामूहिक दाह संस्कार की इस घड़ी में सभी प्रार्थना सभाए, उठावणे और हरी कीर्तन बंद है और मंदिरों में सन्नाटा है। मृत्यु और जीवन के संघर्षकाल में दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी आबादी और सबसे बड़ा लोकतंत्र भारत भी सामाजिक आपातकाल के चक्रव्यूह में फसा हुआ है।

जान और जहान तथा ज्ञान और विज्ञान इतना अविश्वसनीय हो गया है कि कोरोना संकट का प्रभाव मानव जीवन के लिए एक समस्या बन गई। जहॉ मानव के चारों ओर मौत का तॉड़व हो रहा है। संसार का सर्वशक्तिमान देश अमेरिका भी इस कोरोना संकट से ग्रसित है। कोरोना का त्रासदी रुप राजनीतिक रुप में भी देखने को मिला है, 21 दिवस के पूर्ण लॉकडाउन के निर्णय से मजदूर, गरीब वर्ग, अपने गृह राज्य से दूर के राज्यों में कार्यरत पलायन के लिए मजबूर हो गया और जीवनयापन के लिए कठिन संघर्ष का सामना करना पड़ रहा है । कोरोना के दौर में उनकी स्थिति दयनीय हो गई।कोरोना संकट के कारण व कार्य के अभाव में सब बेघर हो गये।कोरोना संकट का प्रभाव समाज में रहने वाले प्रत्येक वर्ग पर पड़ा है। कोरोना एक ऐसी माननीय त्रासदी है जो कि मनुष्य को मनुष्य का संक्रमण के द्वारा दुश्मन बनाती है तथा अलगाव एवं सामाजिक दूरी ही इसका एक मात्र इलाज है।

कोरोना संकट के प्रभाव से निपटने के लिए माननीय प्रधानमंत्री जी के कुशल नेतृत्व सराहनीय रहा है। सच्चा नेतृत्व संस्थागत सुधार को प्रेरित करने और प्रोत्साहित करने के बारे में होता है। परिर्वतनकारी नेतृत्व वह है जो न केवल तात्कालिक चुनौती से जूझता है, बल्कि देश को पहले से अधिक मजबूत बनाने के लिए तैयार करता है। भारत सौभाग्यशाली है कि इस समय प्रधानमंत्री मोदी जी देश का नेतृत्व कर रहे है। किसी देश पर कोई संकट आता है तो वह उसके शीर्ष नेतृत्व को एक से अधिक तरीकों से परखता है।कोरोना संकट के प्रभाव को दूर करने के लिए माननीय प्रधानमंत्री मोदी जी ने आत्मनिर्भर भारत अभियान की शुरूआत की है।

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा

आत्मनिर्भर (स्वदेशी) स्वदेशी शब्द संस्कृत से लिया गया है और यह संस्कृत के दो शब्दों का एक संयोजन है। 'स्व' का अर्थ है 'स्वय' और 'देश' का अर्थ है देश। स्वदेशी का अर्थ अपने देश से है, 'अपने देश का' अथवा 'अपने देश में निर्मित' लेकिन व्यवहारिक संदर्भो में इसका अर्थ ''आत्मनिर्भर'' के रुप में लिया गया है। भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का भारत को आत्मनिर्भर राष्ट्र बनाने का सपना है।

12 मई 2020 को आत्मनिर्भर भारत अभियान की घोषणा की गई। ''आत्मनिर्भर भारत अभियान'' की मूल अवधारणा एक महत्वकांक्षी परियोजना है। जिसका उद्देश्य सिर्फ़ कोरोना संकट के दुष्प्रभावों से लड़ना नहीं, बल्कि भविष्य के भारत का पुनर्निर्माण करना है। ''अब एक नई प्राणशक्ति, नई संकल्पशक्ति के साथ हमें आगे बढ़ना है''। माननीय प्रधानमंत्री जी से पहले आजादी के समय महात्मा गांधी जी ने भी स्वदेशी भारत की पहल की थी। जिन्होने देश में स्वदेशी सामानों के निर्माण के लिए पुरजोर आवाह्न किया। गांधी जी ने स्वयं ने चरखा चलाकर कपड़ा बनाया। स्वदेशी संसाधन, स्वदेशी प्रौद्योगिकी और स्वदेशी मानव संसाधनों के आधार पर विकास करने की मानसिकता अपनाने पर जोर दिया।

आत्मनिर्भर भारत अभियान

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कोरोना संकट के खिलाफ बहुत सर्तक,निर्णायक कदम उठाने से देश में इस (वायरस) के प्रसार को धीमा करने में मदद मिली है। भारत को अन्य देशों से अलग खड़ा किया। प्रधानमंत्री द्वारा देश को महत्वपूर्ण क्षति से बचाने की त्वरित कारवाई को राष्ट्रीय और अन्तराष्ट्रीय स्तर पर सराहा जा रहा है। विपत्ति के समय ही पता लगता है कि आप कितना तैयार हो चुनौती से लड़ने के लिए। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत न केवल कोरोना (वायरस) के खिलाफ एक उत्साही लड़ाई लड़ रहा है बल्कि भारत खुद को सावधानीपूर्वक तैयार भी कर रहा है। कोरोना के संकट से जूझते हुए दुनिया के अन्य देशों की तुलना में भारत ने कोरोना संक्रमण पर काफी हद तक काबू पा लिया है। केन्द्र सरकार की सर्तकता के चलते देश में कोरोना संक्रमण तीसरी स्टेज पर नहीं पहुच पाया हैं। इसी कारण देश में कोरोना का सामुदायिक विस्तार नहीं हो सका है। समय रहते देश में लॉकडाउन लागू करना मोदी सरकार का महत्त्वपूर्ण फैसला था जिसकी आज हर कोई सराहना कर रहा है।

भारत जैसे बड़ी आबादी वाले देश में एकाएक सम्पूर्ण लॉकड़ाउन का फैसला करना मजबूत नेतृत्व का ही परिणाम है। केंद्र सरकार ने समय रहते देशव्यापी लॉकड़ाउन लागू करने का फैसला करके पूरे देश को एक सूत्र में बांधा है। देश की जनता पूरी तरह प्रधानमंत्री मोदी के साथ खड़ी नजर आ रही है। देश के सभी लोग लॉकड़ाउन की पालना में केंद्र व राज्य सरकारों को पूरा सहयोग दे रहे है। देश में लॉकड़ाउन लागू करते समय चिकित्सा सेंवाओं की दृष्टि से भारत का दुनिया में 115 वां स्थान था। उस वक्त देश में एकमात्र पुणे में कोरोना जॉच की बायों लेबोरेटरी कार्यरत थी। कोरोना संकट के भारत में आहट के साथ ही केंद्र सरकार ने देशभर मे तेजी से जॉच लैबोरेट्रेरीज की संख्या में विस्तार हो रहा है। कोरोना संकट के बाद केंद्र सरकार ने कोरोना की रोकथाम के लिए आवश्यक चिकित्सा उपकरण, जांच किट, जरुरी दवाएं अन्य सामानों को तेजी से उपलब्ध करवाये।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा है कि कोरोना संकट की वजह से प्रोफेशनल्स की जिंदगी में काफी बदलाव हुआ है। इन दिनों घर हमारे लिए ऑफिस (वर्क फ्राम होम) बन गए हैं व इंटरनेट हमारे लिए नए मीटिंग का रुप बन गया हैं। इस समय दुनिया नए बिजनेस मॉडल्स की दिशा में बढ़ रही है। कोरोना संकट के बाद भी युवा ऊर्जा से भरपूर भारत दुनिया को नया बिजनेस मॉडल देगा। कोरोना संकट से अहसास हो गया कि दुनिया को नए बिजनेस मॉडल की जरुरत है। उन्होंने अंग्रेजी के पांच स्वरों (वॉवेल्स) से नए मॉडल की रुपरेखा बताई है। उन्होने ए,ई,आई, ओ और यू पर आधारित बिजनेस और वर्क कल्चर के लिए इन शब्दों का प्रयोंग किया है। कोरोना संकट के प्रभाव को खत्म करने में और अर्थव्यवस्था को सुधारने में पांचों पहलू किसी भी बिजनेस मॉडल के लिए अहम हिस्सा होगे।

- A अनुकूलता (ADAPTABILITY) आसानी से अपनाए जा सकने वाले मॉडल्स। ऐसा करने से संकट में भी हमारे कामकाज की गति प्रभावित नहीं होगी।
- E दक्षता (EFFICIENCY) हमने ऑफिस में कितना समय बिताया यह दक्षता नहीं। उत्पादकता और दक्षता को ज्यादा तवज्जों वाले मॉडल्स की जरुरत।
- I समावेशिता (INCLUSIVITY) किसानों को सूचनाओं, मशीनरी और बाजारों तक पहुंचाने वाले इनोवेशन में निवेश करना चाहिए।
- O अवसर (OPPORTUNITY) विचार करें कि संकट में कौन से नए मौके बन सकते हैं। भारत को कोरोना के बाद की अपनी क्षमता का प्रदर्शन करना ही होगा।
- U सार्वभौमिकता (UNIVERSALISM) कोरोना धर्म, जाति, पंथ, भाषा, या सीमा नहीं देखता। एकता, भाईचारे के रुप में हमें उभरना चाहिए।

कोरोना संकट के दौरान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने आत्मनिर्भर भारत अभियान की घोषणा की है। इसके लिए 20 लाख करोड़ रु की आर्थिक पैकेज की घोषणा की है। देश की विकास यात्रा को और आत्मनिर्भर भारत को नई गति देगा। इस पैकेज मे लैंड, लैबर, लिक्विडिटी और लॉ सभी पर बल दिया गया है।

पैकेज में कुटीर उद्योग, लघु उद्योग, एमएसएमई के लिए है। जो करोड़ों लोगों की जीविका का साधन हैं। आर्थिक पैकेज देश के उस श्रमिक के लिए उस किसान (कृषि) के लिए है, जो हर स्थिति और हर मौसम में देशवासियों के लिए परिश्रम कर रहा है।

आत्मनिर्भर बनने का संकल्प एक श्लोक के जरिए बताया है।

"सर्व परवशं दुःखं
सर्वमात्मवशं सुखम्"।

अर्थात जो दूसरों के वश में होता है, वह दुःख है। जो अपने वश में होता है, वह सुख है।

आत्मनिर्भरता की इमारत के 5 स्तंभ बताये हैं–

1. इकोनॉमीः जो इंक्रीमेंटल चेंज नही, बल्कि क्वांटम जम्प लगाए ।

2. इंफ्रास्ट्रक्चर : जो आधुनिक भारत की पहचान बने। बड़ा बदलाव कराए।

3. सिस्टम : जो बीती शताब्दी का नहीं 21 वीं टेक्नोलॉजी पर आधारित हो।

4. डेमोग्राफीः सबसे बड़ी डेमोक्रेसी में वायब्रेंट डेमोग्राफी हमारी ताकत है।

5. डिमांड : हमारी अर्थव्यवस्था में डिमांड और सप्लाई चेन के चक्र और ताकत को पूरी क्षमता से इस्तेमाल करना जरुरी है। डिमांड बढ़ाने और इसे पूरा करने के लिए सप्लाई चेन के हर स्टेक होल्डर का सशक्त होना जरुरी है।

कोरोना संकट ने हमें (लोकल मैन्यूफैक्चरिंग) स्थानीय विनिर्माण (लोकल मार्केट) स्थानीय बाजार का महत्व समझाया है। (लोकल) स्थानीय ने ही हमारी मांग पूरी की समय ने हमें सिखाया है कि (लोकल) स्थानीय को अपना जीवन मंत्र बनाना होगा। आज जो (ग्लोबल ब्रांड) वैश्विक नाम है, वो भी कभी (लोकल) स्थानीय थे। जब वहां के लोगों ने उनका इस्तेमाल और प्रचार किया तो वे प्रोडेक्ट (ग्लोबल) वैश्विक बन गए। इसलिए हमें भी (लोकल) स्थानीय का प्रचार करना होगा। मेंड इन इंडिया से मेंड फॉर द वर्ल्ड की जरूरत है।

1. आत्मनिर्भर भारत अभियान 20 लाख करोड़ के प्रथम पैकेज में पूरे आर्थिक पैकेज का ब्यौरा वित्तमंत्री निर्मला सीतारमण और राज्यमंत्री अनुराग ठाकुर ने दी है। मंत्रालय और चैरिटेबल ट्रस्ट, नॉन प्रॉफिट बिजनेस, (कोऑपरेटिवस) सहकारिता एंड स्मॉल पार्टनरशिप्स के लंबित टैक्स रिफंड समेत कुल 16 घोषणाएं की गई।

2. आत्मनिर्भर भारत अभियान के दूसरे पैकेज में किसानों, मजदूरों और मध्यम वर्ग के लिए 9 महत्त्वपूर्ण घोषणाएं की।

3. आत्मनिर्भर भारत अभियान के तीसरे पैकेज में 8 किसानों और खेती से जुड़े आधारभूत ढांचे के बारे में रही। बाकी तीन घोषणाएं प्रशासनिक सुधारों को लेकर है। कुल 11 घोषणाएं की।

4. आत्मनिर्भर भारत अभियान के चौथे पैकेज में 8 क्षेत्रों–कोयला, खनिज, रक्षा, उत्पादन, नागर विमानन, एयरपोर्ट एयरोस्पेस प्रबंधन, स्पेस, परमाणु ऊर्जा, केंद्र शासित प्रदेशों में विद्युत वितरण और सामाजिक अवसंरचना में ढांचागत सुधारों की घोषणा की।

5. आत्मनिर्भर भारत अभियान का पांचवॉ पैकेज गैर–रणनीतिक सार्वजनिक उपक्रमों को छोड़कर तमाम सरकारी कंपनियो के निजीकरण का रास्ता खोल दिया।

आत्मनिर्भर पैकेज चरणवार

चरण–1ः 5,94,550 करोड़ रूपये

चरण–2ः 3,10,000 करोड़ रूपये

चरण–3ः 1,50,000 करोड़ रूपये

चरण–4ः व 5ः 48,100 करोड़ रूपये

पहले घोषित 1,92,800 करोड़ रूपये

आरबीआइ उपाय 8,01,603 कुल 20,97,053 करोड़ रूपये

निष्कर्ष

कोरोना संकट की वजह से प्रोफेशनल्स की जिंदगी में काफी बदलाव हुआ है। इन दिनों घर हमारे लिए ऑफिस (वर्क फ्राम होम) बन गए हैं व इंटरनेट हमारे लिए नए मीटिंग का रुप बन गया हैं। कोरोना ने कितना कुछ बदल दिया है, इस कोरोना संकट से अहसास हो गया कि दुनिया को नए बिजनेस मॉडल की जरुरत है। प्रधानमंत्री जी ने अंग्रेजी के पांच स्वरों (वॉवेल्स) से नए मॉडल की रुपरेखा बताई है। उन्होने ए,ई,आई, ओ, और यू पर आधारित बिजनेस और वर्क कल्चर के लिए इन शब्दों का प्रयोंग किया है।

आज आधुनिकता की अंधाधुंध दौड़ में विश्व के सभी देशों की गति पर कोरोना संकट ने ब्रेक लगा दिया हैं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि कोरोना संकट का प्रभाव तेज़ी से पूरे विश्व में फैल रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मिश्रा, उदित (13 मई 2020) "पीएम मोदी का आत्मनिर्भर भारत मिशन आर्थिक पैकेज" (द इडियन एक्सप्रेस)*
2. *निर्मला सीतारमण विकास को बढ़ावा देने के लिएः "पीएम मोदी का आत्मनिर्भर भारत मिशन (हिंदुस्तान टाइम्स 13 मई 2020)*

3. आत्मनिर्भर भारत : स्थानीय लोगों के लिए स्वर की उछाल (द न्यू इंडियन एक्सप्रेस 2 जून 2020)
4. मिश्रा हरि (2 जून 2020) कोविड़–19 आत्मनिर्भर भारत : एक औद्योगिक और कृषि क्रांति में प्रवेश करने का समय (बिजनेस टुडे)
5. द हिन्दू
6. द इंडियन एक्सप्रेस
7. हिन्दुस्तान टाइम्स
8. सत्याग्रह
9. पत्रिका
10. दैनिक नव ज्योति
11. अमर उजाला
12. दैनिक भास्कर
13. जागरणन्यूज चैनल 10.जी न्यूज
14. इण्डिया टी वी
15. राजस्थान न्यूज
16. पत्रिका न्यूज

Wikipedia

1. https://www.naidunia.com
2. https://www.sansarlochan.in
3. https://www.pmmodiyojna.in
4. https://www.rajras.in
5. https://www.sanmarg.in
6. https://www.jansatta.com
7. https://economictimes.indiatimes.com
8. https://indianexpress.com
9. https://www.the hindi.com
10. https://jansandeshtimes.page
11. https://www.indiathinkers.com
12. https://www.swadeshnews.com
13. https://www.sarkariyojna.com
14. https://www.zeenews.india.com

द्वितीय महायुद्ध में सार्दुल इन्फेण्ट्री का योगदान

डॉ. हेमलता कंसारा
जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

राज्य की सैनिक इन्फ्रेन्ट्री एवं रिसाला के अन्तर्गत लार्ड डफटिन ने देशी राज्यों की सेनाओं में आवश्यक सुधार के उद्धेश्य से इण्डियन इम्पीरियल सर्विस कैवेलरी को देशी राज्यों में रखना प्रारम्भ किया। इस केवेलरी के सैनिक जहां एक तरफ उस राज्य की रक्षा करते वहीं दूसरी तरफ उस समय में विद्यमान देशी शासकों की सेना को भी आधुनिक ढंग से प्रशिक्षित करते थे। बीकानेर राज्य में भी इम्पीरियल सर्विस केवेलरी बिग्रेड की तरह एक बिग्रेड तैयार की गई। इस बिग्रेड में इन्फ्रेन्ट्री व रिसाले को स्थान प्रदान किया गया। रेग्युलर स्टेट केवेलरी का गठन का अध्ययन किया गया। इन्फ्रेन्ट्री व रिसाले की प्रबन्ध व्यवस्था एवं प्रशिक्षण व्यवस्था की आदि की पूरी व्यवस्था की गई। कमाण्डर-इन-चीफ रिसाले की सभी बिग्रेडियर का मुख्य सेनापति होता था। रिसाले का प्रत्येक बिग्रेडियर का मुख्य अधिकारी कमाण्डर होता था। सेकेण्ड इन कमाण्डर, हवलदार, सूबेदार, रिसालेदार आदि प्रमुख अधिकारी होते थे। बीकानेर राज्य में गंगा रिसाले तथा इन्फ्रेन्ट्री में सैनिक अधिकारियों की भर्ती, पदोन्नति, वेतन, अवकाश, उपस्थिति आदि के बारे में अध्ययन करने के साथ ही बीकानेर की सेना को आधुनिकता में लाने वाले सर गंगा सिंह जी की सैनिक सेवाओं का भी वर्णन किया गया है। गंगा रिसाले का गठन करना निःसन्देह अंग्रेजी सम्पर्क का परिणाम था। इस रिसाले की प्रशासनिक व्यवस्था के साथ ही प्रथम महायुद्ध एवं द्वितीय महायुद्ध तक जो उपलब्धियां हासिल की, उसका सम्यक् उल्लेख इस अध्याय में किया गया है। इसी अध्याय में शार्दुल लाइट इन्फ्रेन्ट्री दो अन्य बटालियनों, सेकेण्ड इन्फ्रेन्ट्री व थर्ड इन्फ्रेन्ट्री का भी अध्ययन किया गया है।

संकेताक्षर : *द्वितीय महायुद्ध, सार्दुल इन्फेक्ट्री, बीकानेर, गंगा सिंह, केवेलरी गंगा रिसाला।*

द्वितीय महायुद्ध आरम्भ होते ही भारत स्थित अग्रेज सरकार ने इण्डियन स्टेटस फोर्सेज की सभी टुकड़ियों को युद्ध में भाग लेने के लिए तैयार करने को कहा। बीकानेर राज्य को भी युद्ध में सैनिक सहायता देने के लिए कहा गया। यहां पर सरदार इण्फेण्ट्री के सैनिकों को युद्ध में अग्रेजों की सहायता के लिए भेजने का निश्चय हुआ। बीनकानेर राज्य को सैनिक विभाग के आदेशानुसार सार्दुल इन्फेण्ट्री के अधिकारियों व सैनिको को प्रशिक्षण, युद्धाभ्यास आदि दिया जाने लगा।

नवम्बर 1939 ई. को दि बीकानेर ट्रेनिंग कम्पनी का गठन कर इस कम्पनी की मार्फत सैनिकों को युद्ध का कठोर प्रशिक्षण दिया जाने लगा। भारत सरकार ने यह निर्णय लिया कि बीकानेर के सार्दुल इन्फेन्ट्री बटालियन को भारत से बाहर युद्ध स्थल के लिए नहीं भेजा जाकर उसे भारत में ही ब्रिटिश साम्राज्य को आन्तरकि सुरक्षा कार्यो के लिए एवं उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त पर सीमा सुरक्षा के लिए भेजा जाएगा। 1940 ई. में महाराजा ने ब्रिगेडियर बाघसिंह के साथ सार्दुल इन्फेण्ट्री के सैनिकों के युद्धाभ्यास को देखा एवं उनकी परेड का निरीक्षण किया।

14 दिसम्बर 1946 ई. को सार्दुल इन्फेण्ट्री की बटालियन ने युद्ध में अंग्रेजों की सहायता के उद्देश्य से बीकानेर के दो विशेष ट्रेनों द्वारा पलाना के लिए प्रस्थान किया। युद्ध में भाग लेने के लिए प्रस्थान करने वाली बटालियन के साथ ठाकुर जीवराजसिंह जनरल जयदेवसिंह, कर्नल कंवर बाघसिंह आदि थे।

इस इन्फेण्ट्री के युद्ध में भाग लेने के लिए प्रस्थान करने वाली बटालियन में सैनिकों की संख्या इस प्रकार थी।

यूनिट का नाम	1939–40	1940–41	1941–42
आमी हैडक्वार्टर	8	8	8
विजय बैटरी	236	270	270
कैमल पैक बैटरी	20	20	20
डूंगर लारेन्स	333	341	333
गंगा रिसाला	588	609	613
सार्दुल लाइट इन्फेण्ट्री	653	891	900
सेकण्ड इन्फेण्ट्री बटालियन	680	696	674
थर्ड इन्फेण्ट्री बटालियन	385	347	358
मोटर मशीनगन सेक्शन	96	95	97
ट्रेनिंग बटालियन	34	34	30
ब्राण्ड	.	52	154
आर्टिलरी ट्रेनिग सेण्टर	.	.	525
कुल	3110	3774	4480

21 मार्च 1940 को पलाना पहुँचने के बाद इन्फेण्ट्री की बटालियन को अम्बाला नामक स्थान पर प्रशिक्षण लेने के लिए भेजा गया। अम्बाला में इस इन्फेण्ट्री के सैनिकों ने युद्ध का अभ्यास किया एवं उच्च अंग्रेज सैन्य अधिकारियों के सान्निध्य में रहकर युद्ध कला के नवीन आयामों को सीखा। 1941 ई. में अत–ब्रिगेड हुआ जिसमें इन्फेण्ट्री के सैनिकों ने भी भाग लिया। अप्रेल 1941 ई. में इन्फेण्ट्री के सैनिकों को क्वेटा जाने का आदेश मिला। क्वेटा से इन्फेण्ट्री को भारतीय फोर्सेज के अन्य सैन्य रेजिमेण्टों के साथ कराची भेजा गया। यहां से इन्फेण्ट्री को अफ्रीका में अबिसीनिया नामक स्थान पर भेजा गया।

कराची से इन्फेण्ट्री को दी नाभा इन्फेण्ट्री. विजय वैअरी के ब्रिगेड के साथ नौ सैनिक जहाजो द्वारा अफ्रीका के लिए रवाना किया। 22 जून, 1941 ई. को इन्फेण्ट्री मसावा पहुंची। यहां पर इन्फेण्ट्री ने खन्दके खोदने का कार्य किया एवं साथ ही युद्ध अभ्यास निरन्तर जारी रखा। मसावा, एसमारा,अदियूगरी आदि स्थानों पर निरन्तर चौकसी करते हुए सैनिकों ने अबिसीनिया की सीमा चौकी पर सीमा रक्षक के रूप में कार्य किया।

1942 ई. में इन्फेण्ट्री को मिश्र भेजा जाना तय हुआ। मिश्र व जेरूसलम में इन्फेण्ट्री राष्ट्रों के सैनिकों की सहायता की एवं स्वेज नहर की तुर्की आक्रमणकारियों के हमलों से रक्षा की। मिश्र में इन्फेण्ट्री के सैनिकों ने छटपुट युद्धों में भाग लेने का अवसर मिला। यहा पर इन्फेण्ट्री के वीरतापूर्वक कार्यों से प्रभावित होकर इसे युद्ध अभियानों में हिस्सा लेने का मौका प्रदान किया गया।

बीकानेर में ट्रेनिंग बटालियन केन्द्र

सैनिक प्रशासन में प्रशिक्षण महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था। प्रशिक्षण के अभाव में सैनिक निरर्थक होते थे। प्राचीन काल से ही सैनिकों को युद्ध के विभिन्न आयामों जैसे तलवार चलाना, भाले से शत्रु पर आक्रमण करना आदि का प्रशिक्षण दिया जाता रहा है। शस्त्र विद्या के इन प्रशिक्षणों के अलावा सैनिक को घुड़सवारी, ऊँट सवारी एवं महावत आदि का भी प्रशिक्षण दिया जाता था।

प्रशिक्षण न केवल सैनिकों को बल्कि युद्ध में काम आने वाले पशुओं को जैसे अश्वों, ऊँटों, हाथ्यों, खच्चरों आदि को भी युद्धकला का प्रशिक्षण दिया जाता था। इतिहास गवाह है कि युद्ध में सैनिकों व अस्त्र–शस्त्रों की संख्या से ज्यादा महत्व प्रशिक्षण का था।

मध्यकाल में सैनिकों को नये–नये अस्त्र–शस्त्रों का भी प्रशिक्षण दिया जाने लगा। तोपों–बन्दूकों का आविष्कार होने के कारण सैनिकों को अन्य पारस्परिक अस्त्र–शस्त्रों के साथ–साथ इन अस्त्र–शस्त्रों के साथ–साथ इन अस्त्र–शस्त्रों के प्रयोग का ज्ञान भी करवाया जाने लगा।

20वीं शताब्दी के प्रथम दशक तक बीकानेर राज्य का अपना कोई प्रशिक्षण केन्द्र नहीं था। सैनिकों को एवं उच्च सैन्य अधिकारियों को आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण के लिए भारत के अन्य राज्यो, रियासतों में स्थित प्रशिक्षण केन्द्र में भेजा जाता था। अधिकारियों व रेजिमेण्ट के सैनिकों को नवीन अस्त्र–शस्त्रों की जानकारी लेने युद्ध के समय सन्देशों को अध्ययन करने, प्राथमिक चिकित्सा का ज्ञान हासिल करने आदि के लिए ब्रिटिश भारत में चल रहे विशेष सैन्य प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में भेजा जाता था। इस समय तक बन्दूक, तोपें, मशीनगनें आदि चलाने एवं इनके बारे में जानकारी देने का प्रमुख केन्द्र मेरठ में था। पशु चिकित्सा सम्बन्धी जानकारी के लिए पूना, सामान्य प्रशिक्षण के लिए अम्बाला में स्थित था।

अश्व सेना को प्रशिक्षित करने के उद्देश्य से 1922 ई. में बीकानेर में एक प्रशिक्षण केन्द्र का गठन किया गया। 1922 ई. में गंगा रिसाले की दो रेजीमेण्टों के स्थान पर एक ही रेजीमेण्ट रखी गई एवं एक रेजीमेण्ट में 4 स्क्वाड्रन को प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा।

1939 ई. में इस रिजर्व स्क्वाड्रान से बीकानेर ट्रेनिंग बटालियनश के नाम से एक प्रशिक्षण केन्द्र का पुनर्गठन किया गया एवं इसे गंगा रिसाला ट्रेनिग सेण्टर बनाया गया।

1943 ई. की गंगा रिसाला ट्रेनिंग सेण्टर को बीकानेर लासर ट्रेनिंग बटालियन के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।

बीकानेर के ट्रेनिंग बटालियन ने आरम्भ से ही ख्याति अर्जित की थी। स्थापना के समय इसके मुख्य अधिकारी कैप्टन ठाकुर बाघसिंह थे, जिन्होंने अपने व्यक्तिगत प्रयासों से बीकानेर की घुडसवार व ऊँट सेना को आधुनिक ढग से प्रशिक्षित करवाया। सैनिकों की रिसाल मे भती करने के बाद 9 माह का प्रशिक्षण दिया जाने लगा। सर्वप्रथम शारीरिक व्यायाम के अलावा सैनिक को घुडसवारी का प्रशिक्षण दिया जाता था। घुडसवारी के प्रशिक्षण के उपरान्त उसे विभिन्न अत्याधुनिक अस्त्र–शस्त्रों को जानकारी देने के साथ–साथ उनका प्रयोग करना भी सिखाया जाता था। युद्ध के विभिन्न तरीको के अलावा युद्ध के समय शत्रु के आक्रमण से स्वयं की रक्षा करना, सिगनल का प्रयोग करना, खेज के रूप में कार्य करना. शत्रु की टोह लेना आदि बातों का प्रशिक्षण दिया जाने लगा।

1943 ई. ट्रेनिंग बटालियन की स्थापना की तो ब्रिगेडियर बाघसिंह को अनेक समस्याओं को सामना करना पड़ा। सबसे प्रमुख बीकानेर में योग्य प्रशिक्षको का अभाव था। सत्य यह है कि योग्य प्रशिक्षकों के अभाव में ट्रेनिंग सेण्टर की कोई उपयोगिता नहीं रह जाती। फिरोजपुर में सन्य अधिकारियों ने प्रशिक्षक के अलावा सेना के सामान्य नियमो युद्ध कला के विभिन्न तरीकों एवं आधुनिक अस्त्र–शस्त्रों की भी जानकारी ली।

बीकानेर में ट्रेनिंग बटालियन में आरम्भ में योग्य सैन्य अधिकारियों का अभाव रहा। काफी प्रयासों के बाद ले. बाघसिंह के अन्तर्गत इण्डियन ऑफिसर, 25 हवालदार नायक, सैनिक रखकर ट्रेनिंग बटालियन की युनिट तैयार की।

बीकानेर ट्रेनिंग बटालियन ने चार योग्य प्रशिक्षकों को भारतीय सेना विभाग से प्रतिनियुक्ति पर लिया गया। साथ ही न. 54 जी.पी. टी.सी. में प्रशिक्षक के रूप में कार्य कर रहे मि. नादिरशाह व मि. बनर्जी को प्रशिक्षण केन्द्र के पद पर नियुक्त किया। 1943 ई. ट्रेनिग बटालियन में कार्यरत अधिकारियों व सैनिकों, कर्मचारियों की संख्या निम्न थी–

2 कमीशन प्राप्त अधिकारी 5

सूबेदार, जमादार (इण्डियन ऑफिसर)

154 गैर कमीशन प्राप्त हवालदार, नायक, सैनिक आदि।

इन्फेण्ट्री के सैनिकों को इसी ट्रेनिग बटालियन के अधिकारी प्रशिक्षण देते थे। व्यवस्था यह थी कि प्रत्येक कम्पनी का कम्पनी ऑफिसर नये भर्ती हुए सैनिकों को सूबेदार या जमादार अर्थत् प्लाटून– कमाण्डर के मार्फत प्रशिक्षण दिलाएगा। इन्फेण्ट्री में इण्डियन ऑफिसर के लिए प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं थी। सामान्यतः उनके प्रशिक्षण के लिए अनय राज्यों के सैन्य प्रशिक्षण केन्द्र थे। भारतीय सैन्य सस्थान के प्रशिक्षण केन्द्रो में जाकर प्रशिक्षण लेना पड़ता था। इस प्रकार द्वितीय

महायुद्ध के आरम्भ होने तक इन्फण्ट्री के प्रशिक्षण के विषय में बीकानेर राज्य में कोई निश्चित व नियमित व्यवस्था नहीं थी।

बीकानेर के ट्रेनिंग बटालियन का मुख्य कार्य भारतीय सैन्य संस्थान के नियमों के अनुसार प्रथ्येक जवान को नियुक्ति तिथि से 9 माह तक प्रशिक्षण दिया जाता था। अवधि में उसे शारीरिक व्यायाम के अतिरिक्त डिल्स, राइफल चलाना, मशीनगन, सैन्य सकेतों का अध्ययन करना आदि युद्ध सम्बन्धी विभिन्न आवश्यक कलाओं का प्रशिक्षण दिया जाता था। द्वितीय विश्व युद्ध में आपातकाल के कारण प्रशिक्षण की अवधि छह माह की रखी गई थी।

सैनिकों को सामान्य शिक्षा के अलावा अंग्रेजी शिक्षा के अध्ययन पर भी विशेष ध्यान दिया जाता था। शिक्षा के लिए सैनिकों का तीन श्रेणियों में विभाजन किया गया था। श्रेणी तृतीय प्राथमिक शिक्षा के समकक्ष, श्रेणी द्वितीय उच्च प्राथमिक एवं श्रेणी प्रथम इण्टर शिक्षा के समकक्ष थी।

सैन्य अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था राज्य में उपलब्ध नहीं थी। रेग्युलर कमीशन प्राप्त करने के लिए अधिकारियों को देहरादून में इण्डियन मिलिट्री एकेडमी में जाकर प्रशिक्षण लेना पड़ता था। राजस्थान निर्माण के बाद बीकानेर राज्य के इन प्रशिक्षण केन्द्रों का विलय भारतीय सेना में कर दिया गया। बीकानेर सैनिक बोर्ड इस प्रकार सर गंगासिंह जी योद्धाओं के उत्तराधिकारी के रूप में एक सच्चे राजपूत थे, जो सैनिक प्रशिक्षण के पश्चात् अपने आप में अद्वितीय सैनिक बनकर आये अपने सैनिकों के साथ भारतीय सेना की एक रेजीमेण्ट के साथ उन्होने देवली में सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त किया। जूर 1900 ई में उनको ब्रिटिश सेना में ऑनरेरी मेजर का पद प्रदान किया गया। वे उस समय सबसे कम आयु के मेजर थे। 1901 में उनको ले. कर्नल का. 1910 में कर्नल का, 1917 में मेजा जनरल का, 1930 में ले. जनरल का पद प्रदान किया। 1937 ई. में उनका पूर्ण जनरल पद प्राप्त हुआ। वे पहले शासक थे, जिनको यह पद प्रदान किया गया था। गंगासिंहजी ने 1900 ई. में टिपन्स्टीन में चीनी लड़ाई में गंगा रिसाले का नेतृत्व किया था। प्रथम विश्वयुद्ध में उन्होंने भारतीय सेना के सातवे डिवीजन में स्टाफ ऑफिसर के रूप में, 1914 में फ्रास में कर्तव्य निर्वहन किया, वे कमाण्डर इन चीफ सर जान फ्रेंच के स्टॉफ में शामिल हुए. जो बाद में साईप्रस के अर्ल बने थे। 1915 में उन्होंने मिश्र में इस्लामिया के फरी पोस्ट पर गगा रिसाला का नेतृत्व किया। वहां उन्होने अपने रिसाले का नेतृत्व करते हुए तुर्की शत्रु दल का पीछा किया और स्वेज नहर के पास भागने के लिए विवश कर दिया। महाराजा गंगासिहजी ने यह साबित कर दिया कि वे एक कूटनीतज्ञ शासक ही नहीं, बल्कि लडाई के मैदान में शूरवीर योद्धा भी हैं। किसी कवि ने कहा है कि आदि धर्म छिती–छत्र कुल, पूरन, जैज प्रतीप।

दान करन मारन मरन, राजपूता यह रीत।

1917 ई. में उनको शाही युद्ध मंत्रिमण्डल का सदस्य बनाया गया। उनको वारसलोज के शीश महल में हुई शान्ति परिषद के ऐतिहासिक दस्तोवजों पर हस्ताक्षर करने के लिए नियुक्त किया गया। द्वितीय विश्वयुद्ध में उन्होंने अदन में गगा रिसाले को भी सम्भाला।

संदर्भ ग्रंथ सूची

01. *रिपोर्ट ऑन द एडमिनिस्ट्रेटब ऑफ बीकानेर, 1939–40,पृ 88*
02. *रिपोर्ट ऑन द एडमिनिस्ट्रेटव आफै बीकानेर, 1941–42, पृ. 89*
03. *ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ बीकानेर एण्ड इट्स रूलरर्स, पृ. 20*
04. *रिपोर्ट ऑन द एडमिनिस्ट्रेटव आफै बीकानेर, 1921–22 पृ. 81*
05. *रिपोर्ट ऑनद एडमिनिस्ट्रेटव आफै बीकानेर, 1941–44,पृ. 83*
06. *बीकानेर एण्ड द वार, पृ. 30*
07. *रिपोर्ट ऑन द एडमिनिस्ट्रेटव आफै बीकानेर, 1942–44,490*

कॉरपोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी (CSR) का भारतीय शिक्षा व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में योगदान

संजय कुमार
सहायक आचार्य, स्व. राजेश पायलट राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बॉदीकुई

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

निगमीय सामाजिक उत्तदायित्व को एक प्रबंधन अवधारणा के रूप में परिभाषित किया जाता है। जिसके अर्न्तगत कम्पनियां अपने व्यापारिक हितधारको के साथ सामाजिक, पर्यावरण, सामुदायिक तथा चिकित्सा क्षेत्र में योगदान करती है। विशेषज्ञों द्वारा सरकार से निगमीय सामाजिक उत्तरदायित्व नियमों को आसान बनाने की मांग की जा रही है। जिससे सामाजिक योगदान का विस्तार हो एवं यथोचित शुद्धता के साथ इसका लेखांकन किया जा सकें। निगमीय सामाजिक उत्तरदायित्त्व (CSR) सरकार द्वारा पारित नियम है। जो कंपनी अधिनियम 2013 में उल्लेखित है। यह अधिनियम निगमीय क्षेत्र को विभिन्न क्षेत्रों में विनियोग करते हुए अपने उत्तरदायित्व निर्वाह का अवसर प्रदान करता है। शिक्षा के क्षेत्र में विनियोग या अंशदान करना सामाजिक उत्तरदायित्व का हिस्सा है। शिक्षा समाज के लिए आवश्यक है लेकिन इसकी गुणवत्ता को बनाये रखना चुनौती पूर्ण कार्य है। भारत एक अति जनसंख्या वाला देश है। जहाँ शिक्षा की गुणवत्ता को बनाये रखने का उत्तरदायित्व सरकारी तंत्र के साथ निजी क्षेत्र का भी है। इसलिए वर्तमान परिदृश्य में विश्व स्तर पर सी.एस.आर. के अर्न्तगत शिक्षा के विस्तार, विकास एवं गुणवत्ता बनाए रखने संबंधी सराहनीय कार्य किये गये है।

संकेताक्षर : *सामाजिक उत्तरदायित्व, प्रबंधन, हितधारकों, पर्यावरण,सामुदायिक, शिक्षा, गुणवत्ता, विनियोग, अंशदान, सी.एस.आर.।*

भारत में निगमीय सामाजिक उत्तरदायित्त्व (CSR) की अवधारणा को कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 135 के तहत नियंत्रित किया जाता है। इसकी निश्चित रूपरेखा तैयार कर अनिवार्य रूप से लागू करने वाला भारत पहला देश है। यह प्रावधान उन कंपनियो पर लागू होता है जिनकी शुद्ध कीमत 500 करोड से अधिक हो या कुल आवर्त 1000 करोड रूपये से अधिक हो या शुद्ध लाभ 5 करोड रूपये से अधिक हो। इसके लिए कम्पनियों को अपने पिछले तीन वर्षो के शुद्ध लाभों के औसत का 2 प्रतिशत CSR गतिविधियों पर व्यय करना होगा। इसके लिए कंपनियों को एक CSR समिति स्थापित करने की आवश्यकता है जो निदेशक मंडल को सी.एस.आर. नीति की सिफारिश करेगी एवं कार्य मूल्यांकन करती है। कंपनी अधिनियम की 7वीं अनुसूची सी.एस.आर. गतिविधियों की अनुसूची प्रदान करती है। जिसमें गरीबी व भूख का उन्मूलन, शिक्षा का प्रचार-प्रसार, लिंग समानता, नारी सशक्तीकरण, ह्यूमन इम्यूनो-डिफीसिएन्सी वाईरस, एक्वायर्ड इम्यून डेफिसिएंसी सिंड्रोम एवं अन्य बीमारियों से लड़ने की तैयारी, पर्यावरणीय संतुलन को सुनिश्चित करना, प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष या अनुसूचित जाति/जनजाति, महिला अल्पसंख्यक तथा अन्य पिछडा वर्ग के सामाजिक आर्थिक विकास और राहत के लिए केन्द्र या राज्य सरकार द्वारा गठित किसी कोष में योगदान आदि।

इंजेती श्रीनिवास समिति : यह समिति वर्ष 2018 में गठित हुई। समिति सी.एस.आर. की खर्च की जा सकी राशि को अगले 3 से 5 वर्षो की अवधि के लिए आगे बढाने की सिफारिश की है। समिति ने कंपनी अधिनियम के खण्ड-7 को संयुक्त राष्ट्र के सतत् विकास लक्ष्यों के अनुरूप बनाने की सिफारिश की है।

वर्तमान में कॉरपोरेट कार्य मंत्रालय ने कम्पनियों को कोविड-19 संबंधी राहत कार्यो में सी.एस.आर. निधि खर्च करने

की अनुमति है। टीकाकरण अधिनियम में सूचीबद्ध कंपनियों द्वारा लगभग 10000 करोड रूपये व्यय किये गये हैं इनमें से कई कंपनियों की ग्रामीण क्षेत्रो मे ंउपस्थिति है। जिससे ग्रामीण क्षेत्रो में भी सुविधा का लाभ प्राप्त हो सके। निगमीय क्षेत्र द्वारा कर्मचारियों के लिए सी.एस.आर. के तहत टीकाकरण किया गया। लेकिन कंपनियों द्वारा शिक्षा पर व्यय कई वर्षो से किया जा रहा हैं।

शिक्षा समाज की रीढ़ की हड्डी है। इसका प्रचार–प्रसार एवं गुणवत्ता को बनाये रखना सरकारी तंत्र के साथ निगमीय क्षेत्र की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यह शोध पत्र शिक्षा के विकास के लिए शीर्ष भारतीय कॉरपोरेट्स की विभिन्न पहल की व्याख्या करना है। भारत में कंपनियां शिक्षा के क्षेत्र में अपनी सी.एस.आर. गतिविधियों में योगदान करने के लिए अधिक इच्छुक है लेकिन इसे और अधिक गति प्रदान करने की आवश्यकता है। इसके लिए शिक्षा के क्षेत्र में एक बेहतर सी.एस.आर. रणनीति निर्माण की आवश्यकता हैं। विश्व बैंक उधम सर्वेक्षण उप–राष्ट्रीय मानव विकास सूचकांक और विश्व स्वास्थ्य संगठन के 2006 के डेटा भी सी.एस.आर. का पक्ष हैं ।

भारत में प्रति वर्ष लाखों बच्चे शिक्षा से वंचित रहते है या शिक्षा को पूरी तरह प्राप्त नही कर पाते है। विशेषकर सरकारी या सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षा संस्थान दूरस्थ स्थानों पर होने के कारण वहाँ जागरूगता का अभाव होता है। इस स्थिति में शिक्षा लक्ष्य पूर्णरूप से प्राप्त नही हो पाते हैं। इन ग्रामीण क्षेत्रो में बालिकाओं की शिक्षा चुनौती हैं। बालिकाओं को शिक्षा प्राप्ति के स्थान पर उन्हे घरेलू कार्य एवं कृषि हेतु ज्यादा उपयुक्त माना जाता हैं। उन्हे शिक्षा हेतु विद्यालय जाने के पूर्ण छूट नही होती हैं। इसके अतिरिक्त गरीबी, बेरोजगारी, जाति, लिंग, नस्ल एवं सामाजिक बाधाएँ भी शिक्षा के मार्ग को अवरूद्ध करती है।

निगमीय क्षेत्र सामाजिक नवाचार में अग्रणी भूमिका निभाकर परिवर्तन ला सकी है। इसके लिए सुदृढ़ प्रशासनिक एवं संगठनात्मक ढाँचे की आवश्यकता होती हैं इस कार्य में कंपनियां पेशेवर तरीके से कार्य करने में सक्षम होती है। इसके लिए कंपनियां उत्पाद विपणन के साथ शिक्षा प्रचार–प्रसार का कार्य भी साथ–साथ करते हुए सामाजिक जन चेतना को बढावा देते हुए अपने वित्तीय व्यय का समुचित उपयोग कर सकती है। यदि आपका व्यवसाय उच्च गुणवत्ता वाले शैक्षणिक उत्पादों एवं सेवाओं से संबंधित है तो सभी मानदंडों को पूरा करना चाहिए। यहाँ सेवा क्षेत्र एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र भूमिका महत्त्वपूर्ण होगी। कम्पनियां प्रत्यक्ष सी.एस. आर. के स्थान पर नगद धनराशि का दान करती है। इसके लिए कंपनियां स्थानीय चैरिटी एवं गैर लाभकारी संस्थाओं का चयन करती है। इनके माध्यम से कंपनियां शिक्षा एवं अन्य परोपकारी कार्य करती है। वे कंपनियां जो वहत् स्तर की हैं एवं पर्याप्त रूप से लाभ अर्जित करती है। उन्हें सी.एस.आर. में पर्याप्त धनराशि का विनियोग कर अपनी ग्राहक छवि में बढ़ोत्तरी करनी चाहिए। इस हेतु शिक्षा का विकल्प सबसे उत्तम है।

अनेक व्यावसायिक कम्पनियां व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षण संस्थान परिचालित करती है। इन संस्थाओं से लाखों विद्यार्थी व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण कर व्यावसायिक जगत को सेवा प्रदान कर रहे है। भारत में शिक्षा क्षेत्र में 12 बड़ी कम्पनियां निम्नलिखित प्रकार से विनियोग करती है :–

रिलायंस इंड्स्ट्रीज : यह कंपनी रिलायंस फाउन्डेशन एवं स्पोर्ट्स के माध्यम से जरूरतमंद विद्यार्थियों को 14 एन.जी.ओ. के माध्यम से शिक्षा हेतु सहायता प्रदान करती है। यह एन.जी.ओ. शिक्षा के साथ खेल, जीवन कौशल, डिजीटल लर्निंग, तकनीकी शिक्षा, आदि क्षेत्रों में योगदान देती हैं। धीरू भाई अंबानी स्कॉलरशिप विद्यार्थियों को शिक्षा, मेधावी विद्यार्थियों को पुरूस्कार, विशेष योग्यजन विद्यार्थियों की शिक्षा आदि प्रदान करती है। भारत में 13 रिलायंस फाउन्डेशन विद्यालय जामनगर, सूरत, बडोदरा, दाहिज, लोधिवली, नागोंथाने, नागपुर एवं नवी मुम्बई में स्थित है। जहाँ प्रतिवर्ष 14500 बच्चे शिक्षा प्राप्त करते हैं

एन.टी.पी.सी. : यह कंपनी उत्कर्ष छात्रवृत्ति योजना के अन्तर्गत लगभग 7300 विद्यार्थियों को प्रतिवर्ष मेडिकल एवं इंजीनियरिंग शिक्षा में सहयोग करती है। गरीब व पिछडे विद्यार्थियों को मुफ्त कम्प्यूटर वितरण करती है। मुम्बई के अनेक विद्यालय में कंपनी ने वितरण किये है।

विप्रो : यह कंपनी शिक्षा एवं कौशल विकास हेतु अनेक छात्रवृत्तियां एवं अनुदान प्रदान करती है। यह विशेष योग्यजन शिक्षा में योगदान देती है। यह संस्था

टैक्नोलॉजी, स्वास्थ्य एवं पोषण पर भी कार्य करती है। विप्रो अर्थथियन फलैगशिप सी.एस.आर. कार्यक्रम के अन्तर्गत 'The Pan India Outreach Programme एवं CEP के अन्तर्गत कार्य करती है।

अजीज प्रेमजी – अजीज प्रेमजी विश्वविद्यालय विभिन्न कोर्सेज संचालित करता है एवं संतूर विमन्स् स्कॉलरशिप छात्राओं को आंध्रप्रदेश एवं कर्नाटक में प्रदान करती है।

इंफोसिस फाउण्डेशन ने श्रीराम कृष्ण विद्या केन्द्र के साथ बनरघट्टा, बैंगलूरू में बी.पी.एल. बच्चो को मुफ्त भोजन एवं शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त फैलो के माध्यम से शिक्षा हेतु विभिन्न अनुदान एवं सहायता प्रदान की जाती है। कंपनी दिल्ली, हैदराबाद एवं पुणे में विभिन्न शिक्षण संस्थानों के साथ मिलकर सी.एस.आर. कार्य करती है।

मेहन्दी कोलफील्ड्स् लिमिटेड :– सार्वजनिक क्षेत्र की यह कंपनी बेटी बचाओ बेटी पढाओं आंदोलन के अन्तर्गत पिछले जिलो में बालिकाओं के लिए कार्य करती हैं

टाटा स्टील :– कंपनी ने 2015 में 1000 स्कूल परियोजनाएं प्रारम्भ की है। इसके अन्तर्गत झारखण्ड राज्य के पिछडे क्षेत्र जगन्नाथपुर एवं नावमुण्डी में लगभग 8000 बच्चे लाभान्वित हुए है। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य एवं सामुदायिक कार्य किये गये है।

हिन्दुस्तान जिंक :– कंपनी फलैगशिप परियोजना 'खुशी' के अर्न्तगत 3089 आँगनवाडी केन्द्रों के माध्यम से 6000 बच्चे अजमेर, भीलवाडा, चित्तौड, राजसंमद एवं उदयपुर जिलों में प्रभावित हुए है। नन्दघर परियोजना, शिक्षा संबल परियोजना, जीवन तरंग, यशद सुमेधा छात्रवृत्तियां आदि के माध्यम से शिक्षा क्षेत्र में अपना योगदान देती हैं।

एच.डी.एफ.सी. बैंक :– सी.एस.आर. कार्यक्रम 'परिवर्तन' परियोजना 'दिशा' ईसीएसएस एवं 3T कार्यक्रम के अर्न्तगत सी.एस.आर. के अर्न्तगत सहभागिता प्रदान करता है।

हाउसिंग डवलपमेंट फाइनेंस कॉपरेशन लिमिटेड :– कंपनी एच.टी. पारेख फाउण्डेशन में प्री से पी.जी. तक की विभिन्न प्रकार की शिक्षाएं प्रदान करती है।

महिन्द्रा एण्ड महिंद्रा :– परियोजना 'नन्ही कली' के अर्न्तगत बालिकाओं की शिक्षा, एवं अन्य सामुदायिक एवं परोपकारी कार्य करती हैं

एल्ट्रा टेकसीमेंट आदित्य बिरला समूह :– यह कंपनी बालिका शिक्षा के लिए कस्तुरबा गांधी बालिका विद्यालय के साथ ग्रामीण क्षेत्रो में सी.एस.आर. कार्य करती है।

हिंदुस्तान पैट्रोलियम कॉपरेशन लिमिटेड :– कंपनी सी. एस.आर. के लिए परियोजना अदप, उन्नति, नन्ही कली, तथा एस.टी.ई.एम. के साथ कार्य करती है। कंपनी परियोजना 'अगस्तया' के अर्न्तगत 28000 विद्यालयों को सहायता प्रदान करती है।

सारिणी – 01

क्र.सं.	कंपनी का नाम	सी.एस.आर.पर व्यय (करोड रूपये में)
1	रिलायंस इण्डस्ट्रीज	526.66
2	एन.टी.पी.सी.	132.03
3	विप्रो	123.52
4	इंफोसिस	95.25
5	मेहंदी कोलफील्डस् लिमिटेड	69.41
6	टाटा स्टील	66.52
7	हिन्दुस्तान जिंक	51.40
8	एच.डी.एफ.सी. बैंक	48.00
9	हाउसिंग डवलपमेंट फाईनेंस कॉपरेशन लिमिटेड	44.26
10	महिन्द्रा एण्ड महिन्द्रा सन्स	40.76
11	अल्ट्रा टेक सीमेंट	36.00
12	हिन्दुस्तान पैट्रोलियम कॉपरेशन लिमिटेड	31.53

सी.एस.आर. के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं जिसमें कंपनियों द्वारा किया गया विनियोग अर्थव्यवस्था पर प्रभाव डालता है। यह शोध पत्र विभिन्न कम्पनियों द्वारा किये गये व्यय को दर्शाता है एवं विभिन्न विनियोग/व्यय विकल्पों को स्पष्ट करता है। शिक्षा के क्षेत्र में कंपनियों द्वारा किया गया सी.एस. आर. व्यय पिछड़े क्षेत्रो में जागरूकता उत्पन्न करता है। जिससे भारत में विकसित देशो के समान सामाजिक समझ विकसित होगी। जिससे अर्थव्यवस्था को स्थिरता एवं मजबूती प्राप्त होना सुनिश्चित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *कंपनी एक्ट संशोधित 2013*
2. *लेखांकन सिद्धान्त एवं व्यावहार – जैन खण्डेलवाल पारिक*
3. *ए.आई.एस.एच. ई. अतिम रिपोर्ट 2017*
4. *देशमुख, डीपी (2017)। कॉपर्रेट सामाजिक उत्तरदायित्व और शिक्षा क्षेत्र. : मुद्दे और उपचार। इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ मैनेजमेंट, 8(1), 137–144*
5. *उपरोक्त कंपनियों की सी.एस.आर. संबंधी वेबसाईट का अवलोकन सिंतम्बर 2020*

ISSN 2277-5587

महिला कामगारों पर वैश्वीकरण के सामाजिक–आर्थिक प्रभावों का विश्लेष्णात्मक अध्ययन

डॉ. पंकज गुप्ता
सहायक आचार्य, बी.एन.डी. राजकीय कला महाविद्यालय, चिमनपुरा

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

वैश्वीकरण स्थानीय व वैश्विक क्षेत्रों के मध्य वृद्धिशील अन्तःनिर्भरता के सन्दर्भ में उत्पन्न एक विचार है जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आयामों में परिवर्तन के नवीन युग का वाहक है। सामान्यतः वैश्वीकरण की प्रक्रिया को अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी के प्रवाह, बाजार की ताकतों के बढ़ते प्रभाव, दो देशों के मध्य सम्बन्धों तथा वैश्विक अर्थव्यवस्था के स्वरूप को निर्धारित करने वाले कारक के रूप में समझा जाता है। इस रूप में यह लोगों के राजनीतिक एवं आर्थिक जीवन के अतिरिक्त सामाजिक व सांस्कृतिक पक्षों को सकारात्मक व नकारात्मक रूप में प्रभावित करता है। वैश्वीकरण ने अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा प्रतिपादित 'सुगम्य कार्य' की अवधारणा को कमजोर कर बेरोजगारी, असुरक्षा एवं असमानता में वृद्धि की है। जिसका सर्वाधिक नकारात्मक प्रभाव श्रमिक वर्ग पर पड़ा है। इस अध्ययन में वैश्विक फलक पर आये परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में भवन निर्माण क्षेत्र में कार्यरत महिला कामगारों पर पड़ने वाले सामाजिक–आर्थिक प्रभावों का मूल्यांकन मानवाधिकारवादी दृष्टिकोण के आधार पर करने का प्रयास किया गया है ताकि उनकी वास्तविक स्थिति का चित्रण किया जा सके, जिससे भारत में अकुशल श्रमिक के रूप में सर्वाधिक संख्या में कार्यरत महिला श्रम बल को कुशलता व अधिकारों की वंचना से परे उपयुक्त पारिश्रमिक एवं मानवाधिकारों की वास्तविक प्राप्ति से युक्त वातावरण तक अपनी पहुंच बनाने का अवसर प्राप्त हो।

संकेताक्षर : *लैंगिक विभेद प्रत्यय, सामाजिक –आर्थिक प्रस्थिति, कौशल विकास।*

समसामयिक विश्व में वैश्वीकरण की प्रक्रिया एक अनिवार्य परिघटना के रूप में सर्व व्याप्त है। वैश्वीकरण को सामान्य तौर पर व्यापार की बाधाओं को दूर करने तथा पूंजी, श्रम व तकनीक की सीमाओं के आर–पार मुक्त प्रवाह हेतु दुनिया की अर्थव्यवस्थाओं के समेलन के रूप में जाना जाता है। यह प्रक्रिया आर्थिक, तकनीकी, सामाजिक और राजनीतिक ताकतों का एक संयोजन है।

भारत ने 1991 में आर्थिक परिस्थितियों के मद्देनजर पूर्व में जारी संरक्षणवादी व्यवस्था (लाईसेंस, परमिट व कोटा प्रणाली) को समाप्त कर उदारीकरण की नीति का आश्रय लिया। भारत में वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने विभिन्न सामाजिक समूहों एवं वर्गों को गहरे रूप में प्रभावित किया जिनमें श्रमिक, किसान, दलित, आदिवासी एवं महिलाएं प्रमुख हैं। ये वर्ग समूह समाज एवं राजव्यवस्था में हाशिये पर स्थित हैं और अभी भी मूलभूत आवश्यकताओं एवं अधिकारों हेतु संघर्षरत हैं। भारत में उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की नीतियों को 1991 में अपनाना शुरू किया था और तब से लेकर आज तक लगभग 25 वर्षों की वैश्वीकृत समाज एवं राजव्यवस्था की समयावधि में श्रम एवं रोजगार से सम्बन्धित आंकड़ों पर दृष्टिपात करने पर एक नवीन तस्वीर उभर कर आती है। नियमित रोजगार और विकास में सकारात्मक सह–सम्बन्ध होता है लेकिन पिछले दो दशकों में भारत में नियमित रोजगार में 2.3 प्रतिशत की मामूली वृद्धि हुई है जबकि इसी अवधि में आकस्मिक रोजगार में तीव्र बढ़ोतरी हुई है। 1990 के पश्चात् सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार में कमी आई है और निजी क्षेत्र में वृद्धि हुई है लेकिन अधिकाशंतः यह वृद्धि अनौपचारिक रोजगार की श्रेणी में है जहां कार्यदशायें कठिन और सुविधायें अल्प हैं।

श्रम एवं रोजगार के क्षेत्र में वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने ज्यादा सकारात्मक प्रभाव नहीं डाला है। सकल घरेलू उत्पाद में

तो वृद्धि हुई है लेकिन रोजगार में नहीं, अतः इसे रोजगार–विहीन आर्थिक विकास की संज्ञा देना ज्यादा उपयुक्त होगा।

महिला कामगार

महिलाएं भारतीय श्रम बल का अभिन्न एवं महत्वपूर्ण अंग हैं। वैश्विक स्तर पर निर्माण उद्योग में महिला श्रम की सहभागिता अत्यन्त न्यून है लेकिन भारत में कार्यशील जनसंख्या का 16 प्रतिशत अंश अपनी आजीविका हेतु निर्माण उद्योग पर आश्रित है जिसमें लगभग 51 प्रतिशत श्रमिक महिलाएं हैं। निर्माण उद्योग में महिला श्रम के संदर्भ में सार्वजनिक क्षेत्र में सहभागिता में वृद्धि हो रही है वहीं निजी क्षेत्र का योगदान अल्प है। पिछले दो दशकों (1999.2020) में निर्माण क्षेत्र में बड़ी संख्या में महिला श्रमिकों का नियोजन हुआ है जिसके पार्श्व में संरचनात्मक ढांचे के विकास पर बल एवं सार्वजनिक योजनाओं और कार्यक्रमों जैसे विभिन्न फ्लैगशिप योजनाओं में सरकारी निवेश की बढ़ोतरी विद्यमान है। भारत में निर्माण क्षेत्र बडी संख्या में अल्पप्रशिक्षित या अशिक्षित महिलाओं को आकस्मिक रोजगार प्रदान करता है। निर्माण उद्योग में 98 प्रतिशत महिला कामगार आकस्मिक श्रेणी में आती हैं जो अन्य उद्योगों में कार्यरत आकस्मिक महिला श्रमिकों (75 प्रतिशत) से संख्या में अधिक हैं। इसी वजह से निर्माण क्षेत्र में कार्यशील महिला श्रमिकों में से अधिकांशतः अकुशल व साधारण श्रमिक हैं जो कि मिट्टी खोदने, पत्थर तोड़ने, सीमेन्ट, ईंट, बजरी व पानी ढोने जैसे जोखिम पूर्ण कार्यों में संलग्न हैं।

महिला निर्माण श्रमिकों की सामाजिक–आर्थिक परिस्थिति, सामाजिक अलगाव, भौगोलिक पिछडापन, पारिवारिक पृष्ठभूमि, अधिकारों के प्रति संचेतना का अभाव आदि ऐसे निर्धारक तत्व हैं जिनके कारण वे अपने शोषण के प्रति भिज्ञ होने पर भी स्वयं को असहाय महसूस करती हैं तथा उत्पादन व बच्चों के समाजीकरण में मुख्य भूमिका निभाने के पश्चात् भी वैचारिक व भौतिक अधीनता स्वीकार कर सामान्यतः शोषित, उत्पीडित, त्रासित, उपेक्षित व संवेदित होती हैं।

वैश्वीकरण व महिला कामगार

उदारीकरण एवं निजीकरण की नीतियां लागू होने के पश्चात् भारत में निर्माण उद्योग में तेजी से प्रगति हुई। आधारभूत संरचना का निर्माण यथा विश्वस्तरीय राजमार्ग, पुल, रेलवे ओवरब्रिज इत्यादि का संजाल निर्मित किया गया। साथ ही बहुमंजिला इमारतों, शॉपिंग मॉल इत्यादि का निर्माण किया गया। परिणामस्वरूप व्यापक स्तर पर रोजगार का सृजन हुआ। एक अनुमान के अनुसार भारत में लगभग साढ़े चार करोड़ श्रमिक निर्माण उद्योग में संलग्न हैं। जिनमें लगभग आधी श्रमिक महिलाएं हैं। वैश्वीकरण ने इन श्रमिकों की रोजगार व आर्थिक स्थितियों की संरचना को प्रभावित किया है। उदारीकरण की नीतियों के परिणामस्वरूप रोजगार सृजन एवं रोजगार के अवसरों के विस्तार क्षेत्र में वृद्धि तो हुई है लेकिन सिर्फ गैर–कृषिगत क्षेत्र एवं असंगठित क्षेत्रों में, जहाँ ना पर्याप्त वेतन है, ना श्रम के निश्चित घंटे, ना सामाजिक सुरक्षा और ना ही अन्य आवश्यक मूलभूत सुविधाएं। निर्माण उद्योग में जहां अन्य उद्योगों की तुलना में सर्वाधिक आकस्मिक श्रमिक कार्य करते हैं, उनकी स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई, विशेषकर महिला कामगारों की क्योंकि अधिक श्रम करने के बावजूद भी महिला होने की वजह से उन्हें अन्याय, शोषण व भेदभाव का सामना अधिक करना पड़ता है।

आर्थिक स्थिति पर प्रभाव

महिला निर्माण कामगारों की आर्थिक स्थिति पर वैश्वीकरण का नकारात्मक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वैश्वीकरण ने निर्माण उद्योग में यांत्रिकीकरण व आधुनिक तकनीक के प्रयोग को बढ़ावा दिया और मानवीय श्रम को अत्यन्त कम किया है। श्रम का यह विस्थापन उन कार्यों से हुआ जिन्हें महिला कामगार करती हैं, जैसे मिट्टी खोदना और ले जाना, सीमेंट–बजरी मिलाना व ले जाना, ईंट–पत्थर ढ़ोना इत्यादि। अतः निर्माण कार्यों से बड़ी संख्या में महिला श्रमिक बाहर हो बेरोजगार हो गईं।

निर्माण क्षेत्र में कार्यरत महिला कामगारों के रोजगार के अवसर उन सेवाओं में बढ़े हैं जिन तक इनकी पहुंच अत्यन्त सीमित है, जैसे राजगीर, टाईल लगाना, पेंटर, प्लम्बर, सीमेंट फिनिशर, ग्लेजियर, इलेक्ट्रिशियन इत्यादि। ये सेवाएं रोजगार के रूप में पुरुषों के लिए आरक्षित हैं तथा महिला कामगार इनके लिए प्रशिक्षित नहीं हैं। अतः उपर्युक्त पृष्ठभूमि में महिला निर्माण कामगारों पर दोहरी मार पड़ रही है; एक तो मूलभूत सुविधाओं का अभाव है, वहीं अकुशल प्रकृति के कार्यों में भी लैंगिक भेद के चलते कम मजदूरी व यौन उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप व्यापक स्तर पर विस्थापन व बेरोजगारी में वृद्धि हुई है और सामाजिक सुरक्षा में कमी हुई है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए श्रमिक कानूनों का महत्व सीमित कर दिया जिसने सामाजिक सुरक्षा के लाभ के दायरे को अत्यन्त कम कर दिया, इससे सर्वाधिक नुकसान असंगठित क्षेत्र में संलग्न महिला निर्माण कामगारों को उठाना पड़ा। धन व सम्पत्ति का अभाव, अल्प एवं अनियमित आय, कार्यस्थल पर होने वाली दुर्घटनाएं, कार्य एवं जीवन की निम्न दशाएं एवं कौशल संवर्द्धन के अवसरों का अभाव इत्यादि परिस्थितियाँ महिला कामगारों को वंचन की ओर ले जाकर गरीबी के दुश्चक्र में फंसा देती हैं। निर्माण क्षेत्र की प्रकृति के कारण महिला कामगारों के लिए श्रम कानूनों के क्रियान्वयन के अभाव के परिणामस्वरूप श्रम संघ बनाकर अपने अधिकारों के लिये संघर्ष करना सम्भव नहीं हो पाता है।

अतः वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में निर्माण उद्योग में दोहरी चुनौतियां हैं; प्रथमतः महिला कामगारों की कार्य दशा में सुधार व सामजिक सुरक्षा का सहारा, द्वितीयतः कामगारों की दक्षता को प्रशिक्षण के माध्यम से उत्कृष्ट करना ताकि बदलते तकनीकी परिदृश्य में महिला कामगारों को रोजगार के अवसरों की अधिकाधिक उपलब्धता सुनिश्चित हो सके।

सामाजिक स्थिति पर प्रभाव

वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के युग में सतही रूप से कामगार महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार आया है। शिक्षा व काम प्राप्त करने की संभावनाओं में वृद्धि हुई है तथा उन्हें समाज व परिवार में पुरुषों के समान अवसर मिले हैं, किन्तु वास्तविकता इससे भिन्न है। यथार्थ में महिला कामगारों के प्रति समाज के पुरातन व घिसे-पिटे रवैये और पारिवारिक पदानुक्रम में उनकी कथित भूमिका में कोई ज्यादा बदलाव नहीं आया है। कामगार महिलाओं को कार्यस्थल पर कमजोर, निम्न एवं द्वितीय दर्जे का मानना आज भी जारी है। अनुचित एवं अपर्याप्त आहार का सेवन एवं कार्यस्थल पर भारी सामान उठाने व लम्बे समय तक एक स्थान पर खड़े होकर कार्य करने से अधिकांश महिला कामगार कुपोषण का शिकार हो जाती हैं।

वैश्वीकरण की वजह से महिला कामगारों की सामाजिक प्रस्थिति प्रभावित हुई है। संयुक्त परिवार व पुरुष एकल-अर्थोपाजक की धारणा टूट गई। अब एकल परिवार व छोटे परिवार जिसमें पति-पत्नी दोनों अर्थोपार्जक हैं, की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। उदारीकरण व शहरीकरण में वृद्धि के चलते निर्माण कार्य शहरी क्षेत्र में होने के कारण इसके लिए आवश्यक श्रम शक्ति की उपलब्धता आस-पास के ग्रामीण क्षेत्र से होती है। आस-पास के ग्रामीण क्षेत्र से कामगार जिनमें महिलाएं भी शामिल हैं, रोजगार की तलाश में शहरी क्षेत्र की ओर पलायन करते हैं तथा विभिन्न निर्माण कार्यों में संलग्न हो जाते हैं। अधिकांशतः श्रमिक महिलाएं भवन निर्माण के कार्य में लगी हैं जिसके कारण वे गांवों के अपने स्थायी निवास को छोड़कर शहर में किराये के मकान या झुग्गी-झोंपड़ियों में अमानवीय परिस्थितियों में रहने को विवश होती हैं। इन अस्थायी निवासों में पानी, बिजली, शौचालय जैसी मूलभूत सुविधाओं की स्वास्थ्यवर्द्धक उपलब्धता नहीं होती है।

महिला कामगारों पर समाज और परिवार का दबाब पहले की अपेक्षा बढ़ गया है। वैश्वीकरण के युग में उसे तिहरी भूमिकाओं (कामगार, गृहिणी और माता) का निर्वाह करना पड़ रहा है। कार्य की अनिश्चित अवधि एवं अपर्याप्त पोषण से पहले ही उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, वहीं घर पर पहुंचते ही उनसे परिवार व बच्चों की सार-संभाल की अपेक्षा की जाती है। केवल महिलाएं ही घरेलू कार्य हेतु जिम्मेदार हैं, इस तरह की धारणा महिला कामगारों में भावनात्मक विकार उत्पन्न करती है। कार्य की वजह से वे बच्चों व परिवार के सदस्यों की देखभाल नहीं कर पाती हैं, ऐसा मानकर महिला कामगार अपराध बोध से ग्रस्त रहती हैं। निर्माण जैसे असंगठित क्षेत्र में तो शिशुगृह की सुविधा भी नहीं होती जिससे छोटे बच्चों को कार्यस्थल पर लाने के अलावा उनके पास ओर कोई विकल्प नहीं होता, लेकिन यहां के वातावरण में बच्चों के बीमारियों व कुपोषण से ग्रस्त होने की सम्भावना सर्वाधिक रहती है।

वस्तुतः पुरुष प्रधान समाज होने के कारण महिलाएं मजदूरी के साथ-साथ पारिवारिक उत्तरदायित्वों का भी निर्वहन करती हैं किन्तु न तो उसके कार्य की कोई सराहना होती है और न ही पारिवारिक व व्यक्तिगत निर्णयों में उसकी सहभागिता होती है। उक्त कारक महिला कामगारों में भावनात्मक तनाव में वृद्धि करते हैं।

महिला कामगारों की मानवाधिकारवादी प्रस्थिति

वैश्वीकरण आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं वैचारिक परिवर्तन की बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें महिला कामगारों के आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मानवाधिकारों के हनन को रोकने की बजाये उसमें सहायक बनने की भूमिका का निर्वाह किया है। वैश्वीकरण के युग में कल्याणकारी गतिविधियों के संचालनकर्ता के रूप में राज्य का कार्य अत्यन्त सीमित हो जाता है और प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए सरकार जो उनको सुविधाएं प्रदान करती है उसकी क्षतिपूर्ति सार्वजनिक व्यय में कटौती करके की जाती है। वैश्वीकरण प्रेरित सार्वजनिक व्यय में कटौती महिलाओं को अधिक अवैतनिक श्रम करने के लिए बाध्य करती है। परिणामस्वरूप महिला कामगार जो अल्पप्रशिक्षित व अकुशल होती हैं रोजगार के क्षेत्र में लैंगिक भेद के चलते कार्यस्थल पर शोषण का सहज शिकार होती हैं जो उनके मूलभूत मानवाधिकारों का उल्लंघन है।

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (1948), मानवाधिकारों से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं (1966) और अन्तराष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा स्वीकृत विभिन्न अभिसमयों के माध्यम से महिला कामगारों को विभिन्न मानवाधिकार प्रदत्त हैं यथा समान कार्य के लिये समान वेतन, व्यवसाय या रोजगार के चयन की स्वतन्त्रता, उत्पादक रोजगार प्राप्त करने का अधिकार, काम पर रखने और पदोन्नति के समान अधिकार, नौकरी की सुरक्षा (मातृत्व अवकाश, बेरोजगारी लाभ, मनमानी छंटनी नहीं इत्यादि) का अधिकार, नियोक्ताओं द्वारा विभेद नहीं करना, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से मुक्ति का अधिकार, रात्रि में काम करने हेतु सुरक्षा का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार, न्यूनतम मजदूरी का अधिकार इत्यादि।

यद्यपि वैश्वीकरण ने विकसित देशों की महिला कामगारों के आर्थिक अधिकारों के दायरे को व्यापक किया है लेकिन विकासशील राष्ट्रों में स्थिति थोड़ी भिन्न है। यहाँ भूमंडलीकरण श्रम की कीमत पर पूंजी की सौदेबाजी की क्षमता को तीव्र कर देता है फलतः सारा दबाब परिणाम से सम्बन्धित श्रम मानकों जैसे मजदूरी की दर, कार्य के घण्टे और रोजगार से सम्बन्धित अन्य शर्तों इत्यादि पर आता है। जिससे सुभेद्य वर्ग के रूप में महिला कामगारों के मानवाधिकारों का हनन सहज रूप में होता है।

वैश्वीकरण केवल व्यापार में खुलापन एवं प्रत्यक्ष विदेश निवेश से ही सम्बन्धित नहीं है अपितु इसकी अन्य सम्भावनाएं यथा आसान व सस्ती परिवहन और संचार व्यवस्थाएं विकसित देशों के लिए यौन कार्य हेतु बेगार व दुर्व्यापार की घटनाओं में वृद्धि की वाहक हो रही हैं। अनौपचारिक क्षेत्रों विशेषतः निर्माण उद्योग में संलग्न महिला कामगारों को बलपूर्वक यौन कार्यों में सम्मिलित किया जाता है जिसे अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (2001) ने 'वैश्वीकरण के अन्तर्निहित प्रभावों' की संज्ञा दी है। जिसका परिवर्तित रूप कार्यस्थल पर ठेकेदार द्वारा यौन शोषण के रूप में देखा जा सकता है। यह सब महिला कामगारों के मानवाधिकारों का अतिक्रमण है।

वस्तुतः मानवाधिकारों की सार्वजनिक घोषणा में अधिकथित किया गया था कि बिना किसी विभेद के कर्मकार महिलाएं पुरुषों के समान कार्य करने पर समान वेतन की हकदार हैं। तथा इस भावना को वियना घोषणा में पुनः स्वीकार किया गया किन्तु वैश्वीकरण के रूप में समस्त विश्व में जो परिवर्तन की आंधी चल रही है उसने महिला कामगारों, जो पहले से ही वंचित, शोषित व पीड़ित हैं, के मानाधिकारों को मुख्यधारा से दूर फैंक दिया है, जिससे उनकी आर्थिक–सामाजिक प्रस्थिति में उत्तरोत्तर गिरावट आती जा रही है।

निष्कर्ष

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने भारत में महिला कामगारों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को गहरे रूप में प्रभावित किया है। इसमें कोई शक नहीं है कि वैश्वीकरण के विभिन्न आयामों ने एक तरफ महिला कामगारों हेतु को काम के अवसरों में वृद्धि की है किन्तु वहीं दूसरी तरफ महिला कामगारों की बढ़ी संख्या को अनौपचारिक क्षेत्र की ओर ढकेल दिया जहां कार्य के घण्टे ज्यादा हैं, प्रस्थिति निम्न है, अस्वास्थ्यकर कार्य दशाएं हैं (विशेषकर मातृत्व आवश्यकताओं के सन्दर्भ में), प्रतिकूल कार्य की अवधि है, प्रशिक्षण तथा कौशल उन्नयन का अभाव है जिसकी वजह से उनके मानव अधिकारों का हनन सहज रूप में होता है।

अतः वैश्वीकरण की वर्तमान चुनौतियों से सामना करने हेतु महिला कामगारों की शिक्षा तक पहुँच बढ़ानी होगी

तथा उन्हें कौशल निर्माण एवं कौशल विकास हेतु प्रशिक्षित करना होगा क्योंकि आर्थिक उदारीकरण के युग में महिलाओं के रोजगार की गुणवत्ता मुख्य रूप से कौशल एवं शिक्षा के उन्नयन पर आधारित होती है। वस्तुतः सरकार को ऐसी नीति बनाने की आवश्यकता है जो महिला कामगारों की कार्य क्षमता को विकसित करे, संवर्द्धित करे तथा वैश्वीकरण के आर्थिक एवं सामाजिक प्रभावों की नकारात्मकता को शून्य कर समावेशी विकास की प्रक्रिया में सर्वसमाज की भागीदारी को सुनिश्चित करे। साथ ही भारतीय समाज में महिलाओं और लिंग आधारित पहचानों के प्रति मानसिकता में परिवर्तन की शुरूआत हेतु जाति एवं धर्म के प्रतिबन्धों से मुक्त नैतिक शिक्षा का दिया जाना अति आवश्यक है तभी महिलाओं का सशक्तिकरण संभव हो सकेगा जो भारतीय समाज को अग्रगामी बनाने की पूर्व शर्त है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *रेड्डी, डी. नरसिम्हा, चैलेन्जेज् ऑफ डीसेन्ट वर्क इन द ग्लोबलाजिंग वर्ल्ड, द इंडियन जर्नल ऑफ लेबर इकॉनोमिक्स, वो. 48, नं.1, 2005*
2. *शैला, एल. क्रोचर, वैश्वीकरण और सम्बन्धः एक बदलती हुई दुनिया की पहचान की राजनीति, रोमैन और लिटिलफिल्ड, 2010 पृ. 10*
3. *श्रीनिवासन्, टी.एन., इकॉनोमिक रिफॉर्मस् एण्ड ग्लोबल इन्ट्रीग्रेशन (पीडीएफ), 17 जनवरी, 2002 ;डब्ल्यूडब्ल्युडब्ल्यु.इसिओएन.येल.एडू)*
4. *राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संख्या 554, भारत में रोजगार एवं बेरोजगारी की स्थिति–68वां दौर (जुलाई 2011–जून 2012), राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, जनवरी 2014*
5. *गुप्ता, डॉ. पंकज , मानवाधिकार व महिलायें, साहित्यागार, जयपुर, 2014, पृष्ठ सं. 179*
6. *झाबवाला, रीना एण्ड सिन्हा शालिनी, लिब्रलाइजेशन एण्ड द वूमन वर्कर्स, सेवा, अहमदाबाद, 2002*
7. *सुब्लक्ष्मी, जी., इम्पैक्ट ऑफ ग्लोब्लाइजेशन ऑफ वूमैन वर्कर्स इन इंडिया, इमपॉर, 2012 (www.im powr.org.)*
8. *इलामायुरिति रंजित कुमार, बाबू पुचेहा चिट्टी, इम्पैक्ट ऑफ ग्लोब्लाइजेशन ऑन वर्किंग वूमन इन इंडिया, इन्टरनेशनल जरनल ऑफ मल्टीडिसीपिलेन्री एजूकेशनल रिसर्च, वॉल्यूम–प्रथम, इश्यू–6, दिसम्बर 2012, पेज 141–142*
9. *यू.एन.,गार, 55वें सेशन 5, ग्लोबलाइजेशन एण्ड इट्स इम्पैक्ट ऑन द फुल एन्जॉयमेंट ऑफ ऑल ह्यूमन राइट्सः प्रिलीमरी रिपोर्ट ऑफ द सैक्रेटरी जनरल, 2000*
10. *तरूशिखा, वैश्वीकरण, कामकाजी महिलाएं और मानवाधिकार, देश बंधु, नई दिल्ली, 11 दिसम्बर, 2012*
11. *डे सोयासा, न्यूमेयर इरेक, रिसोर्स वेल्थ एण्ड द रिस्क ऑफ सिविल वार ऑन सेटः रिजल्ट्स फ्रॉम ए न्यू डाटा, सेट ऑफ नेचुरल रिसोर्स रेन्टस, 1970–1999, कॉन्फिलिक्ट मैनेजमेन्ट एंड पीस सांइस, 24(3), 2007, 201–218*
12. *मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा, 1948, अनु. 23*
13. *जेम्स नीरजा, पी.के. मनोज, अनऑरगेनाइज्ड लेबर इन हाउसिंग कन्सट्रक्शन सेक्टर इन केरला; एन इम्पीरिकल इन्वेस्टीगेशन ऑफ द हयूमन राइटस इश्यूज एंड अदर प्रोब्लम्स, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ सांइन्टिफिक रिसर्च, वोल्यूम–3, इश्यू–1, जनवरी, 2014, पेज 93–97*
14. *कक्कड, अंजु, ट्रेनिंग कन्सट्रक्शन वर्कर फॉर सस्टेनेबल एन्वायरमेन्ट, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ एन्वायरमेन्टल रिसर्च एण्ड डेवेलपमेन्ट, वोल्यूम–4, नं.–1, 2014, पेज 21–26*

कला और सृजनात्मकता

डॉ. प्रदीप कुमार वर्मा
संगीत अध्यापक, जवाहर नवोदय विद्यालय, बांसवाड़ा

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

कला की बात करते ही यह विचार सामने आता है कि यह मानव की ऐसी कृति है जिसमें सौंदर्य, सृजन, कल्पना इत्यादि गुण विद्यमान होंगे। चाहे वह कृति मूर्त हो या अमूर्त हो चित्र के रूप में हो या ध्वनि अर्थात संगीत के रूप में हो ये आनंददायी होती है क्योंकि कलाओं में सौंदर्य, माधुर्य, लालित्य ये सभी गुण मानव की कल्पना से सृजित हो कर हमें प्रसन्नता की ओर ले जाते हैं। इन कलाओं में सौंदर्य का महत्त्व अधिक होता है एवं सौंदर्य के अभाव में ये मात्र उपयोग की वस्तु रह जाती है। अगर कला में लालित्य को देखे तो जिन गुणों के कारण हमारी इन्द्रिय अनुभूति प्रभावित होती है भावनाएँ उद्दीप्त होती है और रस की अनुभूति होती है तब हम उसे सौंदर्य, माधुर्य, लालित्य इत्यादि की संज्ञा देते हैं। संगीत में गायन वादन एवं नृत्य को सृजनात्मकता के अंग माना गया है। वैदिक काल से देखें तो गायन की अनेक विधाओं का सृजन हुआ जिनमें आर्थिक, गाथिक, सामिक इन तीनों स्वरों के गायन के बाद धीरे धीरे सातों स्वरों का बनना है और उसके पश्चात् ध्रुवा, प्रबंधन, ख्याल, ठुमरी, टप्पा इत्यादि गायन शैलियाँ सृजन के ही प्रमाण है। वादन में विभिन्न वाध्य यंत्र जैसे वेणु, मृदंग इत्यादि से लेकर तबला, सितार, सरोद ये सभी मानव के द्वारा सृजित किए गए हैं। संगीत में सृजनात्मक योगदान के लिए हम आधुनिक काल में उस्ताद अलाउद्दीन खान, पंडित ओमकारनाथ ठाकुर, पंडित रविशंकर, पंडित अनोखेलाल मिश्र इत्यादि को देख सकते हैं जिनके द्वारा गायन वादन के क्षेत्र में अनेक नवीन प्रयोग किए गए हैं जो कि विस्मरणीय है।

संकेताक्षर : *कृति, मूर्त अमूर्त, ललित कला, सौंदर्य बौद्ध, सृजनात्मकता, सौंदर्य, लालित्य, माधुर्य, कलात्मक, भावात्मक, रसात्मक।*

कला को सामान्य रूप से उस कृति के रूप में परिभाषित किया जाता है जो प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से किसी भी वस्तु या भाव की अनुकृति के रूप में निर्मित या प्रस्तुत की जाती है। उसी कृति को जब सामान्य रूप से भिन्न किसी प्रयोजन अथवा उद्देश्य अथवा भावना से निर्मित या प्रस्तुत किया जाता है तब वह एक विशिष्ट स्वरूप ले लेती है। ललित कलाओं में उस प्रयोजन अथवा भावना का दर्शन हमें विशेष रूप से होता है। यह भी एक सामान्य विचार है की कोई भी कृति जब सामान्य उपयोग या व्यवसाय का अंग बन जाती है तब वह कृति नहीं रह कर सामान्य वस्तु हो जाती है। यदि गंभीर रूप से सोचा जाए तो कोई भी कृति जब प्रथम बार की गयी होगी उस समय उसके साथ उसकी पृष्ठभूमि मैं रहे चिंतन-मनन का योगदान रहा होगा। इस दृष्टि से यह संपूर्ण ब्रह्मांड अथवा लीला ही ईश्वर की एक महान कृति अथवा कला मानी जा सकती है और मनुष्य अथवा किसी भी अन्य प्राणी के द्वारा ईश्वर प्रदत्त उपादानों अर्थात पृथ्वी, जल इत्यादि पंचतत्वों से किए गए प्रत्येक प्रथम बार के निर्माण को भी कला की संज्ञा दी जा सकती है। जैसे-जैसे बौद्धिक विकास होता चला गया होगा और भावनाओं का उद्रेक बढ़ता गया होगा वैसे-वैसे रचनाओ, कलाओं और ललित कलाओं मैं सृजनात्मकता की वृद्धि भी होती गयी। यहाँ तक की कला में सृजनात्मकता को इतना अधिक महत्त्व दिया जाने लगा है कि कला के यथार्थ अथवा मूर्त रूप से आगे बढ़ते-बढ़ते उसके अमूर्त रूप को आज अधिक महत्त्व दिया जाने लगा है और वह अमूर्त स्वरुप हमें चित्रकला, संगीत, साहित्य, नाटक इत्यादि में जगह-जगह दिखाई देने लगा है जो कला में सृजनात्मकता का एक बड़ा उदाहरण माना जाता है।

कलाओं में लालित्य :– ललित कलाओं में सौंदर्य के महत्त्व को देखा जाता है क्योंकि ये कलाएं सौंदर्यबोध के विषय के निर्माण हेतु कृतियों की रचनाये करती है। जैसा कि हम पहले कह चूके हैं कि यह समस्त ब्रह्मांड ईश्वर की एक महान कृति है और इसी कृति से प्राणी जगत सौंदर्य की प्रेरणा प्राप्त करता आ रहा है। मनुष्य जब अपनी इंद्रियों द्वारा भौतिक जगत का अवलोकन करता है तो उनमें से कुछ कृतियाँ उसके मन में अथवा अंतर आत्मा में आनंद की भावना को जन्म देती है । जिन गुणों के कारण हमारी इन्द्रिय अनुभूति प्रभावित होती है भावनाएँ उद्दीप्त होती है और रस की अनुभूति होती है उन्हीं को सौंदर्य, माधुर्य, लालित्य इत्यादि की संज्ञा दी जाती है। बाम गार्डन के अनुसार सौंदर्य आनंद प्राप्त करने वाली अनुभूति है, जिसका स्रोत इन्द्रिय संवेदनाएं होती है किंतु वह सौंदर्य केवल इंद्रियों को ही नहीं अपितु प्राणी के विवेक को भी संतोष देता है इसलिए सौंदर्य की अनुभूति को उत्कृष्ट आनंद की अवस्था कहा जाता है। किसी कृति अथवा रचना के सृजन में जब हमें लालित्य, कल्पना, प्रतिभा, संतुलन, सामंजस्य, लयबद्धता, चमत्कार अद्‌भुतता, माधुर्य इत्यादि गुण दिखाई देते हैं तब हम उसको मनोहर, रम्य, मधुर, सुन्दर इत्यादि कहते हैं। कलाओं में लालित्य ऐसी संवेदनाओं की प्रतीति कराने वाला प्राकृतिक गुण है जिसकी अनुभूति आनंददायी होती है। हचिसन ने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि ललित कलाओं में सौंदर्य की अनुभूति एक तटस्थ आनंद की अनुभूति है।

यदि संगीत गेय अथवा वाध्य स्वरूप के संदर्भ में बात की जाए तो उसका लालित्य किसी दृश्य में नही अपितु उन मधुर ध्वनियों में है जो मानव चित्त को आनंदित करती है। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में ”नाट्यावताराध्याय'' के अंतर्गत नाट्य में संगीत के प्रयोग को स्पष्ट करते हुए कहा है की देवगण स्तुति, गीतों, और वाद्ययंत्रों की ध्वनियों को सुनकर अति प्रसन्न हो गए और कहने लगे हे मुनि ! तुम्हारा यह प्रयोग देवता और असुरों को आनंद देकर सभी प्रजाओं को भी आनंदित कर रहा है।[1]

संगीत में सृजनात्मकता

'गीतं, वाद्यं च नृत्यं च त्रयम संगीतमुच्यते'

अर्थात गायन, वादन और नृत्य ये तीनों विधाएं संगीत है और इनका सम्मिलित स्वरूप भी संगीत है तथा तीनों ही संगीत में सृजनात्मकता के अंग है। देखा जाए तो वैदिक काल अथवा उसके भी पूर्व से संगीत में सृजन होता आ रहा है ऐसा हमें वेदों, उपनिषदों, ब्राह्मणों, आरण्यको इत्यादि प्राचीन ग्रंथों से विदित होता है। आर्चिक, गाथिक एवं सामिक स्वरों का गायन होना, धीरे– धीरे सातों स्वरों का विकसित होना, ऋचाओं का गायन एवं सामगान की सहस्र शाखाओं का बनना, ध्रुवाओं के गायन के पश्चात् अनेक गायन शैलियों का जन्म जिनमें प्रबंध, ध्रुपद, ख्याल, ठुमरी, तराना इत्यादि है, तो वाद्य में अनेक वीणाओ, अवनद्ध वाद्य यंत्रों इत्यादि का निर्माण एवं वादन होना ये सभी सृजन के प्रमाण कहे जा सकते हैं। भरतमुनि ने जिस समय नाट्यशास्त्र की रचना की उस समय संगीत कलाओं का पर्याप्त विकास हो चुका था। भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में अवनद्ध वाद्यों की उत्पत्ति के संदर्भ में कहा है कि जब 'स्वाति मुनि' सरोवर में जल लेने गए तो इंद्रदेव ने मूसलाधार वर्षा की और जब वर्षा की बूँदें कमल के पत्तों पर गिरने लगीं तो बड़ी ही मधुर ध्वनियों का निर्माण होने लगा।[2] जिसे सुनकर स्वाति मुनि ने गंभीरता से चिंतन– मनन करते हुए 'विश्वकर्मा' की सहायता से मृदंग, पुष्कर, पणव, दुर्दुर इत्यादि अवनद्ध वाद्यों का निर्माण किया।[3]

संगीत में सृजनात्मकता की वृद्धि को देखे तो एक तरफ ध्रुपद की अलग अलग बानियों का जन्म हुआ तो दूसरी तरफ़ इसके पश्चात् ख्याल गायकी के विविध घरानों ने जन्म लिया ये सभी घराने अथवा बानियाँ अपनी गायन शैलियों अथवा गायकी के कारण एक–दूसरे से विशिष्ट हैं। कोई घराना आलाप गायन में विशेषता रखता है तो कोई राग विस्तार या विचित्र तानों के कारण विशिष्ट हैं या यूं कहें कि सबका राग को बरतने का अपना–अपना ढंग है। देखा जाए तो इन घरानों में भी प्रत्येक कलाकार की गायिकी कुछ भिन्न विशेषताएं लिए होती है जो उसकी प्रतिभा को दर्शित करती है और उसे सृजनशील बनाती है। कई भारतीय संगीतकारों ने अनेक नए–नए रागों को सृजित किया है और उन रागों के माध्यम से ही अपने भावों अथवा कल्पनाओं को अभिव्यक्त करके अपनी सृजनशीलता का प्रमाण दिया है। दूसरी तरफ कुछ संगीतकारों ने कर्नाटकी संगीत में प्रयोग की जाने वाली रागों का उपयोग हिंदुस्तानी संगीत में अपनी सृजनात्मकता के साथ किया है। भारतीय संगीत में राग को ईश्वर का रूप माना जाता है और इसी ईश्वर रूपी राग के माध्यम से कलाकार गायन–वादन में रचनाएँ सृजित

करता आ रहा है जिसके अन्तर्गत वह आलाप, तान, मींड, गमक, कण, खटका, मुर्की, जमजमा, लयकारी, आवाज लगाने का तरीका, काकू इत्यादि अंगों का प्रयोग करके रचनाओं को विशिष्ट बनाता है। उदाहरण के रूप में इंदौर के उस्ताद अमीर खां द्वारा 'मारवा राग' मे गाए गए ध्वनि मुद्रण की बात करें तो उन्होंने विलंबित ख्याल के लिए झुमरा ताल का अति विलंबित लय में प्रयोग किया एवं मारवा को मन्द्र व मध्य सप्तक में अधिक गाकर चमकाया[4], जबकि इनके पूर्ववर्ती कलाकारों का मानना था कि मारवा राग मध्य व तार सप्तक का राग है। झुमरा ताल का अतिविलंबित रूप मैं प्रयोग एवं मारवा राग को भिन्न तरीके से गाना, ये उस्ताद आमिर खान की सृजनात्मकता के ही प्रमाण है। चाहे उस्ताद अमीर खां हो या पंडित रविशंकर, पंडित ओंकार नाथ ठाकूर हों, या पंडित कुमार गंधर्व या फिर पंडित अनोखेलाल मिश्र ये सभी हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के सृजनशील कलाकार रहे हैं।

उपसंहार– इस प्रकार हमने कला की विकास यात्रा को शिल्पगत, कलात्मक और अंत में ललित कलात्मक स्वरूप तक दिखाने का प्रयास किया है। जिनमें ये अनेक उपादान अथवा घटक तो सभी के लिए सामान्य हैं जबकि कुछ घटक अथवा उपादान भिन्न–भिन्न कलाओं अथवा ललित कलाओं में स्वतंत्र रूप से उपयोज्य हैं। सारांश रूप में कहा जा सकता है कि कला अथवा ललित कला की श्रेणी अथवा परिभाषा में आने के लिए सृजनात्मकता के उक्त घटकों का अर्थात कलात्मक अथवा शिल्पगत का तथा भावनात्मक अर्थात रसात्मक एवं सौन्दर्यगत घटकों का होना नितांत आवश्यक है।

_संदर्भ ग्रंथ सूची_

1. *पृष्ठ स दृ 506, अध्याय 36 नाट्यशास्त्र भाग चार (भरतमुनि कृत) अनुवाद– शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल*

   प्रकाशन– चौखंभा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, उतर प्रदेश
2. *उपरोक्त पृष्ठ स – 348,अध्याय 33*
3. *उपरोक्त पृष्ठ स – 349, अध्याय 33*
4. *उस्ताद अमीर खान ध्वनि मुद्रण ऑल इंडिया रेडियो रिकॉर्डिंग*
5. *भारतीय संगीत एक एतिहासिक विश्लेषण लेखक– शर्मा, प्रो स्वतंत्र प्रकाशन– अनुभव पब्लिशिंग हाऊस, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश द्वितीय संस्करण –2014*

ISSN 2277-5587

बैराठ की पुरातात्विक पृष्ठभूमि तथा अशोक के अभिलेख की विषयवस्तु का विश्लेषण

डॉ. अनुपमा गोदारा
सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, विद्याधरनगर, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

बैराठ वर्तमान में राजस्थान राज्य के जयपुर जिला के विराटनगर तहसील में स्थित है। बैराठ से मौर्य सम्राट अशोक के दो अभिलेख कलकत्ता बैराठ शिलालेख तथा लघु शिलालेख प्राप्त होते है, जिससे मौर्य साम्राज्य में बैराठ की महत्त्वपूर्ण भू-राजनैतिक महत्त्व पर प्रकाश पड़ता है अशोक ने इस महत्त्वपूर्ण स्थल के चयन अपने संदेश के राष्ट्रव्यापी प्रचार-प्रसार के एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव के रूप में किया था। इस शोधपत्र में अशोक के इन अभिलेखों की लिपि, भाषा, विषयवस्तु सन्दर्भ का अध्ययन क्षेत्र के भू-सांस्कृतिक आयाम के साथ किया जाएगा।

संकेताक्षर : *बैराठ, पुरातात्विक, अशोक, अभिलेख, विराटनगर, राजस्थान।*

प्राचीन मत्स्य जनपद की राजधानी बैराठ (विराटनगर) वर्तमान में जयपुर जिले में आता है तथा उससे 90 कि.मी. दूरी पर स्थित है। राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली से यह लगभग 200 कि.मी. की दूरी पर अरावली की पहाड़ियों में स्थित है। बैराठ से अशोक के दो लघु शिलालेख प्राप्त हुए है, बैराठ अभिलेख[1] तथा कलकत्ता-बैराठ[2] अभिलेख मौर्य काल का यह एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र अवश्य रहा होगा तभी सम्राट अशोक ने इसे अपनी धम्म प्रचार की नीति के केन्द्र में रखा 1837 ई. में जेम्स प्रिंसेप के प्रयत्नों से ब्राह्मी लिपि को पढ़ा जाना सम्भव हो सका तथा इसके साथ ही किवदंतियों में प्रचलित राजा अशोक अपने अभिलेखों के माध्यम से जीवित हो उठा क्योंकि उसके अधिकांश अभिलेख ब्राह्मी लिपि में ही उत्कीर्ण थे। 1838 ई. में खरोष्ठी लिपि को जेम्स प्रिंसेप, कार्ल लुडविग, किस्ट्रीयन लॉसन के संयुक्त प्रयास से पढ़ लिया गया। इससे अशोक उत्तर-पश्चिमी भारत में स्थित शहबाजगढ़ी[3] तथा मानसेहरा[4] अभिलेखों को पढ़ा जाना सम्भव था। जस्टिन भी उल्लेख करता है, ''वह भारत का स्वामी था''[5] मुद्राराक्षस में उल्लेख आता है कि वह सम्पूर्ण जम्बुद्वीप का स्वामी था तथा देश का एक मात्र सम्राट था जिसका विस्तार पहाड़ों के स्वामी (हिमालय) जिसे दिव्य धारा (गंगा) की ठंढ़ी फुहारों से ढंडा किया जाता था वहाँ से दक्षिणी सागर के छोर तक था जहाँ लाखों मणियाँ नाना प्रकार के रंगों में चमचमाती थी।[6]

राजस्थान में मौर्य साम्राज्य का आगमन एक नवीन युग का आरम्भ था। यद्यपि पहले भी यह पड़ोसी शासकों के राज्य का अंग रह चुका था। लेकिन मौर्य युग में यह पहला अवसर था जबकि राजस्थान अखिल भारतीय साम्राज्य का अभिन्न अंग बना इस रूपान्तरण का सबसे बड़ा प्रमाण अशोक के शिलालेख है उदाहरण के लिए भाब्रू अभिलेख[7] जो जयपुर जिले में पाया गया है वह मगध के संघों की अधिकारिता सीमा का राजस्थान तक विस्तार करता है, इसी प्रकार अशोक भिक्षुओं तथा भिक्षुणियों के लिए कुछ बौद्ध धर्म ग्रन्थ[8] पठनीय बताता है, जिनका केवल बौद्ध साहित्य की दृष्टि से ही नहीं अपितु राजस्थान के सांस्कृतिक इतिहास के साथ भी गहरा सम्बन्ध हैं। इससे प्रकट होता है, राजस्थान अशोक धर्म प्रचार अभियान तथा बौद्ध संघों की गतिविधियों से गहरे ढ़ंग से प्रभावित था तथा निश्चित लगता है कि तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व से राजस्थान में बौद्ध धर्म गहरी जड़ जमा लेता है। अशोक के शिलालेखों का अनेक प्रकार से अध्ययन किया जा सकता है जैसे प्रथम श्रेणी में चतुर्दश शिला अभिलेखों का समूह आठ स्थानों गिरनार, कालसी, शाहबाजगढ़ी, मानसेहरा, धौली, जौगढ़, सोपारा तथा एर्रगुडि से प्राप्त होता है, दूसरा समूह लघु शिलालेखों का है, जो रूपनाथ, सहसराम, बैराठ कलकत्ता-बैराट, गुर्जरा, मास्की, निट्टुर, उदयगोलम, ब्रह्मगिरि,

सिंहपुर, जटिंगरामेश्वरम्, एर्रगुडि, गोवीमठ, पालकिगुण्डु, राजुलमण्डगिरि, अहरौरा से प्राप्त हुए है। तृतीय खण्ड में गुहा अभिलेख आते है, जो बराबर तथा नागार्जुनी गुफाओं में मिलते है, चर्तुथ खण्ड में स्तम्भ अभिलेख आते है, जिनकी संख्या छः है दिल्ली टोपरा, दिल्ली मेरठ, लोरिया अरराज, लोरिया नन्दनगढ़, रामपुरवा, प्रयाग स्तम्भ, पंचम खण्ड में लघु स्तम्भ अभिलेख आते है जिसकी संख्या छः है, साँची, सारनाथ, कौशाम्बी, रानी स्तम्भ, रूम्मिनदेई, निगाली सागर, इसके अलावा तक्षशिला तथा लगमान से अरेमाइक लिपि में अभिलेख तथा कन्धार से द्विभाषी (यूनानी–अरेमाइक) अभिलेख प्राप्त हुआ है।

रोमिता थापर, दिलीप कुमार चक्रवती तथा हेनरी फाल्क ने यह प्रमाणित करने का प्रयास किया कि ये अभिलेख जान बूझकर विशिष्ट भू सांस्कृतिक क्षेत्रों में स्थापित किए गए थे। कनिंघम वो पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने कार्पस इन्सक्रिप्शन ''इंडिकेरम।''[9] के लिए अभिलेख के भूगौलिक क्षेत्रों का दौरा कर आँकड़े इक्कट्ठे किए। उसने व्यक्तिगत तौर पर अशोक अभिलेख, स्तम्भों, गुफाओं का दौरा किया अपने कार्य के प्रथम भाग में प्रत्येक पुरातात्विक स्थल के आकार उसकी मानचित्र पर अवस्थिति तथा दशा का वर्णन किया। बिल्कुल इसी प्रकार का सर्वेक्षण ई.हुल्तज[10] के द्वारा 1920 के दशक में किया गया। उनके कार्य की गुणवत्ता, मास्की अभिलेख की खोज से और बड़ी साथ उन्होंने अशोक के अभिलेखों का बेहतर संपादन भी किया, बाद में रोमिला थापर[11] अशोक के अभिलेखों की भू अवस्थिति पर एक पूरा अध्याय लिखा। अभिलेखों की भू अवस्थिति बेहद महत्त्वपूर्ण है, इन जगहों का चुनाव मनमाना नहीं था। वे जान बुझकर ऐसे स्थानों पर स्थापित किए गये थे, जो या तो आवासीय क्षेत्र के नजदीक ये अथवा महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग पर थे या धार्मिक महत्त्व के स्थान पर थे, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि उन्हें अधिक–से–अधिक लोग देख सके।

हेरी फाल्कं[12] ने अशोक के अभिलेखों के भू–अवस्थिति का सर्वेक्षण कर निष्कर्ष निकाला है कि मुख्य शिलालेख साम्राज्य की सीमाओं पर स्थित थे जब स्तम्भ अभिलेख उन स्थानों पर स्थापित किए गये जो बौद्ध संघों से सम्बन्धित थे। वही लघु शिलालेख ऐसे स्थानों पर पाए गए है जो आवासीय जगहों से थोड़ा दूर थे, परन्तु इनमें से कुछ स्थान ऐसे थे जहाँ वर्ष में एक बार मेला अथवा यात्रा अवश्य होती थी। वही दिलीप चक्रवती[13] के अनुसार अशोक ने अपने अभिलेखों को ऐसे स्थान पर स्थापित किया था जहाँ वर्ष कुछ अवसरों पर भारी भीड़ जुटती थी चाहे यह मातृदेवी की उपासना हेतु हो अथवा अन्य किसी धार्मिक कृत्य हेतु, इनमें से कुछ स्थानों पर तो यह परम्परा अभी भी चली आ रही है।

बैराठ से अशोक के अभिलेखों की खोज

यदि बैराठ के पुरातत्व की चर्चा की जाए तो 19वीं शताब्दी में यहाँ से अशोक के दो अभिलेख प्राप्त होते है तथा ये मौर्य शासन में इस स्थान का महत्त्व का स्थापित करते थे। 1840 ई. में केप्टन थॉमस बर्ट के द्वारा एक अभिलेख शिला को बैराठ के समीप के एक पहाड़ी से खोजा जाता है, यह पत्थर की शिला कलकत्ता ले जायी जाती है तथा एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल को सौप दी जाती है अतः यह कलकत्ता–बैराठ अभिलेख कहलाती है। बर्ट[14] सूचना प्रदान करते है कि उन्हें एक अभिलेख कठोर ग्रेनाइट के पत्थर पर मिला है, जो आकार से लगभग तीकोना है, जो दो तरफ से दो फुट चौड़ा है तथा तीसरे ओर 1½ फुट चौड़ा है। बर्ट के अनुसार उन्हें यह अभिलेख 'भ्राबरा' से मिला है, जो बैराठ से छः कोस या 18 कि.मी. दूर था। डी.आर. भण्डाकर अपनी प्रगति रिर्पोट[15] में कहते है कि केप्टन बर्ट अवश्य ही 'भ्राबू ठहरे होंगे, जिन्हें उसने गलती से 'भ्राबरा' समझ लिया।' इस[16] अभिलेख की प्रतिलिपि केप्टन किटो महोदय द्वारा प्रस्तर मुद्रित किया। उन्होंने ही इसका लिपियान्तर तथा भाषान्तर किया। इस कार्य में उन्हें प्रसिद्ध विद्वान कामता–कान्त ने सहायता प्रदान की। श्री बर्ट की प्रतिलिपि के आधार पर बनैफि महोदय इस अभिलेख का संपादन किया।

कलकत्ता बैराठ अभिलेख

(धर्म–पर्याय)

1. प्रियदसि लाजा मगध संघ अभिवादेत्नं आहा अपाबाघतं च फासु विहालतं चा
2. विदिते वे भंते आवतके हमा बुघसि धंमासि संघसी ति गालवे च प्रसादे च ए केचि भंते
3. भगवता बुघेन भासिते सर्वे से सुभासिते वा ए चु खो भंते हमियाये दियेसा हेवं सघंमे
4. चिल ठिकीते होतसी ति अलहामि हमं तं वातवे इमानि भंते घंम पलिया यानि विनय समुकसे

5. अलिय वसाणि अनागतभयानि मुनी गाथा, मोनेय सूते उपतिसपसिने ए चा लाघुलो–

6. वाडे म्रुसावादं अधिगिच्च भगवता बुघेन भासिते एतानि भंते धंमपानियायनि इच्छामि

7. किंति बहुके भिखुपाये चा भिखुनिये चा अभिखिन सुनेभु चा उपाघाल येयू चा

8. हेवंमेवा उपासका चा उपासिका चा एतोनि भंते इमं लिखापयायि अभिप्रेतं में जानंतू ति

कलकत्ता–बैराठ अभिलेख

हिन्दी भाषान्तर

1. प्रियदर्शी राजाने मगध[1] संघ को अभिवादन करके (उसमें रहने वाले भिक्षुओं की) निविंघ्नता और सुख विहार (आराम) के बारे में कहा (पूछा)

2. यह आप लोगों को विदित है कि बुद्ध धर्म और संघ में कितनी प्रगाढ़ मेरी श्रद्धा और विश्वास है[2] भदन्त जो कुछ भी

3. भगवान बुद्ध द्वारा भाषित है वह सब अच्छी तरह सुषोभित है। किन्तु भदन्त जो कुछ मुझे निश्चित रूप से लगता है (और धर्मग्रन्थों में जिसका संकेत है कि (धर्म)

4. चिरव्यापी होगा[3] उसकी धोषणा करना मेरा कर्त्तव्य है, भदन्त थे धर्म पयार्य है– विनयसमुकस[5], अलियवस[6], अनागतभव[7], मुनिगाथा मोनेय सूतं उपतिस–पसिन[10] ऐसे ही लाघुलो

5. बाद में मृषावाद का विवेचन करते हुए भगवान बुद्ध द्वारा जो कहा गया है।[11] मदन्त! मैं चाहता हूँ कि इन धर्म पर्यायों को

6. क्या कि बहुसंख्यक भिक्षुपाद और भिक्षुणिया प्रतिक्षण सुने और उनका मनन करे

7. इसी प्रकार उपासक और उपासिकाए भी मदन्त! इसी प्रयोजन के लिए इसे लिखता हूँ लिखता हूँ कि (लोग) मेरे उद्देश्य को जानें।

भाषान्तर टिप्पणी

1. हुल्तन आदि विद्वानों ने (मगध) को राजा का विशेषण माना है हुल्तन ने अपने समर्थन में विनयपिटक (राजा मगधों सेनियो बिमिसारो) महापरिनिखान सुतान्तु (राजा मगधो अजातशत्रु) उद्धत किया है। परन्तु अशोक के अभिलेखों में राजा के विशेषण पूर्वगामी है, अतः 'मगध संघ' के विशेषण के रूप में ही ग्रहण करना चाहिए।

2. यह संघ शरण स्वीकार करने का औपचारिक प्रवज्या मंत्र है इससे हम तथ्य में संदेह नहीं रह जाता है, कि अशोक ने बौद्ध धम्र स्वीकार कर लिया था।

3. महाव्युत्पत्ति और अंगुत्तर निकाय में यह वाक्य मिलता है

4. नित्य परायण के लिए धर्मग्रंथ अथवा धर्मग्रंथों से चयन

5. विब्रम समुत्कर्ष । डॉ.वेणीमाघव बऊआ के अनुसार सिगालोवाद सुत्तान्त)

6. आर्य वंशा। (अंगुत्तर भाग–2)

7. अनागतम्यानि (अंगुत्तर भाग–3)

8. मुनिगाथा (सुन्तनिपात, मुनिसुत्त भाग 1)

9. मौनय सूत्तम (सुत्तनिपात) नालक सुत्त, भाग–3

10. उपतिष्य प्रश्न (सुत्रनिपात भाग–4, सरिपुत्र सूत्र)

(मझ्झिम निकाय, भाग I , राहुलोवाद सुत्र)

अलेक्जेण्डर कंनिघम[18] के द्वारा बैराठ का सर्वेक्षण 1860 के दशक में किया गया उनके अनुसार वर्तमान बैराठ शहर के घाटी के मध्य स्थित है। जिसे छोटी लाल पहाड़ी घेरे हुए है, जो लम्बे समय से अपने ताँबा उत्पादन के लिए प्रसिद्ध रही है, यह दिल्ली के 105 मील दक्षिण–पश्चिम में तथा जयपुर के 41 मील उत्तर में है। घाटी में मुख्य प्रवेश एक छोटी नदी के तट के सहारे–सहारे उत्तर पश्चिम से है, जो बाणगंगा की मुख्य सहायक शाखा है। बैराठ एक टीले के ऊपर स्थित है जो एक मील लम्बा तथा ½ मील चौड़ा है, अथवा 2½ मील घेरे में है। आस–पास के मैदान टूटे–फूटे बर्तन के टुकड़े तथा प्राचीन ताम्र धातु मल से पटे–पड़े है।

634 ई. में चीनी यात्री ह्वेनसांग बैराठ की यात्रा करता है उसके अनुसार राजधानी 14 ली या 15 ली अथवा 2½ मील के घेरे में थी यह प्राचीन टीले का लगभग वही आकार था, जिसकी वर्तमान बैराठ बसा है। ह्वेनसांग के अनुसार यहाँ आठ बौद्ध संघ थे परन्तु उनमें से अधिकांश पतन की अवस्था में थे, तथा उसमें बौद्ध भिक्षुओं की संख्या भी कम थी जबकि बाह्मण जो विभिन्न पंथो के थे उनकी संख्या 1000 थी तथा

उनके मंदिरों की संख्या 12 थी इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि तृतीय सदी ईसा–पूर्व से लेकर सातवीं सदी तक मत्स्य क्षेत्र राजस्थान में बौद्ध धर्म का एक प्रधान केन्द्र रहता है। लेकिन साथ ही कंनिघम कोई नया अभिलेख ढूढ़ने में असफल रहते है।

कनिघंम के सर्वेक्षण के उपरांत भारतीय लिपिशास्त्री एवं पुरातत्वशास्त्री भगवान लाल इंद्रजी जनवरी 1872 बैराठ लघु शिलालेख की खोज की तथा अपने इस खोज की सूचना उनके द्वारा जुनागढ़ के नवाब को दी गई। अशोक के इस अभिलेख की खोज की सूचना मई–जून 1872 में गुजरती समाचार पत्रिका सौराष्ट्र दर्पण में प्रकाशित हुई। अपने पत्र में उन्होंने उल्लेख किया।[19] ''विराट एक छोटा कस्बा है, यह जयपुर के उत्तर–पूर्व में 40 मील की दूरी पर तथा अलवर दक्षिण–पश्चिम में 30 मील की दूरी पर स्थित है, यह एक ऊँचे टीले पर स्थित है, तथा थोड़ी दूरी पर चारो ओर पहाड़ियों से घिरा है, जिससे इस स्थल के दुगीकृत होने का आभास होता है, विराट का दक्षिणी हिस्सा पहाड़ी है जहाँ प्राचीन बौद्ध मठ के अवशेष है, इन्हें के निकट अशोक का एक खुदा हुआ अभिलेख है, जो वर्तमान में एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, कलकत्ता में सुरक्षित है, मैंने भीम की पहाड़ी की तलहटी में एक नया अभिलेख खोजा है, जो ग्रेनाइट की चट्टान पर उत्तीर्ण।''

ए.सी.एल कार्लाइन बैराठ क्षेत्र में पूर्व की खोजो से अनभिज्ञ में 1871–72 तथा 1872–73 में अपने पूर्वी राजस्थान के एतिहासिक सर्वेक्षण में वह अशोक के दो अभिलेखों को खोजने का दावा करते है। ''मचिणी से ऊँचा पहाड़ के मेरे रास्ते, मुझे बैराठ की घाटी को पार करने की आवश्यकता थी परन्तु जनरल कनिघंम पहले ही बैराठ का दौरा कर चुके थे और उसका वर्णन 1864–65 की पुरातात्विक रिर्पोट में कर दिया था। मैं वहाँ ज्यादा से ज्यादा एक या दो दिन गुजरना चाहता था। अपने घोड़े का इंतिजार करता हूँ जिसे मैं पीछे बीमार छोड़ आया था। बैराठ में मेरे अल्पकालीन ठहराव के दौरान अर्जित जानकारी के आधार में अशोक के दो प्राचीन अभिलेख खोजने में सफल रहा।''[20]

इद्रजी अभिलेख की ली गई छाप से पर्याप्त सतुष्ट थे, कि इसे पढ़ा जाना सम्भव होगा, जबकि कार्लाइन छाप लेने में असफल रहा। जार्ज ब्लूहर ने इद्रजी के कपड़े की छाप के आधार पर अभिलेख की प्रतिलिपि तैयार तथा इसी आधार पर कनिंघम ने इसे कार्पस इंसक्रिपशन इंडिकेरम में छापा।

बैराठ अभिलेख[21]

पराक्रम का फल

1. देवानांपिये आहा (1) सति.....
2. वसानि य हठं[1] उपासके (2) नो चु बाडं.....
3. अं मनया सघे[2] उपायाते बाड च.....
4. जंबुदिपसि अभिसा न देवेहि..... मि..... कभस एस.....ले
5. विपुले पि खगे चम्पे आलाघेतवे.....का च उडाला चा पलकमकु ति
6. अंता पि च जानंतु ति चिलठित..... लं पि बडिसति.....
7. दिभड़ियं वडिसाते.....

हिन्दी भाषान्तर

1. देवानांपियने कहा– 'कुछ अधिक.....
2. वर्षोतक मैं उपासक रहा। किन्तु बहुत अधिक.....
3. जो मैंने संघ की शरण ली। बहुत अधिक.....
4. जम्बुद्वीप में अभिश्र देवता.....मिश्र.....। यह पराक्रम का फल है
5. यह केवल महान व्यक्ति द्वारा ही शम्य नहीं..... पराक्रम करने वाले द्वारा
6. विपुल स्वर्ग प्राप्त करना शम्य है। क्षुद्र और उदार पराक्रम करे
7. सीमावर्ती लोग भी जाने। पराक्रम चिरव्यापी होवे।..... बहुत बढ़ेगा।
8. डेढ़ा बढ़ेगा.....।

जयपुर राज्य पुरातत्व विभाग की ओर से दयाराम सहानी[22] के द्वारा 1935–36 में बैराठ में व्यापक स्तर पर उत्खनन कार्य किया गया, जिसमें एक बौद्ध विहार स्तूप तथा अशोक कालीन वृत्ताकार चैत्य के साक्ष्य प्राप्त किए जाये। कनिघंम के अनुसार विशाल चट्टानों के समूह के मध्य स्तूप विद्यमान था। स्तूप के सहारे–सहारे बौद्ध भिक्षुओं के निवास हेतु निवास ग्रह बनाए गये थे। इस बौद्ध संघाराम का सबसे संरक्षित हिस्सा पूर्वी क्षेत्र में था जिसमें दो कतारों में छः से सात छोटे कमरे विद्यमान थे। सहानी के द्वारा इसी संघाराम के एक कमरे की दीवार से मिट्टी के बर्तन में 36 चाँदी

के सिक्के प्राप्त किए गये थे जिसमें आठ पंचमार्क सिक्के मौर्यकालीन थे, जबकि 28 सिक्के हिंद यवन शासकों के थे, इस खोज से पता चलता है। ईस्वी की पहली सदी तक यह संघाराम अस्तित्व में था लेकिन दयाराम सहानी सातवीं शताब्दी में ह्वेनसांग द्वारा उल्लेखित आठ बौद्ध विहारों में एक केवल एक छोड़कर अन्य को ढूढ़ने में असफल रहे।

एक महत्त्वपूर्ण खोज अशोक के स्तम्भों की खोज थी दयाराम सहानी को चुनार पत्थर के सौ से भी अधिक पालिशदार पत्थर के टुकड़े मिले जो निश्चित रूप से अशोक के स्तम्भ से सम्बन्धित थे। इनमें से कुछ टुकड़े आधा इंच लम्बे थे जबकि बड़े टुकड़े 18 इंच चौड़े तथा 7 इंच लम्बाई में थे जिससे प्रतीत होता है कि यह स्तम्भ तीन से साढ़े तीन फुट व्यास का था, सहानी के अनुसार किसने यह स्तम्भ तोड़ा होगा, यह पता लगाना पूर्ण रूप से कभी भी सम्भव नहीं है लेकिन उनके अनुसार यह श्वेत हुणों का कार्य अधिक प्रतीत होता है। तृतीय शताब्दी ईसा-पूर्व में मौर्यकाल में केवल बैराठ ही बौद्ध धर्म का केन्द्र नहीं था सांभर से भी बौद्ध अवशेष प्राप्त हुए है नलिसासर की ताजे पानी झील के किनारे मि.लायन तथा टी.एच. हेडल द्वारा किए गये उत्खनन में पंचमार्क सिक्कों के साथ बौद्ध अवशेष प्राप्त होते है हेडले के अनुसार यहाँ से उत्खनन प्राप्त वस्तुएँ बौद्ध धर्म से सम्बन्धित है तथा सांभर एक महत्त्वपूर्ण बौद्ध शहरी केन्द्र बनकर उभरा।"[23] इस प्रकार यह प्रकट होता है कि बैराठ न केवल राजस्थान अपितु सम्पूर्ण पश्चिमी भारत में मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत एक महत्वपूर्ण स्थान रखता था।

संदर्भ ग्रथ सूची

1. *राजबलि पांडेय, अशोक के अभिलेख, ज्ञान मण्डल लिमिटेड वाराणसी वि.सं. 2022, पृ. 114*
2. *वही, पृ. 115*
3. *वही, पृ. 43-60*
4. *वही, पृ. 61-76*
5. *डॉ. आर. सी. मजूमदार, क्लासिकल एकांउट ऑफ इण्डिया, के.एल. मुखोपाध्याय, कलकत्ता, 1960, पृ. 193*
6. *नीलकंठ शास्त्री, संपादक, द ऐज ऑफ द नन्दाज एण्ड मौर्याज़, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1988, पृ. 156*
7. *राजबलि पाड़ेय, अशोक के अभिलेख, ज्ञान मण्डल लिमिटेड वाराणसी वि.सं. 2020, पृ. 115*
8. *वही, पृ. 116*
9. *कनिंघम, कार्पस इंसक्रिप्शन इंडिकेरम, Vol. I कलकत्ता आफिस ऑफ दी सुपरिटेंडेट ऑफ गवर्नमेंट प्रिंटिग 1877*
10. *हुल्ट्ज, इन्सक्रिप्शन ऑफ अशोका कार्पस इंसक्रिप्शन इंडिकेरम नई दिल्ली 1925*
11. *रोमिला थापर, अशोका एण्ड डिकलाइन ऑफ मौर्याज, आक्सफौर्ड प्रेस 1961, पृ. 228*
12. *हेरी फाल्क, अशोकन साइट्स एण्ड आर्टीफेक्टस; ए सोर्सबुक विद विवलोग्राफी 2006, पृ.51*
13. *दिलीप कु. चक्रवती, रायल मैजेज बाय दी बिसाइड हिस्टोरिकल ज्योग्राफी ऑफ अशोकन एडिक्ट, आर्यन बुक इन्टरनेशनल नई दिल्ली, पृ. 1*
14. *थामस बर्ट, इन्सक्रिप्शन फाउण्ड नियर भ्राबरा थ्री मार्चेन फ्राम जैपुर आन दी रोड टू दिल्ली इन जर्नल ऑफ दी एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल वाल्यू IX पार्ट I 661-621*
15. *आर.भण्डाकर, प्रासेस रिपोर्ट ऑन अर्कियोलाजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया वेस्टर्न सर्किल बाम्बे 1909-10, पृ. 45*
16. *राजबलि पांडेय, अशोक के अभिलेख, ज्ञान मण्डल लिमिटेड वाराणसी पृ. 5*
17. *राजबलि पांडेय, अशोक के अभिलेख, ज्ञान मण्डल लिमिटेड वाराणसी वि.सं. 2020,पृ. 115*
18. *कनिघंम, एंशियेंट ज्योग्राफी ऑफ इण्डियां, मुन्शीराम मनोहरलाल, दिल्ली, 2002 पृ. 343*
19. *वीरचंद धर्मसे, भगवान लाल इंद्रजीः दी फर्स्ट इण्डियन आर्कियोलाजीस्ट दर्शक इतिहास निधि, नई दिल्ली 2012*
20. *ए.सी.एल कालाईन, रिपोर्ट ऑफ ए टूर इन इस्टर्न राजपूताना इन 1871-72 एण्ड 1872-73 कलकत्ता 1878, पृ. 91*
21. *राजबलि पांडेय, अशोक के अभिलेख, ज्ञान मण्डल लिमिटेड वाराणसी संवत 2022 पृ. 114*
22. *दयाराम सहानी, आर्कियोलाजीकल रिमेन्स एण्ड एक्सकेवेशन एट बैराठ, डिपार्टमेंट ऑफ आर्कियोलाजी एण्ड हिस्टोरिकल रिसर्च जयपुर स्टेट, 1935-36, पृ. 20*
23. *दयाराम सहानी, आर्कियोलाजीकल रिमेन्स एण्ड ऐक्सकेवेशन एट बैराठ 1935-36, पृ. 2-3.*

A Sociological Study of Drug Awareness Among Students of HNB Garhwal University

Dr. Uma Bahuguna
Associate Professor, HNB Garhwal University, Srinagar (Uttarakhand)

Dr. Shivani
HNB Garhwal University, Srinagar (Uttarakhand)

shodhshree@gmail.com

Abstract

The aim of the study was to study the awareness of drugs among the students of HNB Garhwal University. This study was based on descriptive research methodology. The field of study is related to HNB Garhwal University. Birla campus of HNB Garhwal University was selected for the study. Out of three schools of HNB Garhwal University, 25 percent students from each level of School of Arts, School of Science and School of Education were selected on proportionate stratified sampling. That is, the sample of study was fixed to 580 students. Both primary and secondary sources have been used to collect the data. The results of the study revealed that out of the 580 respondents included in the study, 51.0 percent of the respondents were in the age group of 21 to 24 years. In which 45.9 percent boys and 54.1 percent girls were included. Most of the students do not know whether the Antinarcotic Act gives effect to drug abuse or not. Few students have the knowledge that complete prohibition in India was implemented during the time of Prime Minister Morarji Desai.

Keywords: *Drug, Sociological Study, Students, Garhwal, Campus, India.*

The history of drug addiction and drinking is very ancient. Examples of drinking in countries like Egypt, Greece, Babylon, China and India have been found since ancient times; But then it was generally confined to some special occasions among kings and wealthy people. For example, drinking alcohol was allowed on victory in war, on the occasion of any recreational work or on the occasion of social festivals and very few people consumed it in normal life and in some old civilizations restrictions on drinking were also imposed. The practice of drinking came into vogue among the common people only after the Industrial Revolution. It has been going on since that time till today. Over time there has been a rapid increase in its production and consumption. Today drug addiction and drinking has become a complex social problem in most of the countries of the world *(Pandey and Pandey, 2009)*.

In today's time youth are facing many social problems. One of which is the problem of drug abuse. The word 'drug' has been used from very ancient times since the beginning of civilization. In fact, no one specific date of introduction of drugs can be given. Substance addiction has brought serious problems to our home, school and community. According to the National Institute of Drug Abuse (NIDA), 'Illegal drug use and illegal drug use in a wrong way is considered drug abuse or drug addiction.

For intoxication, people usually initially use cough syrup and bhang etc. and gradually switch to charas, ganja, opium, brown sugar etc. (Kaur, 2014). Alcohol and psychoactive substances found in plants have been used since ancient times. Caffeine, cocaine and nicotine have also been used for centuries. Recently, the increasing influence of technology has led to an increase in mind-altering substances and new and highly potent synthetic substances (Stemel, 2002). Drug abuse is considered a dangerous social problem

in many Western countries; But in India it is still being seen as a problem and not a social problem. Because even today the people of India do not consider drugs to be a fatal problem, nor do they want to talk about it *(Ahuja, 1982).*

Review of Literature

Khan, R. A., Ghalib, A. et al (2018) selected "Alarming Signals of Drug Addiction among the Southern Youth in Bangladesh: A Survey Based Research" as the problem for their study. The objective of the study was to find out the dangers, causes, their sources, sources of funds, availability of drugs and prevalence of drug addiction. In this, data was collected from four different cities Opalganj, Khulna, Baghrat and Narail through questionnaire. Data was collected from 300 drug users by visiting their homes and visiting places where they used to consume drugs. The study findings found that the majority of drug addicts were young people aged 10-30 years. 48 percent of the youth were found to be addicted to cannabis, 19 percent yaba and 17 percent were found to be phedidyl. 53% of addicts got their drugs from nearby places and 30% from local traders. 30 percent of addicts used their pocket money, 23 percent of their jobs and 20 percent to get these drugs from commercial sources. 61% of addicts were found to be experiencing physical and psychological complications. But more than 60 percent of drug users were found trying to quit drug makers *(Khan, 2018)*. **Milliran, C. E., Richmond, T. K. et al. (2017)** selected "Contextual Effects of Neighborhood and Schools on Adolescent and Young Adult Marijuana Use in the United States" as the problem. In this paper, they looked at the effect of school and neighborhood on drug use among adolescent students and young adults. The purpose of the research was to find out about marijuana consumption among youth in schools and neighborhoods. The area of this study were high schools and feeder (secondary) schools in the United States. A total of 132 schools were included in the study. It is known from the findings that 51% of the respondents used drugs (marijuana). Out of which 49% were students. 32% of the respondents had a college degree. The highest rate of marijuana consumption was 32 percent in Americans and 1.9 percent among other youth. Addiction rates among youth from marijuana use were the lowest in Asian countries (9%) and among youths in other groups, marijuana use rates were found to be between 12% and 15%. Thus, the rate of marijuana consumption among youth did not differ significantly between schools and neighborhoods. Youth marijuana was consumed equally both at school and in the neighborhood ***(Miliran, 2017)***. **Jerrigan, D., Noel, J. et al. (2016)** selected "Alcohol Marketing and Youth Alcohol Consumption: A Systematic Review of Longitudinal Studies Published Sins 2008" as the research problem. The purpose of the study was to examine published studies on youth drinking and alcohol marketing since 2008. The area of study was Europe. To collect data, peer review papers that were identified by medical, scientific and social science databases, data from officially published organizations, etc. were included. A two-year study of more than 550 Scottish children aged 13 years found that they started drinking through engagement in free gifts, ownership of branded clothing, or participation in alcohol websites on social media. According to some studies, youth started consuming alcohol after coming into the marketing. It has been concluded that young people are more likely to consume alcohol after engaging in alcohol marketing practices *(Jerrigan, 2016)*. **Kabir, M. A., Harun, M. et al. (2016)** studied "Drug Addiction – Its Cases, Symptoms and Remedies". In his study, he has told about drug abuse, causes, symptoms and treatment. The study says that drug abuse is initially triggered by smoking. In Bangladesh, most of the parents were held responsible for children's cigarette consumption. Modern technology is important; But students in Bangladesh were using it in a wrong way. When they used syringes to take drugs, dangerous diseases like HIV, AIDS and cancer were spreading very fast. Factors such as

family conflict for taking drugs, higher parental income, more affection for children, lack of religious and moral education, etc. were attributed to factors. *(Kabir, 2016)*. **Rezahosseini, O., Ruhbakhsh, A. et al. (2014)**, selected "Drug Abuse among University Students of Rafsanjan, Iran" as the study problem. The aim of the study was to find out the extent of drug abuse among the students of Rafsanjan University in Iran. It was a cross-sectional survey of 1,260 students. In which 311 boys and 949 girls were included. The study concluded that benzodiazepines were a commonly used drug. 7.4 percent of the students were found to be using benzodiazepines for intoxication. The percentage of use of other drugs was cigarette and tobacco at 12.6 per cent, alcoholic drinks 4.7 per cent and opiates 3.3 per cent, respectively. 3.4 percent of the students took methylphenidate because they believed it increased alertness and level of consciousness. The study also found that the patterns of drug abuse among students were similar to other reports from Iranian universities *(Rezahosseini, 2014)*.

Aim of the Study

To know the awareness regarding drugs among the students of HNB Garhwal University.

Research Methodology

This study is based on descriptive research methodology. In descriptive research, knowledge is obtained about the current conditions, actions, attitudes and situation. After that a description is given in relation to it.

Study Area and Population

The field of study is related to HNB Garhwal University. Which is located in Srinagar, Pauri Garhwal of Uttarakhand state. HNB Garhwal University is divided into three campuses Birla Campus Srinagar, B Gopal Reddy Campus Pauri and Swami Ramtirth Campus Tehri. Out of which Birla campus has been selected for study. Out of 14 schools of H.N.B.Garhwal University, students in the age group of 17 to 32 years studying in 03 schools in the session 2019-20 were selected for the suitability of study and easy access to the respondents. In the session 2019-20, a total of 2,320 students were studying in the second year of undergraduate and postgraduate classes in the Faculty of Arts, Science and Education.

Sampling Method

In the present research, out of 03 schools of H.N.B.Garhwal University, 25 percent students from each level of School of Arts, School of Science and School of Education have been selected from proportionately stratified sampling. That is, the study pattern has been fixed for 580 students.

Data Collection

For the collection of study data, interview-schedule in the primary source and text-books, newspapers, articles, and reports, magazines etc. have been used in the secondary source. Thereafter the data is analyzed.

Data Analysis and Interpretation

The findings from the study revealed that out of the 580 respondents included in the study, most of the respondents 51.0 percent were in the age group of 21 to 24 years. In which 45.9 percent boys and 54.1 percent girls were included. Majority of the respondents were 71.0 percent general caste, 16.7 percent scheduled caste, 3.7 percent scheduled tribe and 8.6 percent other backward class. 59.1 percent of the respondents were found to be residents of rural areas and 40.9% of urban areas. Most of the respondents were 94.5 percent Hindu.

Statement 1:- 10.17 percent of the total respondents completely agree with this statement. 5.34 percent students agreed, 43.63 percent disagreed and 34.83 percent completely disagreed with this statement. Whereas 6.03 percent of the students do not know whether the society considers a person who consumes drugs as good or bad.

Statement 2:- 21.38 percent completely agree with this statement that the use of intoxicants in various types of marriage programs and festivals

has become a matter of social respect. 27.93 percent agreed, 25.69 percent disagreed, 4.48 percent completely disagreed. 10.52 percent of the respondents do not know whether drugs are used to show respect in the society or not.

Statement 3:- 10.68 percent out of 580 students completely agree with this statement and 31.21 percent agree that faulty association is the main reason for the increasing tendency of drug abuse among university students. 23.97 percent disagree with this statement and 11.21 percent completely disagree. They do not believe that faulty associations have anything to do with the tendency to use drugs. Whereas 22.93 percent did not respond in this regard. It is clear from the above data that association also has an effect on the individual.

Statement 4:- 1.21 percent out of 580 respondents completely agree with this statement and 3.79 percent agree that the Antinarcotic Act was passed in India in 1985. Whereas 15.34 percent students disagree with this statement and 14.31 percent completely disagree and 65.35 percent students do not know when the Antinarcotic Act was passed in India.

Statement 5: - 5.86 percent of the total students completely agree with the statement that the Antinarcotic Act gives effect to the use of drugs. Whereas 15.17 percent students agree with this statement, 19.66 percent disagree and 10.00 percent completely disagree and 49.31 percent do not know whether the Antinarcotic Act gives effect to drug abuse or not.

Statement 6:- Out of 580 students, 2.07 percent completely agree with this statement, 6.73 percent agree, 18.62 percent disagree and 10.51 percent completely disagree that complete prohibition was implemented in India at the time of Prime Minister Morarji Desai. Whereas 62.07 percent do not know about this subject.

Statement 7:- 38.45 percent of the total students completely agree with the statement presented, 19.83 percent agree, 7.92 percent disagree, 23.28 percent completely disagree and 10.52 percent do not know that the main reason is the use of drugs in violation of the rules of the society. is or not.

Statement 8:- 13.10 percent completely agree with this statement and 15.52 percent agree that a person feels good after consuming intoxicants. 27.41 percent disagree with this statement and 11.72 percent completely disagree. Whereas 32.25 percent do not know how a person feels after consuming drugs.

Statement 9:- 37.07 percent completely agree with this statement and 42.24 percent agree that due to intoxication, distance comes in the relationship of a person with his family. Whereas 7.76 percent disagree with it and 7.24 percent completely disagree. They do not believe that drugs cause any distance in a person's relationship with his family members and 5.69 percent do not know about it.

Statement 10:- 41.38 percent completely agree with the statement presented and 42.93 percent agree. They believe that the number of youth in the use of drugs is continuously increasing. 6.03 percent disagree with this statement and 3.63 percent completely disagree. Whereas 6.03 percent do not know whether the number of youth using drugs is increasing.

Statement 11:- 6.90 percent totally agree with this statement and 19.31 percent agree that intoxicants are easily obtained from medical stores than friends. 25.86 percent disagree and 13.28 percent completely disagree. Whereas 34.65 percent students do not know whether drugs are easily available from friends or from medical stores.

Statement 12:- 41.21 percent completely agree with this statement, 37.41 percent agree, 5.00 percent disagree and 6.90 percent completely disagree that consuming drugs without medical consultation is harmful to the body. Whereas 9.48 percent do not know whether the narcotic substance is harmful to the body without medical consultation.

Statement 13:- 8.62 percent of the total

respondents completely agree with the statement that one should stay away from friends who consume drugs. 13.97 percent agree, 31.55 percent disagree and 34.65 percent completely disagree and 11.21 percent do not know about this subject.

Statement 14:- 3.97 percent totally agree with this statement and 7.93 percent agree. That tobacco, gutka, cigarette come under the category of intoxicants. Whereas 33.79 percent disagree with it and 47.07 percent completely disagree and 7.24 percent students do not know whether tobacco, gutka, cigarette come under the category of intoxicants or not.

Statement 15:- 6.03 percent of the total students completely agree with this statement, 14.31 percent agree, 34.66 percent disagree and 22.41 percent completely disagree that the drugs related to intoxication given by the doctor also come under the category of drugs. Whereas 22.59 percent do not know about this subject.

Statement 16:- 5.34 percent completely agree with this statement and 21.38 percent agree that regular use of alcohol also comes in intoxicating substances. 36.72 percent disagree with this statement and 23.28 percent completely disagree. Whereas 13.28 percent do not know whether the regular use of alcohol turns into intoxicating substances or not.

Conclusions and Suggestions

Based on the data obtained from the study, it is concluded that most of the students believe that the society does not consider a person who consumes drugs as good and in the present time consuming drugs in marriage programs and festivals is respected in the society. subject has been considered. According to most of the informants, faulty association is the main cause of drug addiction among university students. But according to him other reasons are also responsible for drug addiction. The Antinarcotic Act was passed in 1985, very few students are aware of it and most of the students do not know whether the Antinarcotic Act gives effect to drug abuse or not. Few students have the knowledge that complete prohibition in India was implemented during the time of Prime Minister Morarji Desai.

Most of the informants believe that the violation of the rules of the society is due to the use of drugs and the person does not feel well after consuming the drugs. Most of the respondents believe that due to intoxication, there is distance in a person's relationship with his family members. According to most of the students of HNB Garhwal University, the number of youth is increasing in drug use. Fewer students believe that drugs are easier to obtain from medical stores than from friends. According to him, drugs are easily obtained from friends only. Most of the students believe that consuming intoxicants without medical consultation is harmful to the body. According to him, doctors will never allow the consumption of narcotic substances in any form. No person shall go to the doctor for consultation before consuming any intoxicant. Because they know that any kind of drug abuse is injurious to health.

Most students do not believe that one should stay away from friends who abuse drugs. Rather, they believe that instead of staying away from friends who abuse substances, they should be encouraged not to abuse substances. So that they can be helped to give up drugs. Fewer students believe that tobacco, gutka, cigarette come under the category of intoxicating substances. Whereas most of the students do not believe that all these come under the category of drugs. Most of the students do not believe that drug related drugs given by the doctor fall under the category of narcotics. Most of the students believe that regular use of alcohol does not turn into a drug and can lead to drug addiction. Lectures related to drugs should be organized for the students in schools and universities and workshops related to them should be organized from time to time. Lessons related to drugs should be included as a main subject in the curriculum of the students. So that they can be made aware about the effects and problems related to them.

References

1. *Pandey, T., & Pandey, S. (2009). Social problems in India. New Delhi: Tata McGraw Hill Education Private Limited, Page No. 141-142.*
2. *Ahuja, R. (1982). Sociology of Youth Subculture, Jaipur: Rawat Publication, Page No. 01.*
3. *Kaur, H. (2014). Violence against women and drinking. Delhi: Amazing Publication, Page No. 111.*
4. *Khan, R. A., Ghalib, A., et al. (2018). Alarming signals of drug addiction among the southern youth in Bangladesh: A survey based research. International Journal of Clinical and Biomedical Research, Volume 4(4), Page No. 17-19.*
5. *Milliran, C. E., Richmond, T. K., et al. (2017). Contextual Effects of Neighborhood and Schools on Adolescent and Young Adult Marijuana Use in the United States. Substance abuse: research and treatment. Sage Publications, Volume 11, Page No. 1-10.*
6. *Jerrigan, D., Noel, J., et al. (2016). Alcohol Marketing and Youth Alcohol Consumption: A Systematic Review of Longitudinal Studies Published Sins 2008. Society for the Study of Addiction, Vol 112(1), pp. 7-20*
7. *Kabir, M. A., Harun, M., et al. (2016). Drug Addiction- Its Cases, Symptoms and Remedies. Journal of Research in Humanities and Social Sciences, Volume 1(1), Pages No. 1-4.*
8. *Rezahosseini, O., Ruhabakhsh, A., et al. (2014). Drug Abuse Among University Students of Rafsanjan, Iran. Iran Journal of Psychiatric Behavior Science, Volume 8(2), pages 81-85.*
9. *Steimel, B. (2002). Alcoholism, drug addiction and the road to recovery. Routleys Tyler & Francis Group, New York, page No. 22.*

Artificial Intelligence and Data Protection: Technology and its Challenges

Dr. Meenakshi Punia
Assistant Professor, Sardar Patel University of Police Security and Criminal Justice, Jodhpur

shodhshree@gmail.com

Abstract

Artificial Intelligent machine have proliferated our lives so efficiently that today it will be a hard task for us to do away with such technology. The artificial intelligent systems at present are data dependent system hence various data dynamics are involved. The machine learning is a very important aspect of AI which is data dependent to. Therefore it is important to understand various data issues when dealing with AI. The data vulnerability , data privacy and data protection are one few important issues that also need urgent concern. This article will examine and discuss the legal and technological aspects involved in it via doctrinal analysis of various sources available in this matter.

Keywords: *Data Protection, Privacy, Machine Learning, Data Fairness, AI.*

The technology of Artificial Intelligence has lead to ease of business as well as life. From our smart phones to IoT devices , the intelligent device system is affecting our physical as well as digital lives. The artificial intelligence technology has penetrated into our lives in many folds and our exposure to it is marked into smooth transition into AI. Data is one of the most important relatability factor for an AI to be fair and transparent. It also depends on how this data is collected, stored and utilised. This is the sphere where data protection as well as data privacy laws and regulations become vital. Before digging in depths of various protocols as well as regulation, it is important to understand what we understand with data privacy and data protection .

Data Protection implies the safeguarding of something, in this case, say, a customer's data, from the hands of malicious offenders. So, data protection aims to protect the data from unauthorized access. On the other hand, privacy ensures that only the authorized can view the data. So, data privacy is about how the data is processed, handled, stored, and used.

The word "Data Privacy" and "Data protection" Let us go through some of those core differences between both terms:

Firstly, if we look closely, the words "protection" and "privacy" signify different things.

Secondly, data protection can be applied for just about any data, whether it be personal information or not. But the question of data privacy arises only when there's sensitive or confidential information that must be kept away from prying eyes. Hence, data protection does not ensure privacy; neither does data privacy provide protection. But, data protection precedes data privacy – you cannot ensure data remains private without protecting it. However, you should note that protecting data does not guarantee its privacy. If the methods of data protection aren't reliable, it becomes easy for hackers to get their hands on your information. Thus, robust processes of data protection, like sensitive data discovery, data anonymization, data minimization, and data monitoring, are necessary to enable foolproof privacy for sensitive data.

Thirdly, data protection is more technical in function, whereas data privacy is more legal. As I said, data protection includes methods and processes (technologies) put in place that ensure the privacy of data. On the other hand, the question of privacy arises because fundamentally, that information is something you don't want everyone to see, but on a larger scale, it is governed by privacy compliance laws like the GDPR, CCPA, PDPA, and the like. These laws recommend data protection measures that organizations can use to keep their consumers' data private. Again, you should note that compliance doesn't guarantee data security. You can read more about this in the following blog: Does Compliance mean Security?

With these three points, we've covered the significant differences between data protection and data privacy. You now know the fundamental meanings of both terms. But to make matters a little tricky, privacy compliance laws use different terminology to address the management of personal information. In the CCPA, it is grouped under 'privacy policy' and in the GDPR, under 'protection policy.' Also, the GDPR's scope of personal information is wider than it's successor's, the CCPA. However, it is essential that you do not get confused by all this terminology, but rather, understand the essence of the law. At the end of the day, you do not need a law to tell you to protect your data and to ensure the data subjects' privacy by doing so, you can choose to be proactive and keep the necessary measures in place without being mandated to do so("Differences between Data Protection and Data Privacy")

AI challenges associated with the data protection principles embodied in the GDPR (Norwegian Data Protection Authority (NDPA).):

- Fairness and discrimination
- Purpose limitation
- Data minimisation
- Transparency and the right to information

All this highly depends on machine learning process via algorithms for data utilisation. Therefore it is important to know what kind of data is used. There are 3 types of data (Labeeuw) which is used in operations and machine learning in general, these three types of data as used to train machine-learning models are as follows:

1. Visual data : Captured by cameras, visual data is made up of images that are tagged according to what they contain (people, vehicles, characters, defects, colours, quality, etc.). Computer vision is the corresponding AI technology for visual data.

2. Textual data: Gathered via camera, scanners or digital documents, textual data is organized into linguistically relevant characters, words, sentences and concepts. Natural language processing is its corresponding AI technology.

3. Numerical data: This type of data is neither visual nor organized into linguistic elements and is made up of figures and measurements gathered by machines, sensors or people.

It is important that fairness and transparency of data and minimum data manipulation can lead to the Fair Artificial intelligence. Any A.I which is based on data manipulation and r

Importance of the right to data privacy (Banerjee)

The importance of the right to data privacy are:

1. Prevents the government encroaching over lives of people.
2. Checks the incidences of personal data abuse for someone else's benefit
3. Data Privacy rights ensures about accountability of data and its usage.
4. Data Privacy rights maintains and limits social boundaries
5. Data Privacy rights put trusts in minds of people about safety of their data.
6. Privacy rights controls, checks, management of the data
7. Protection of freedom, speech and thought

in all walk of life is through data privacy rights.

In the era of social media, we often post something online which we regret later. Privacy rights give us the power to remove that information. The European Union (EU) addresses this as the "Right to be Forgotten" law. Thus, it helps people to remove their personal information available over the internet. An example of destroying a person's reputation is "Revenge Porn", it is a violation of privacy.

An individual and corporation must protect their confidential information. One must reveal its financial or credit or debit card data to anyone. Also if someone is sharing these data with a specific entity or a person, they must take every possible step to protect the information shared with them.

Private data : information that is not to be viewed by the public

Private data is information that is expected not to be viewed by the public, is a fundamental right of every individual and corporation. It is important for maintaining safety, security, and quality of life.

Difference between data privacy and data protection

Data privacy and data protection are interconnected and often used interchangeably. Data privacy is a fundamental right and is recognised under the Universal Declaration of Human Rights, the International Covenant on Civil and Political Rights, and various other international covenants. The Constitution of India also recognises the right to privacy under Article 21. The term 'data protection' means the tools, mechanism, and policies to secure the data to access by a third party without its owner's consent. It is also known as data security.

The EU is clear on its own viewpoint: it is based on respect for data privacy. Contrary to Chinese and U.S. models, Europe looks at AI's basic raw material, and restrictively: not just anything goes when it comes to feeding information to the machine. This is why it is reasonable to ask whether the European model is fully compatible with the development of Artificial Intelligence. (Transition)

Artificial intelligence and machine learning techniques are altering the way organizations gather, process, and protect data. They are being used to gather massive amounts of information about internet users in the form of big data, and to secure and protect it. The challenge is how to maximize the use of big data, while simultaneously safeguarding the information and protecting the privacy of individuals. Europe's General Data Protection Regulation (GDPR), which focuses on privacy, has several features that demand additional protection for the privacy of Europeans. (Expect the U.S. to follow within a few years.) The introduction of the GDPR has created the need for more complicated machine learning systems (Foote) .

Artificial Intelligence and the Data Protection Paradigm :

Besides the surge in AI technology there has been growing concerns across globe about how penetratively manipulated that AI be. As many of these technologies target human interactions on various levels hence targeting personal data of user for the understanding. Consequently, the relevant data protection legislation (in this case the General Data Protection Regulation/ GDPR) must be fully complied with in respect of the performed data processing within their development and operation to ensure the lawfulness and protection of the interests at stake. In that sense, what are the legal implications of AI in terms of the GDPR?(Zisov and Terziev)

I. Artificial Intelligence and the Principles of the GDPR:

As with all processing operations, the usage of personal data for the development of AI or through AI as a tool must first be assessed in view of the general principles of the GDPR. Often problematic in that regard are the principles of lawfulness, fairness, transparency (Art. 5, pt. 1,

sub-letter a), purpose limitation (Art. 5, pt.1, sub-letter b) and data minimization (Art. 5, pt. 1, sub-letter c).

A. AI and the Fairness Principle

AI algorithms use specific input data-sets in order to be trained and function as intended by producing a certain output result. There are two potential problems related specifically to the chosen data-sets(Zisov and Terziev):"the data-set may consist of "biased" data. Biased data is data, which is likely to systematically produce a particular result and is not objectively representative of the object of study. Consequently, this may cause the AI system to produce results that are incorrect or outright discriminatory, which is in direct conflict with the fairness principle; the data-set may consist of low quality or irrelevant data (including special categories of personal data). Low quality data is inaccurate and leads to the output of incorrect results, while irrelevant data relies on criteria that have no bearing to the desired function (thus also contradicting the purpose limitation and data minimization principles). To illustrate the above, in the past few years there have been cases in the USA where AI algorithms (e.g. functioning in the fields of healthcare, criminal justice and employment) have been reported to produce biased and discriminatory conclusions towards people of colour and women."

Fairness Principle must be applied in the AI systems when dealing with personal data of people.

B. Purpose Limitation

The principle of purpose limitation requires that the reason for processing personal data must be clearly established and indicated when the data is collected. The purpose of the processing also needs to be fully explained to the data subject, so that they can make an informed decision regarding consent where applicable, and be able to effectively exercise their rights under the GDPR. Further data processing is only permissible if it is compatible with the original purpose.

Machine learning often takes place by utilizing data-sets collected for other purposes. For this process to be in compliance with the GDPR, the controller must (Zisov and Terziev):

1) assess the existence of an applicable legal ground under Art. 6 (where it would usually come to the existence of a legitimate interest taking precedence over the rights and freedoms of the data subjects, as documented in a balancing test or a data protection impact assessment), and

2) consider whether the purpose of training of the AI algorithm is compatible with the initial purpose of processing. Compatibility as a concept is closely linked to fairness – the controller must consider any existing links between the purposes, the context of a collection of the information in particular in view of the relationship between the controller and the data subject, the categories of personal data processed and their sensitivity, the potential consequences for the data subject and the safeguards that could be implemented to mitigate such impact.There is an interesting exception to the purpose limitation principle which permits the re-use of processed data for scientific research and statistical purposes among other categories, which are very closely tied-in with the development of AI. Since the regulation does not provide a definition of the term "scientific research" and the functions of different AI systems may vary greatly, it is not possible to ascertain in general whether AI development should fall in any of those categories. Instead, a legal analysis is to be performed by examining all relevant circumstances in each individual case.

C. Data Minimization

The development of artificial intelligence usually requires the processing of huge amounts of data. On the other hand, the principle of data minimization compels that the gathered data must be used in an adequate, relevant and limited manner, only to the extent that is necessary for achieving the purpose for which it

was collected. Furthermore, this principle deals with the concept of proportionality of personal data processing, or in other words, it raises the problem of whether the specified objectives could be achieved in a manner that is less intrusive to the privacy of the natural persons. This may result in difficulties, as the application or function of AI systems can change during the course of their development or post factum. While it may be impossible to predict with certainty how a project or a business may evolve, the data minimization principle mandates that sufficient efforts should be taken to determine the exact needs of the algorithm and to select only the information that is actually relevant for those purposes.

These needs should be defined as clearly as possible beforehand in order to guarantee that the data subjects' rights will be respected and excessive collection of data will not take place. Precisely outlined objectives for the application and use of the AI system in addition to a clearly laid out business plan are necessary to guarantee compliance.

D. Transparency

One of the main reasons behind the adoption of the GDPR was the perceived goal to provide more clarity and certainty regarding the rights of data subjects in terms of data processing. This idea is deeply embedded within the regulation, none more so than within the principle of transparency. It lays down the bedrock upon which the specific provisions relating to the rights and obligations of controllers and processors, international transfers of data, etc. are subsequently placed. The articles of the GDPR are deliberately worded in an extensive and detailed manner in order to ensure a transparent application to the rules and safeguarding of data subject' rights.

Although, the artificial intelligence systems themselves have a very opaque nature, which has led them to be dubbed as "black boxes". When an algorithm produces a certain result, it could be impossible to trace back the logical steps it took and determine the reasoning behind them. Essentially, the present technological level does not always allow us to analyse how and why the algorithm processes data in a certain way.

The opaque nature of AI seemingly comes into conflict with the principle of transparency in terms of the application of Art. 22 of the GDPR. The provision stipulates that a data subject cannot in principle be subjugated to automated individual decision-making, which produces legal effects concerning him or impacts him significantly. While initially, this text can seem to have a very wide scope of application, the reality is somewhat different. Firstly, it requires that the data subject should be the focus of a d (Zisov and Terziev)

Artificial Intelligence is transforming every industry as we speak and it has the potential to grow further beyond our imaginations to benefit the world in numerous ways. From smart home and automation systems to personalized recommendations and chatbots, AI has already spread into almost all aspects of our life. The technology is enjoying rapid expansion and success, and data collection is one of the key contributors to that.

AI technology works by collecting data, and as it develops further, it will need to amass more variety of information and data. While this is essential for the AI systems to function flawlessly, a massive amount of information stored in the databases can pose a risk of security breaches as well. Yet the interesting thing about AI is that it can help to mitigate all the potential privacy risks and data protection concerns too.

Many enterprises have started to adopt different ways to use Artificial Intelligence to protect their sensitive as well as personally identifiable data already. This can be done by using big data, AI, and machine learning together for identifying cyberattack patterns and finding ways to bolster data security. AI and machine learning can analyse the previous attacks, understand how hackers find ways to penetrate into the network, and flag suspicious activities in real-time to

thwart cybercriminals. According to Gartner Security and Risk Survey 2019, over 40% of privacy compliance technology will rely on AI by 2023.

The Role of AI in the Protection of Data

AI has taken endpoint security measures to the next level by quickly analysing, detecting, and blocking cyberattacks based on an extensive behavioural study. Detecting cyber attacks usually rely on patterns. AI can prove to be very useful in studying existing data to recognize similar and familiar patterns in new data.

Artificial Intelligence and Machine Learning can alert the network admin or user as soon as it detects an anomaly or unusual behaviour when running an application or service in the system or network. It can also block malicious websites, suspicious actions, and unauthorized data transactions automatically before they are executed. Besides, AI can also help to roll back quickly to an earlier secure endpoint in case of a security breach.

As per the opinion of the various (10XDSTEAM) Artificial Intelligence mainly affects three areas in privacy and data management.

1. Privacy Concierge

As AI systems work as a "privacy concierge" for the network infrastructure where it identifies, redirects, and processes the data privacy requests. This is makes it less time consuming and also less hassle free. It also can also deal with complex data requests more efficiently.

2. Data Classification

The AI machines can sufficiently classify data and organise it in optimum way. Therefore managing the data is more easy and efficient. also through it is also more efficient in updating privacy standards.

3. Sensitive Data Management

The AI machines are more conversant in handling sensitive data requests and AI can handle and process sensitive data requests all by itself, which prevents it from falling into the wrong hands. This also eliminates the chances of human errors in industries that look to include an additional layer of privacy for their data. It can deal with massive date at ease compared to any other technology.

Artificial technology can be savvy in fighting against cyber crime related to phishing and malware infections in systems. It can also be used as an instrument to identify suspicious links posted or received on websites, emails, posts, apps, metadata, etc. Some AI and machine learning tools can even analyze the message context and determine the relationship between the subject and the content. Such behavioural analysis measures can help businesses to fight cyberattacks related to phishing and social engineering effectively.

Machine learning and AI are also capable of identifying malware, ransomware, and advanced persistent threats. They can easily analyse large amounts of historical data and generate predictive patterns of cyberattacks. AI can also help to develop a countermeasure for the threats as soon as it senses an abnormal pattern. That is why many enterprises use AI and machine learning for real-time analysis and monitoring of user data workflows. This helps to develop more robust intrusion-detection systems so that the network admins can identify attacks and respond to them immediately .

After the withdrawal of the Data Protection bill by Government of India (Singh) there is greater void in Data protection regime in India. This has also created a grey area regarding the data governance and management dealing with AI. As the present AI technology is reactive Act therefore it is highly dependable on Data. Without the proper Data protection regulation there is chance of non-consensual data use of citizens and Corporations can use sensitive data of individuals for creating AI which will be commercially exploited by these corporations. Privacy concerns are alarming too.

To conclude it is worthwhile to say that AI is the most extensive form of transforming technology.

It can be boon or bane. It is still in developmental stages and so are the laws and regulations to govern and manage it. There are questions relating to ethics and morality to which pose a conundrum in this field. Time is the essence that India must have a dedicated Data regime including law and execution of the law, which can put control and check on data protection and privacy issues.

References

1. *"Differences between Data Protection and Data Privacy." Mage, 12 Nov. 2020, magedata.ai/differences-between-data-protection-and-data-privacy/. Accessed 8 Aug. 2022.*
2. *Norwegian Data Protection Authority (NDPA). "Artifical Intelligence and Privacy." Norwegian Data Protection Authority (NDPA)., 1 Jan. 2018.*
3. *Labeeuw, Wouter. "3 Types of Data in AI and Why Data Drives Intelligent Automation." Delaware, 25 Aug. 2020, medium.com/delaware-pro/3-types-of-data-in-ai-and-why-data-drives-intelligent-automation-a09d76030ab4. Accessed 13 May 2022.*
4. *Banerjee, Shoronya. "Difference between Data Protection and Data Privacy." IPleaders, 25 May 2021, blog.ipleaders.in/difference-between-data-protection-and-data-privacy/. Accessed 8 Feb. 2022.*
5. *Transition, European Association for Digital. "Artificial Intelligence and Data Protection: An Impossible Relationship?" Dialogues on European Digital Transition, 11 Feb. 2022, digitalforeurope.eu/artificial-intelligence-and-data-protection-an-impossible-relationship. Accessed 23 June 2022.*
6. *Foote, Keith D. "Artificial Intelligence, Machine Learning, and Data Protection." DATAVERSITY, 21 Oct. 2021, www.dataversity.net/artificial-intelligence-machine-learning-and-data-protection/. Accessed 2 Mar. 2022.*
7. *Sara, "Artificial Intelligence & Data Protection." SEE Legal, www.seelegal.org/news/artificial-intelligence-data-protection/. Accessed 8 June 2022.*
8. *Zisov, Nikolay, and Deyan Terziev. "Artificial Intelligence & Data Protection | Article | Chambers and Partners." Chambers.com, 19 May 2020, chambers.com/articles/artificial-intelligence-data-protection. Accessed 24 May 2022.*
9. *10XDSTEAM. "How AI Can Help in Personal Data Protection and Privacy." 10xDS, 13 July 2020, 10xds.com/blog/ai-for-personal-data-protection-and-privacy/. Accessed 17 June 2022.*
10. *Singh, Manish. "India Withdraws Personal Data Bill That Alarmed Tech Giants." TechCrunch, 4 Aug. 2022, techcrunch.com/2022/08/03/india-government-to-withdraw-personal-data-protection-bill/. Accessed 7 Sept. 2022.*

Population Dynamics in Karauli District

Raghunandan Singh
Research Scholars, Career point university, Kota

shodhshree@gmail.com

Abstract

Of all the resources, man is the most valuable resource having relevance owing to his well-developed mind and capacity. Infact, man is not only resource in himself but all the other natural endowments which are treated as resources, are in a sense the creation of man-mind and his abilities. As Zimmerman and Michel have observed, Man-mind is the greatest resource itself. Man has played a crucial role as a controller, regulator, and modifier of resource according to his needs and capacity to fulfil his requirements. Thus, through his various interrelated activities in physical as well as cultural real man has emerged as "pivot" in the nature. Morgan has rightly remarked that "the land use patterns of agricultural system depend" not only on the physical environment and plants/animals' relationship, but all so social and economic conditions ascribed to type and level human activities. So, it is great relevance to appraise various aspects of human resource base. By analysing the population data of the last 100 years of Karauli district, how much and how has the change in population affected the development here. Also, what are the changes in the population distribution pattern here. An attempt has been made to analyse all these changes through this research paper and analysis is necessary to develop the district by making optimum use of the resources available here.

Keywords : *Distribution of Population, Density, Growth Rate, Age Structure, Literacy Level.*

In present population of Karauli district is 1458248 persons up to 2011.Which is distributed with much spatial variation associated with such factors as availability of fertile, land, transport and marketing facilities and impacts of floods etc, most of the people in the district reside in rural areas. The density of population of the district was 289 person per square km in 2011.Due to this change of population, the study of the changes taking place one the economic and social profile of Karauli district is very important and the study of how the invisible changes in land use due to the change of population can be used as development is essential.

Objectives

- To present the distribution of population in the district.
- Interpreting population pattern based on population growth over the last 100 years.
- To explain the dense and sparse areas of population density in district.

Review of Literature

The first population analysis study in the history of the world was conducted in 1953 by G.T. Trewartha. Following this, many economists and geographers made significant contributions to the field. These included Thomson, Lynne Smith, Ackerman, C. Clark, Ward, J.I. Clark Garner, Jalensky, Stamp, Alfrid Peterson, G.J. Demko, Adams Landry, Brasley, P.E. James, Buchnan, P. George, W.E.Mori are prominent scholars.

Indian Scholars in Population Studies- Ashish Bose, B.L.Agarwal, S.N.Agrawala, R.C.Chandana, G.S.Gosal, B.N.Ghosh, B.N.Puri, V.C. Misra, B.C.Mehta, Mansur Ahmed, S.J.Mehta, Suryakant, R.S.P.Gosal, K.N. Dubey, Prem Sagar, Smita Sen Gupta, S.C.Julka, P.K. .Sharma, Sodhiram, Dhaneshwari, Jitendra Mohan, Meher Singh Gill, F.Z Jamali, N.L Gupta, Hemlata Joshi, Sadhana Kothari, Ismail Haque, Indel Singh, Kamalkant Dubey, Mahendra Bahadur, Juzar Singh, Pushpa Pathik, Gopal Krishna, Abdul Razak, NuralAlam, A.S. Panwar, Anju Kohli, Gunjan Garg etc. have made their invaluable contribution.

In recent years, significant study isdone in thepopulation distributionby Bose, C.(2018), Chutia, L. J., and M.K. Sharma. (2016), Das, D., A. Kumar, and M. Sharma. (2020),Dash, M. (2016), Ribeiro HV, Oehlers M,Moreno-Monroy AI,Kropp JP, Yadav,S., Khan,Z. (2012), ZhangL, Lin X, LengL, ZengY,(2021), Zhou Q, Xu Y, Zheng Y,Shao J, Lin Y, Wang H,(2020), Khan, Zuber & Yadav, Sandeep & Mangal, Nikita. (2021) and Yadav Sandeep and Sahu Sonu (2022).

Study Area

Karauli district located in the south-eastern region of Rajasthan lies between 26o3l north to 26o49lnorth latitude and 76o 35l E to 77o 26l E longitude. The height for the sea level in the district 400 to 600 meters, and total area of district is 5043.02 (census report, 2011). It is bounded on the East by Dhaulpur district, on the North-East Bharatpur district, on the North – West Dausa district and the South-West Sawai Madhopurand on South-East by Madhya Pradeshstate.Chambal River separating the Karauli and Morena district (M.P. state).

Administratively, the district comprises 6 tehsils. The town of Karauli is the district headquarters. Karauli District comes under Bharatpur Divisional Commissionerate. Karauli is famous for popular red-stone. Karauli district consists of 85.04 percent rural and 14.96 percent urban population. While almost the entire district is covered by hills and ravines, there are no lofty peaks, the highest having an elevation of less than 1400 feet above sea level. Good grade stone and some iron ore comprise the mineral resources of the area. Karauli's natural environment includes the Vindhyanand Aravalli mountains. The district has plain, high, and low and hilly parts. The plains are fertile, and clay is lightweight and sandy. There are many rivers in the district. Annual rainfall is 580.36 mm, about 35 days in a year. Maximum temperature is 49 °C in May and 2 °C in January.

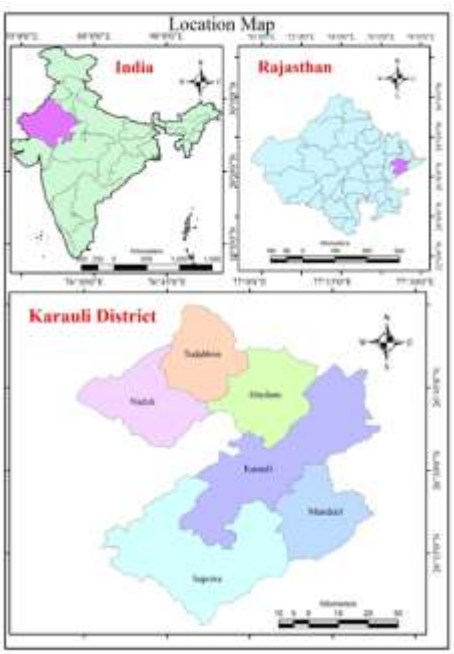

Methodology

The most appropriate unit of study has been determined to be the tehsil. The study's primary data source is secondary information that was gathered from numerous reliable government sources. The tehsil level data for total, male, female population has been taken from Census of India (2011) General Population Totals, Primary Census Abstract, Rajasthan. Data was first combined into several groups and tables in accordance with the needs of the study after being obtained from various sources. The study has made use of maps and several statistical techniques to fulfil its objective requirements and conduct a factual comparative analysis of the data.

Growth &Distribution Analysis

Decennial growth of population of the district gas been rather erratic. During the second and third successive decades of the century, tide creased owing to a variety of reasons such as epidemic and unhealthy seasons, the third and fourth decades witnessed a growth of 10.05% and 13.01%. Population growth continuously increased during next successive decades. The increase in the population of the district during the 1961-71decade was slightly less than the average increase for the whole of Rajasthan, which was 27.83%, In the present day, the growth rate of Karauli district is 20.54%. Table 1 shows medium growth of 36.57%during the period of 1921-71 while high growth during 1971-81 remained 16.36% but growth during 1981-1991 increased to 29.12% respectively. Between 1911 and 1921 this was marked decreased due to serve attack of various epidemics (e.g., cholera, plague etc.) famine and other natural calamities. But after 1921 the increase in number continued without interruption.

Table 1:Population Growth 1911-2011

Year	Total Population		Rural Population		Urban Population		No. of Urban centers	Sex ratio
	Population	Decennial Variation	% Population	Decennial Variation (%)	% Population	Decennial Variation (%)		
1911	344078	-	98.78	-	1.22	-	3	825
1921	305090	-10.8	98.18	-13.53	1.82	+2.03	3	820
1931	308988	+10.05	97.78	+2.69	2.22	+1.31	3	832
1941	334736	+13.01	96.39	+6.20	3.61	+2.26	3	830
1951	371931	+12.11	92.39	+9.10	7.77	+2.38	3	840
1961	444807	+23.32	90.49	+1.45	9.51	+5.90	4	835
1971	559266	+26.49	89.10	+24.56	11.90	+3.59	4	854
1981	798926	+42.85	88.33	+42.77	11.67	+4.66	5	867
1991	927719	+16.12	87.49	+14.01	12.51	+3.62	5	840
2001	1209665	+29.13	86.39	+29.29	13.61	+4.28	6	858
2011	1458248	+20.54	84.74	+18.24	14.96	+4.79	9	861

At tehsil level, during 1971-81 the growth was highest (53.10%) in Hindaun tahsil and lowest (+0.47%) inKarauli tahsil. In Karaulitehsil during 1941-51 growth decreased (-1.83%) due to epidemics. Medium growth (25.83%) is observed in Todabhimtehsil. The remaining maximum number of tehsils falls under moderate low category, i.e., growth 20 to30%.

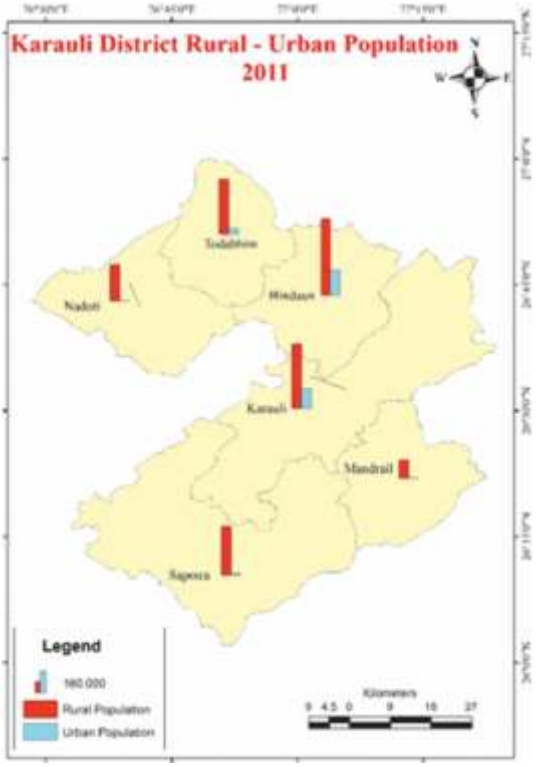

The total population of the district is 1458248 persons up to 2011, which is distributed with much spatial variation associated with such factors as availability of fertile, land, transport and marketing facilities and impacts of floods etc. Most of the people in the district reside in rural areas. The Census of 1961 recorded that 89.81% of the population was rural and 10.19% urban respectively. The Census of 1971, however, showed some shift towards urbanization when 11.90% of population was found to be urban and 88.10% rural.

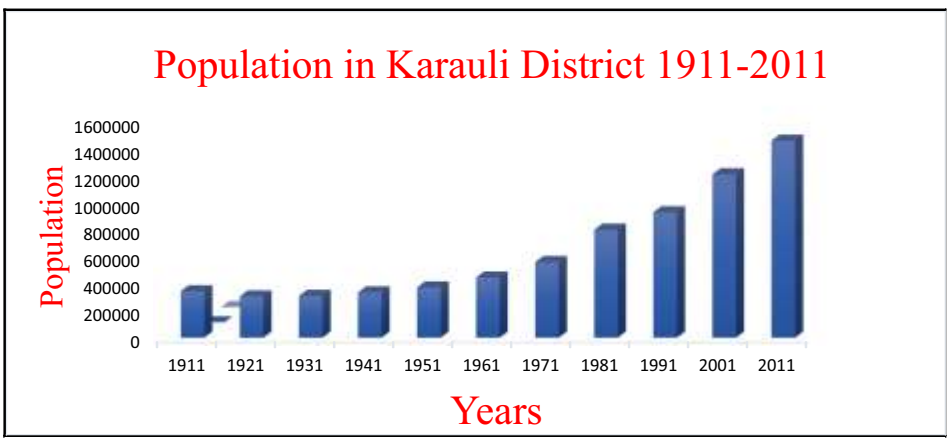

Table 2: Tehsil Wise Population Distribution in Karauli District-2011

Tehsil	Rural			Urban			Total		
	Male	Female	Total	Male	Female	Total	Male	Female	Total
Todabhim	122525	105676	228203	12079	10898	22977	134604	116576	251180
Nadauti	80479	70419	150898	-	-	-	80479	70419	150898
Hindaun	171569	146853	318422	55834	49618	105452	227403	196471	423874
Karauli	143984	122184	266168	43908	39052	80960	187892	161236	349128
Mandrail	40659	33941	74600	-	-	-	40659	33941	74600
Sapotara	108969	92883	201852	3633	3083	6716	112602	95966	208568

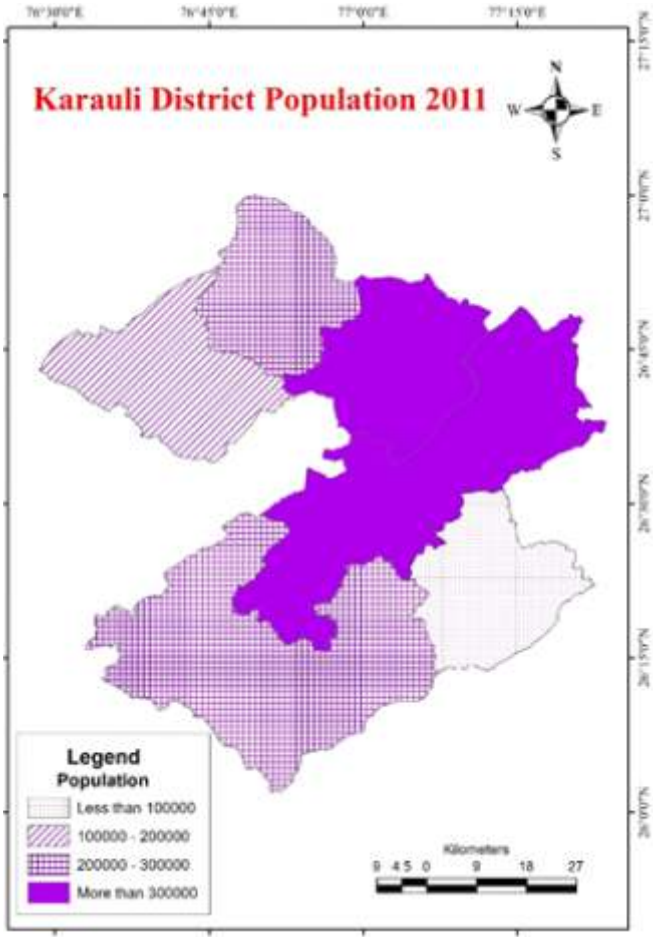

Out of the three tehsils of the district, namely, Nadauti, Sapotara and Mandrail were completely rural.Highest population (423874 persons) lived in Hindaun and lowest population (74600 persons) lived in Mandrail. Along roadside, the concentration of population is observed in the

form of patches. The patches of highest population are located along Hindaun-Karauli, Hindaun-Mahavirji, Karauli-Mahavirji roads where beneficial condition like fertile land and transport and marketing facilities etc. are available.

The North-West parts of Todabhim and Karaulitehsils, and southern and western parts of Sapotaratehsil have medium concentration of population, Low concentration of population in Mandrailtehsilis due to adverse and hilly area.

Summary

Since the existence of Karauli district, the growth of population has been slow towards urbanization. After analyzing the population, it isseen that even today there is a lack of basic amenities which do not reach the rural areas. There is an absolute lack of pure drinking water, paved roads for accessible transport, employment, urban lifestyle, etc., which needs to be developed through government schemes and the participation of local public representatives. Even today there is a complete lack of urbanization in some tehsils of the district, due to which the development of the district is blocked. Therefore, there is an urgent need for integrated development of rural population so that the district can be included in the front line.

References

1. *Clarke, John I. Population Geography. London: Pergamon Press, 1965.*
2. *Castro, J.D. (1973): The Geopolitical of Hunger, Monthly Review Press, New York and London.*
3. *Chamber's (1972): Twentieth Century, Dictionary, Allied Pub. Pvt. Ltd. New Delhi.*
4. *Chandna, R.C. (2000): A Geography of Population, Kalyani Pub. House, New Delhi.*
5. *Chaturvedi R. (ed) (1997): Food Security and Panchayati Raj. Con. Pub., New Delhi.*
6. *Chopra, R.N. (1988): Food Policy in India, Intellectual Publishing House, New Delhi.*
7. *Clarke, J.L (1965): Population Geography, Pergaman Press, Oxford.*
8. *Clarke, J.L, (1971): Population Geography and the Developing Countries, Pergamon Press, Oxford, New York.*
9. *Clay, E. J. & Longhurst, R. (1981): Food Security, Food Imports and Food Aid in East and Southern Africa. Institute of Development Studies, Sussex.*
10. *Cox, C.B. (2000): Bibliography, Black Well Publication, U.K.*
11. *Cox, H.E. (1962): The Chemical Analysis of Foods, J&A, Churchill Limited, London.*
12. *Cummings, Jr. R.N. (1967): Pricing Efficiency in the Indian Wheat Market, Impex, New Delhi.*
13. *Day, L.H. (1983): Analyzing Population Trends, St. Martin's Press, New York.*
14. *Dayal, R. (1968): India's New Food Strategy, Metropolitan Book Co. Pvt. Ltd. New Delhi.*
15. *Demko, G.J. et. al., (eds) (1970): Population Geography, A Reader, McGraw Hill, New York.*
16. *Dreze, J and Sen, - A. (1993): Hunger and Public Action, Oxford University Press, Paris.*
17. *Khan, Zuber & Yadav, Sandeep & Mangal, Nikita. (2021). Analytical study of Spatial Changes in Rural and UrbanPopulation Growth -A Case study of Hadouti Region. International Journal of Innovative Research in ScienceEngineering and Technology. 10. 7342-7349. 10.15680/IJIRSET.2021.1006243.*
18. *Khan, Zuber & Yadav, Sandeep & Mangal, Nikita. (2021). Hadouti Region -A Demographic Analysis.International Journal of Innovative Research in Science Engineering and Technology. 10. 11106.10.15680/IJIRSET.2021.1008044.*
19. *Khan, Zuber & Yadav, Sandeep. (2019). Spatial Pattern of Population Growth – A Case Study of Hadauti Region.7. H5-H11.*
20. *Khinduka Jain, Nidhi & Yadav, Sandeep &Jetwal, N. (2009). Disparities in the distribution of population amongurban centres of Kota division. 26. 163*
21. *Yadav, Sandeep&Jetwal, N.K& Khan, Zuber. (2016). Regularities and Irregularities in the Distribution ofPopulation Among Urban CentersinHadauti Region. 5. 86.*
22. *Yadav, Sandeep & Sahu, Sonu. (2022). Spatial Pattern of Population Dynamics of Ajmer District. International Journal of Innovative Research in Science Engineering and Technology. 11. 12701. 10.15680/IJIRSET.2022.1110029.*

Constitutional Safeguards for Senior Citizens: A Socio–legal Analysis

Dr. Om Prakash Gupta
Principal, St. Wilfred Law College, Ajmer

shodhshree@gmail.com

Abstract

Through this research paper, it has been mentioned that effective measures have been taken to protect the rights of senior citizens at national and international level. Also, in this research paper, the constitutional, legal and judicial protection assumed to senior citizens has been discussed and an attempt has been made to give some suggestions.

Keywords: *Senior Citizens, Effective Measures, Constitution, Laws.*

Senior citizens are a link connecting our society with past, present and future. They have lived their life by living in the society, they have seen the pace of progress and decline of the past in their whole life yesterday, as a result they are in a better position to evaluate the present and make predictions about the future. They are the older associates of the family who distinguish the best about religious conviction, domestic past, principles and related routine practices. They permit on these domestic standards and social information to the generations to come. It was a reflex structure of the Indian domestic arrangement for the distribution of past ethics and facts. The younger age group retained these values and knowledge and lived their lives in their own way and style. This is how our civilization progressed and is still walking on the same path.

But the situation today and the status of senior citizens is not the same as before, with the decline in cultural ethics and westernization of our Indian civilization, work–related requirements and professional existence, senior citizens are behind the respect and self–respect that they had earlier. At present our Information Technology sector is altering very fast and the new age group is very adaptable to the technology and they can get any info with a clack of the mouse. They can also get statistics about historical social standards, values and domestic arrangement, since material is readily accessible and reachable, which, previous, could only be accessed by an oldest associate of the family. I consider this to be one of the main reasons for the young people of the family ignoring the senior citizens in the family.

In the present–day Indian civilization, nuclear families are on the rise and this is due to the choice of family, where beginning couples elect to live their wedded life alone in the tag of modernity and sometimes in force where the earning associate of the household gets a home. In both the situations, ageing persons are bound to lead a solitary life, either with the spouse or alone. In the first situation, older persons are clearly neglected but in the second condition they are not, but the outcome of both the situations is the similar i.e., aloneness. However, in both the cases the mental state of senior citizens may be different.

Every so often both the circumstances may come under the type of unawareness from the point of view of the state as in both the cases older citizens are in abundance. It is also factual that some older persons in rural and urban zones are completely ignored, emotionally and bodily ill–treated people are not

getting two meals a day. Here comes the role of the state. Hubert Humphrey has rightly said about that:

"The ethical examination of government is how that government treats people who are early in life, i.e., children; those who are in the dusk of life, i.e., ageing; and those who are in the gumshoe of life, i.e., poor, ill and disabled."

Constitutional Provisions for The Protection of Senior Citizens

However, the Indian Constitution does not explicitly and specifically discussion about older persons and also does not include any direct establishment for ageing, but since it is exercisable to all residents, the provisions of the Constitution gone are all the rights and freedoms that senior citizens can also claim. An analysis of the provisions of the Indian Constitution is given under which senior citizens can be protected:

2.1 Article 21

Article 21 of the Indian Constitution keeps the life and individual liberty of the persons, but the judicial extension of the space of Article 21 has led to the right to enjoy a pollution–free and vigorous atmosphere, the right to well–being and health maintenance, the right to alternative health assistance, the right to living, and the right to social security. It has paved the way for inclusion of security, and rights because living with human self–respect and dignity of the individual is his respected advantage. The rights which have been included in Article 21 are from the Directive Principles of State Policy. For example, the right to housing and shelter imposed a duty on the state to make available homes to the deprived homeless.

2.2 Article 41

Article 41 of the Constitution states that, "the State shall, within the boundaries of its financial volume and development, make operative facility for make safe the right to work, to schooling and to civic support in case of joblessness, ageing, disease and incapacity, and unwanted other cases". Part IV of the Constitution, Article 41 of the Directive Principles of State Policy is mainly relevant to senior citizens social safety. However, it is not enforceable in a law court of and the State cannot be bound by the benches to implement any direction, but by order of Article 38 the State shall, while making any rule, follow the directions contained in Part IV. Hence, the directions though have to be applied by the state, they can do so lone issue to the boundaries obligatory by various provisions of the Constitution with respect to statutory and administrative influence.

2.3 Article 309

Article 309 of the Constitution provides that the performances of the suitable legislature may adjust the obligation and circumstances of package of individuals selected to public services in linking with the matters of the Union or any State. The respective Governments make rules and guidelines from time to time to prescribe the settings of service as well as retirement/terminal assistances to their workers.

This article obviously remarks that the employment process, selection and service settings rules of the Union and the States shall undergo a test of constitutionality, which means that the Union and the State Legislatures cannot make at all instruction which may not affect the fundamental rights of a person or against constitutional rights.

Therefore, if the situations of required retirement, the guidelines of voluntary retirement or any other service disorder affecting the rights of an elder may be challenged and terminated with the assistance of this article. The Apex Court has held that a required retirement order cannot be said to be valid if a compulsive retiree has not been given a reasonable opportunity of defence and the requirements of the rule of natural justice or Article 21 have not been fulfilled.

In the Indian Constitution, Entry 24 in List III of Schedule VII deals with labour welfare, counting

situations of work, provident fund, accountability for workers' compensation, invalidity and senior citizens pension and maternity assistances. Therefore, both the Union and the State may frame different pension rules and schemes to deliver social safety and well–being to the ageing. The Constitution also authorizes the states under Entry 42 to make laws, make rules and make separate schemes for the ageing. Item 9 of the State List and Items 20, 23 and 24 of the Concurrent List deal with senior citizens pension, social safety and social cover, and financial and social development. The norms laid down in the Preamble and the concepts of the welfare state are the supervisory values. The State has to indorse prosperity and well–being of the people. In order to safeguard and preserve an effective social order through social justice, economic justice and political justice, the State shall endeavor to reduce inequalities in income, try to eliminate inequalities in status and also provide amenities and breaks.

To secure these purposes in over–all, and to direct public help in the case of ageing... As prescribed under Article 41, the State has so far covered through its legislations i.e., the Employees' Provident Fund Act, 1952 and the Employees' State Insurance Act, 1948.

Conclusion

However numerous laws and government strategies have been made for the safeguards of ageing, zero has been accomplished so far. Subsequently Indian society has continuously been duty concerned with and the ethos of India has been such that ageing do not want to slog their offspring to court. There is a need for awareness among ageing for appropriate implementation of the law and initiatives should also be taken by the government with the help of charitable sector and society to protect the rights of senior citizens as well. Older citizens cells should be set up by the police in each police station. Apart from this, there should be an ageing help–desk in which the ageing can register their problems for operative redressal. Not only this, training should be given to the police staffs so that they can be sensitized to the requirements of awareness programmes run by the administration with the help of NGOs.

References

1. *Subhash Kumar v. State of Bihar AIR 1991 SC 420; Andhra Pollution Control Board v. M.V. Naidu AIR 1999 SC 812.*
2. *State of Punjab v. Mohinder Singh Chawla AIR 1997 SC 1225.*
3. *Parmanand Katara v. Union of India AIR 1989 SC 2039.*
4. *Indian Drugs and Pharmaceuticals Ltd. v. Workman, Indian Drugs and Pharmaceuticals Ltd. [2007] 1 SCC 408; Olga Tellies v. Bombay Municipal Corporation AIR 1986 SC 180.*
5. *S.R. Kapoor v. Union of India AIR 1990 SC 752; Delhi Transport Corporation v. D.T.C. Mazdoor Congress AIR 1991 SC 101.*
6. *Sukhwant Singh v. State of Punjab [2009] 7 SCC 559.*
7. *Gourishankar v. Union of India AIR 1995 SC 55.*
8. *Chameli Singh v. State of Uttar Pradesh AIR 1996 SC 1051.*
9. *In Re Kerala–Education Bill, 1957 AIR 1958 SC 956.*
10. *State of Madras v. Champakam AIR 1951 SC 226.*
11. *Union of India v. Reddy AIR 1990 SC 563*

Democracy in India

Dr. Arvind Kumar Gaur
Assistant Professor, Ch. Motaram Meel Memorial (P.G.) College, Sri Ganganagar

shodhshree@gmail.com

Abstract

The word 'democracy' has its origins in the Greek language. It combines two shorter words: 'demos' meaning whole citizen living within a particular city-state and 'kratos' meaning power or rule. It is generally agreed that liberal democracies are based on four main principles. (1) A belief in the individual: since the individual is believed to be both moral and rational; (2) A belief in reason and progress: based on the belief that growth and development is the natural condition of mankind and politics the art of compromise; (3) A belief in a society that is consensual: based on a desire for order and co-operation not disorder and conflict; (4) A belief in shared power: based on a suspicion of concentrated power (whether by individuals, groups or governments).

Keywords: *Democracy, India, Evolve, Iaw, Antiquity, Human.*

In the remote past humans lived as food gatherers. About ten thousand years ago, they became food producers by inventing agriculture. The change from a life of food gatherers to one of food producers by agriculture was a major advance in the history of human species. Food gathering is not a very efficient means of living. The availability of food is unpredictable and requires a large area to procure the needed food. Under such circumstances only a highly nomadic life is possible and would support only a small number of individuals living together.

Since agriculture requires constant attention and labour confined to a piece of land, individuals had to give up nomadic way of life and live in one place for a prolonged period. Agriculture is more efficient and reliable as a source of food compared to food gathering. Therefore, agriculture was able to support a larger number of individuals in a group. Some of the individuals, so supported, developed specialised skills further contributing to the efficiency and development of the group.

Realisation of the benefits of the group living along with that of specialisation changed tribal living, to living in communities. The communities with time progressively evolved to the development of villages, small states and to the present-day nations. Living in ever increasing large communities with greater degrees of specialisation resulted in increasing interdependence. Individuals in a community were no longer able to do whatever they wished.

Codes of conduct had to be developed for the harmonious functioning of the community. The codes of conduct so developed became the laws of the community to be observed by one and all. A need arose for enforcing the laws and to change, modify and formulate new laws for the smooth functioning of the community. Some members of the community were entrusted with the responsibility of formulating and enforcing the laws. Eventually those entrusted with the responsibility of formulating and enforcing the laws became the governing class and the remainder the governed class. Thus governments came into existence.

Humanity has experimented with government by oligarchy (government by a few), monarchy (government by hereditary kingship), dictatorship (absolute power enjoyed by an individual), and theocracy (government by priests or religious authorities). The success or failure of these systems of government depended on whether the governance was based on the rule of law or rule by law.

In the beginning when the communities were small and self-sustaining, the governed and the governing class lived in close physical proximity and shared common interests. Because of the close physical proximity and shared common interests, the numerically small governing class was constrained to act in accordance with the wishes of the numerically larger governed populace. The rule of law prevailed.

The rule of law means that no one including the ruling authority (king, emperor, the officials etc.) is above the law. In other words law is supreme and sovereign and everyone is bound by law and no one is free to act or do whatever they want. Under the rule of law no one enjoys privileges over others and all are equal.

However with the passage of time as the communities' size increased, the governments became larger in their size and scope. The distance between the governed and the governing class increased both literally and figuratively. Consequently the governing class was less restrained and became less responsive to the needs of the governed.

In addition, the natural inborn human tendency of seeking privileges for oneself, one's family and friends asserted itself. With all the advantages of the state at their disposal it was too tempting for the governing class not to avail of the privileges. They forgot that the rulers are for the benefit of the ruled. They replaced rule of law by rule by law for their own advantage.

Tyrants, dictators, totalitarian states followed rule by law and they are on the decline. They for the most part were replaced by democracies which are based on rule of law. The case for democracy has been greatly augmented by the demise in the 20th century of prominent non-democracies, such as the Japanese Empire, Nazi Germany, Fascist Italy, The Union of Soviet Socialist Republics (USSR), and communist dictatorships in central and eastern Europe. The acceptance of democracy by countries of diverse histories and cultures such as Argentina, Germany, India, Italy, Japan, Mexico, the Philippines, Poland, Portugal, South Africa, and Sweden indicates a pervasive desire for rule of law.

Although democracy has gained ascendency in modern times, the principles of rule of law was extolled by our sages since antiquity. Some examples include:

"Let there be for the benefit of the rulers and the ruled three Assemblies—1. Religious, 2. Legislative, 3. Educational. Let each discuss and decide subjects that concern it, and adorn all men with knowledge, culture, righteousness, independence, and wealth and thereby make them happy.

This is a reference to division of power. If this is not followed, "He would impoverish the people and oppress them… A despotic ruler does not let anyone else grow in power, robs the rich, usurps their property by unjust punishment, and accomplishes his selfish end. One man should, therefore, never be given despotic power. This is a warning against concentration of power and the evils of rule by law.

As mentioned in Light of Truth by Swami Dayananda Saraswati - "The law alone is the real king…The law alone is the true Governor that maintains order among the people. The law alone is their protector. The law alone is their protector. The law keeps awake while the people are asleep. When rightly administered, the law makes all men happy... The law rightly administered by the king greatly promotes the practice of virtue, acquisition of wealth and secures the attainment of heart-felt desires of his people…Great is the power and majesty of law… He alone is fit to administer the law - which is

another name for justice-who is wise, pure in heart, of truthful character, associates with the good, conducts himself according to the law and is assisted by the truly good and great men in the discharge of his duties.

'Neither a father, nor a teacher nor a friend, nor a mother, nor a wife, nor a son, nor a domestic priest must be left unpunished by the king, if they do not keep within their duty'.

India developed a society where rule of law was given paramount importance. Even the king or an emperor was bound by law and was not free simply to do what he wanted. Thus the rule of law in Indian tradition did not spring from political authority; it came from a source independent of and superior to political rulers.

Dharma shastras made it clear that the king exists for the welfare of the people and not the other way around. In other words, the ruler was not sovereign but the law was. Considering the long tradition of democratic spirit of the land it is no accident that India chose a democratic form of government when it gained independence from foreign subjugation. What values we cherish and put into practice is more important than the labels we put on ourselves.

Instances are not lacking in history where under the guise of democracy some rulers have or attempted to sabotage rule of law and replace it by rule by law to further their self-interests. Even well-established democracies are vulnerable. So, we cannot become complacent with a label and should be on our guard and ensure that the spirit of rule of law prevails.

References

1. *Bhavan's Journal, Bharatiya Vidya Bhavan, Mumbai, 31 March 2021*
2. *Rig Veda III 38.6*
3. *Shatapatha Brahmana XII.2,3,7,8*
4. *Manu Dharma shastra VII 17.19,24,28, 30, 31*
5. *Manu VIII:335*

Impact of "Make In India" Programme

Dr. Durgesh Kachhawaha
Assistant Professor, Onkarmal Somani College of Commerce, Jodhpur

shodhshree@gmail.com

Abstract

Employment is the key of a society and country. The increase in the rate of employment, increases the income in that respect. Prime Minister Narendra Modi on 25th September 2014 announced a "Three D" (Democracy, Demography and Demand) programme from "Vigyan Bhawan" New Delhi for "Make in India" or Niraman Yogna in Bharat". This is the first programme of its type that in which in the area of infrastructure the G.D.P. will increase 12.14% every year. In the rural and urban area upto the year 2022, ten crore new employment will be created and in the construction of infrastructure, technological development, with companion in the global market with environment in India will mark and made India on top of the list in the world. The motive of this programme is the attract to world market and companies to invest in India to that India could be established on the map of the world also to create new employment and business and gave a momentum to Indian economy. With the "Make In India" programme new government is trying to motivate the infrastructure to that employment will be created. The limit of FDI is increased by the Government and in-addition a separate Ministry is created for "Skill Development". These are positive signs.

Keyword : *Investment Infrastructure, Manufacture, Employment, Development.*

The Father of nation Mahatma Gandhi said that un-employment is a social evil and told "For a healthy society the centralisation of money among some few and un-employment in laks is a great disease or social evil". Unemployment is a serious social and economical problem due to which the development of the country can be eclipsed.

The government is trying to fight with the problem of un-employment and takes serious measures and started general and specific programmes to eradicate and unemployment and to give relief from this devil.

Employment is the master key of the economic development of a country and society. As the growth in rate of employment increase, the economic growth also increase, the economic growth also increases simultaneously and in the same speed the country moves on the path of development.

Prime Minister Narendra Modi started 'Make in India' or "Bharat Nirwan Yogna" on 25th September 2014 at Vigyan Bhawan, New Delhi. He gave "3D" Mantra (Democracy, Demography and Demand). He told that we are thinking of marching about next generation infrastructure. As we need High ways in the same we need "Eye ways"

Under the industrial policy the object of this programme is to promote the foreign investors and companies to invest in India through which India can be established on the world map and "Infrastructure hub" can be created, and new opportunities of employment, trade and economic growth

can get momentum.

"Make in India" programme is necessary for the development of Future of India and to establish it in the competitive market. Our Infrastructure policy is vast. This is the first of its kind and through which regular increase of 12.14 percent will be in GDP gross domestic production and upto the year 2022 an increase between 16% to 25% is possible in growth.

In the urban and rural area poor people upto year 2022, with the efficiency development 10 crore new employment opportunities, increase in technical development and competiveness in Indian construction field especially in the field of environment will give opportunities. It is important to note that "Make in India programme represents a big change in the Indian system with investors."

Why Investment in India?

All the three, components — Democracy, Demography and Demand are necessary for good investment. All these three are available in India under one roof, which you cannot get anywhere in the world.

- Democracy in India is not only stable but also powerful.
- 65 percent population in India is of the youth aged 35 years. In the field of production, low paid trained labour is only available in India to the production value comes lower and efficiency increase to required necessary man power is available in India.
- India is a country where demand is maximum. Due to larger portion of middle class people, the demand of different articles and material is much more. India is a country of 1.25 million people to investment in this country will benefit in the field of business as well as in the field of production also.

Review of Literature

India has already market its presence as one of the fast growing economics of the world. It has been ranked among the 3 attractive destinations for inbound investments. Since 1991, the regulatory environment in terms of foreign investment has been eased to make it investor friendly. the recent policy measures include :

- 100% FDI allowed in the telecom sector, single brand retail.
- FDI in commodity and stock exchanges, and depositories, power, exchanges, petroleum refining by PSU's, courier services under the government route has been brought under automatic route.
- Removal of restrictions in tea plantation sector.
- FDI raised to 74% in credit information and 100% in asset reconstruction companies.
- FDI of 26% in defence sector has been raised to 49% under government approval route.
- Railway sector specified activities like construction, operation and maintenance are opened to 100% FDI under automatic route.

The rate of increase in employment in last so many years remains on the slower path. The statistics of the (RNSO) Rashtriya Namuna Sarveshan 'Organisation give the facts in economic Survey that in the eyes of users, the total labour Power in India was 39.8 crore which raises 45.8 crore in the year 2004-2005 and reached 43.3 crore upto 2011-12. In this way that in the duration of Seven Years, the average increase in labour Power is recorded 3.3 percent only. During this Seven years period in the field of Agriculture and its allied areas there is a decrease of 3.6 crores but in other areas labour power remains 5.13 crores. In the service Sector 2.0 crore increase was depicted. In the industrial area the increase in employment was recorded maximum 2.5 crore whereas in construction and infrastructure sector it increases to 60 lakh. Between 2004-2005 to 201112 in seven years,

the employment growth (2.0 crore) in different Subareas it was approximately divided. In this period in the business area of Hotel & Restaurant and its sub areas 47 lakh, Transport, storage and communication 54 lakh, In financing sector 53 lakh and in communities and social service sector, an increase of 53 lakh was recorded.

Unemployment Rates of Different Social Groups in India 2013-14 (%)

	Rural			Urban			All India Level (Average)		
	Man	**Woman**	**Total**	**Man**	Woman	Total	Man	Woman	Total
Scheduled Caste	3.9	5.7	4.4	4.5	10.7	5.8	4.0	6.6	4.6
Scheduled Tribes	4.0	5.1	4.3	4.4	9.5	5.5	4.0	5.5	4.5
Other Back Word Caste	4.1	6.4	4.7	3.8	11.5	5.3	4.0	7.6	4.8
General Caste	4.5	8.3	5.2	3.8	14.5	5.6	4.2	10.5	5.3
All India Averag	4.2	6.4	4.7	3.9	12.4	5.5	4.1	7.7	4.9

Sources : Partiyogita Darpan

In 2007-2012 Yojna Ayog accepted in their 11th Fifth year plan, that productive part the labour power means the numbers of youth statistics are really very disturbing. The maximum un-employment is amongst youth. 8.5 crore youth is living under poverty line which is maximum in the world. Unemployment rate is 8 percent which is really disturbing and the fact is this that the rate of un-employment in educated youth is maximum in compression to the uneducated. Today 35.5 percent educated graduates are un-employed.

Central Areas of "Make in India Programme"

- Leather, cloth, Footwear, Jerns, Ornaments industries for the development of business.
- Capital goods industries like machines, Tools, Heavy Electrical appliances, Heavy Transport, and mining appliances.
- Diplomatic industry for example Air space, marine ship industry, I.T. Hardware and Electronics and communication appliances.
- Small Scale Industries.
- Public Sector enterprises.

Make in India - Measurements

Under the make in India programme to promote investment, to give protection and to produce best and better goods, so many programmes are formulated. For defence products most components are freed from the industrial license. Military and non-military useful articles are Leninist now. Circular is sent to all the departments and the states to make investment atmosphere comfortable and logical and all the entries should be "On Line" There will be only one electronic register for different works and without the permission of the head of the department, no inspection will be done. For all types of business a self certification number system will be used. New basic plans like construction of Smart policy and in industrial galleries, the making of smart groups has been spotted. National Industrial gallery Development Trust is established to that development, co-ordination, inspection are done easily and correctly. With the simplification of investment standards and controls, the high value Industrial areas like Defence, Railways and Infrastructure area are opened for Public-Private partnership. The policies are simplified in the field of defence and the F.D.I. (investment limit) is increased from 26 to 49 percent in this field. In the field of Defence Portfolio investment is permitted upto 24 percent. On the working in

Defence area, for new technology 100 percent F.D.I. is permitted. The standards of FDI are going to be move simplified in the field of infrastructure.

Nearly 5000 hectare (50 square kilometre area) and 30% minimum development areas National investments and infrastructure area programmes are planned which will attract world class building work which have green industrial area. The central government will bear the expenses of its master plans and also will provide the physical communication like railways, roads, Air ports and ports and other requirements for the development. Progressive suggestions are submitted to construction units. If an company is declared sick then under the NIMI, the total assets will be transferred. For pollution control appliances production 10 percent capital subsidy and 5 percent interest recovery will be paid back. 25% grant will be given to SME auditing which will be upto 1 lakh maximum. For pollution control appliances pollution control energy and water conservation will be promoted. In the selling of Domestic assets and in the re-investment, long term capital gain tax will be provided. Efficiently training and industrial training programmes will be arranged and on P.P.P. mode establishment of ITI's will be made to that training can be given. Polytechniques will be established for special efficiency. An organisation will be established in NIMZ to give training to training masters.

Friendly Atmosphere and Main Reason for Attractive Investment Destination

- India is the second largest populated country. It has a very young population with over 62% in the age group ranging from 15 to 59 years.
- Over the past two decades India has emerged as one of the fastest growing economies in the world.
- Demographic dividend : large consumer market; emerging knowledge hub.
- Greater liberalization : strengthing domestic and exports sector.
- By 2025, India will be fifth largest consumer market.
- Per capita consumption of all major items is much below the world average thus providing ample opportunities for growth.
- High Return on Equity (ROE)/ Return on capital Employed (ROCE) for investment in India.

POWER OF MAKE IN INDIA MONOGRAM

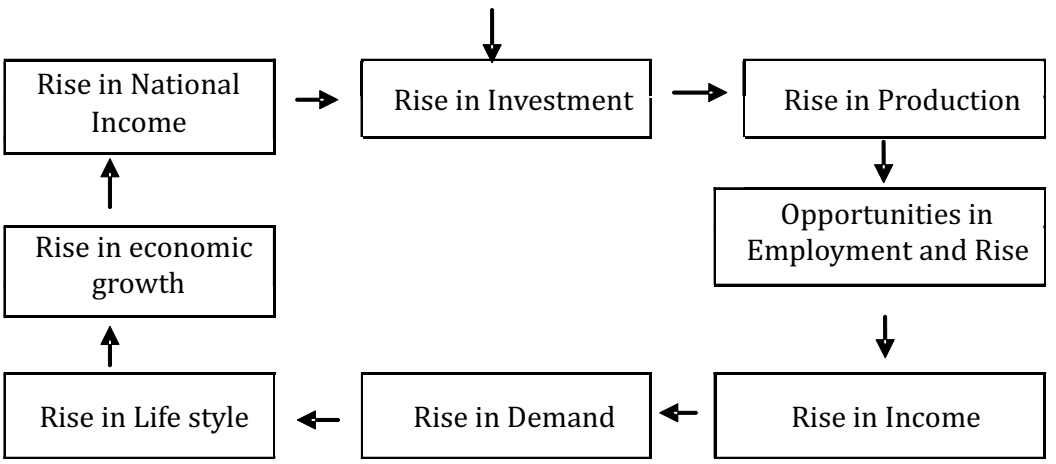

Conclusion

"Make in India" programme is necessary for the development of future growth of India and establish it in the competitive market. Our Infrastructure policy is vast. This is the first of its kind and through which regular increase of approx 12.14% will be in (G.D.P.) gross domestic production and upto the year 2022 an increase between 16% to 25% is possible in growth "Make in India programme represents a big change in me. Indian system wish investors".

This programme is to promote the foreign investors and companies to invest in India through which India Can be established its distinct position on the world map and "Infrastructure hub" can be created, and new opportunities of employment, Trade and economic growth can get momentum.

The Government of India is trying to "Make in India" Programme, a great success due to which the employment rate will' increase and the government has focused in the area of defence and insurance sector which will be very good for the future of India.

References

1. *Website of (D.I.P.P.)*
2. *International Chronology November - 2021.*
3. *Kurukshetra February 2018.*
4. *Competition Merrier August and September 2018.*
5. *Competition Merrier December 2019.*
6. *Make in India.com Website.*
7. *World Bank Report - 2020.*
8. *U.N.D.P. Report - 2021.*
9. *Economic Times.*

A Critical Assessment on Camel: A Case Study of Nagaur District

Dr. Om Prakash
Project Director, ICSSR Funded Minor Research Project
Jai Narain Vyas University, Jodhpur

shodhshree@gmail.com

Abstract

The Western part of Rajasthan holds 62 percent of hot arid land share of India. Due to the availability of these dry areas in Rajasthan they are supporting around 137 livestock per square meter. Regarding climatic conditions of western Rajasthan, these arid and semi-arid regions are characterized by little and unpredictable rainfall. Also, there have been very low levels of economic activity recorded.. Livestock is the major source of employment for the rural poor in Rajasthan. Rajasthan holds 83.3% camel, 75% sheep, 54.4% goats, 41.3% cattle and 31.1% buffalo livestock. Inspite of being a major occupation of rural poor livestock is facing many challenges in this region and hence livestock production in these areas is characterized by low output, low fertility, and scarcity of food and also very low acceptance of advanced methodology by the farmers. Camels are lifeline of the dry land ecosystem and considered as fairly constant resource for income generation among rural population of the Rajasthan, The camel is an important species uniquely adapted to hot and arid environments and, therefore, contributes significantly to the food security of the farmers and nomadic pastoral households. This unique adaptability makes this species ideal for exploitation under the arid and semi arid land conditions. According to various livestock census the camel population of Rajasthan, and of India as a whole, is experiencing a steep decline.

Keywords: *Livestock, Rural Livelihood, Camel Population, Growth.*

The Western part of Rajasthan holds 62 percent of hot arid land share of India. Due to the availability of these dry areas in Rajasthan they are supporting around 137 livestock per square meter. Regarding climatic conditions of western Rajasthan, these arid and semi-arid regions are characterized by little and unpredictable rainfall. Also, there have been very low levels of economic activity recorded. In western Rajasthan, there exists a high frequency of land degradation as well as a greater concentration of rural poor. These rural poor of western Rajasthan do agriculture production and livestock rearing as an age-old tradition. There are many ways in which these two can help them viz. in minimizing risks, deliver flexibility, diversified living, and protection against calamities. Occupations of crop and livestock production are corresponding to each other in reducing risks and improvingviability in the region. Livestock is the major source of employment for the rural poor in Rajasthan. Rajasthan holds 83.3% camel, 75% sheep, 54.4% goats, 41.3% cattle and 31.1% buffalo livestock. Inspite of being a major occupation of rural poor livestock is facing many challenges in this region and hence livestock production in these areas is characterized by low output, low fertility, and scarcity of food and also very low acceptance of advanced methodology by the farmers.

Camels are lifeline of the dry land ecosystem and considered as fairly constant resource for income generation among rural population of the Rajsthan , The camel is an important species uniquely adapted

to hot and arid environments and, therefore, contributes significantly to the food security of the farmers and nomadic pastoral households. This unique adaptability makes this species ideal for exploitation under the arid and semi arid land conditions. According to various livestock census the camel population of Rajasthan, and of India as a whole, is experiencing a steep decline

Over the last 60 year (1951-2012), camel population has shown mixed trends of negative and positive (table1). The population of camel increased from 3.41 Lac to 7.56 Lac between 1951-1977, whereas, it decreased from 7.56 lac to 3.26 lac till 2012 in other words In 1951 the camel population of Rajasthan was 3.41 Lac. Numbers rose up to 1972, with a growth rate ranging from 1.2 to 5.9%. Almost static trend was marked till 1987, followed by a marginal decline 0.3 to 0.6% till 1992. The livestock census of the State observed a decline of 8.5% when compared to the 1992 census. According to latest sources (2012) there appears to be further decline of 22.75%. In 1951 percentage of camel in total livestock was 1.34% and now it is only 0.56%. The critical analysis of camel population scenario clearly reflects that up to 1980 there were many reasons for camel population rise e.g. sufficient rangelands, socio economic need, transport, drinking water scarcity, social structure, gram udhyog, handi-craft, etc were responsible in most districts with a large number of camels

Table 1: Population trends of camel in Rajasthan

Year	TOTAL in lac	Growth rate	% of Total Livestock
1951	3.41		1.34%
1956	4.36	27.86	1.34%
1961	5.7	30.73	1.70%
1966	6.54	14.74	1.74%
1972	7.45	13.91	1.92%
1977	7.52	0.94	1.82%
1983	7.56	0.53	1.52%
1988	7.19	-4.89	1.76%
1992	7.46	3.76	1.53%
1997	6.69	-10.32	1.22%
2002	4.98	-25.56	1.01%
2007	4.22	-15.26	0.75%
2012	3.26	-22.75	0.56%

Source: livestock census report Rajasthan, Board of revenue Ajmer

Graph 1: population of camel in Rajasthan 1961-2012

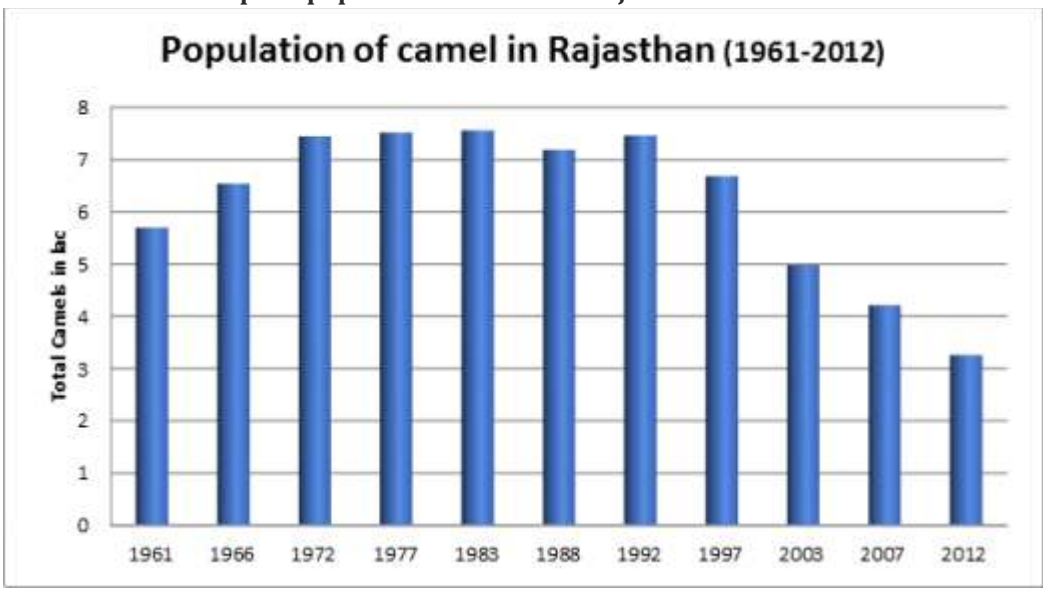

Study Area

Keeping in mind the criticality of Camel wealth in the western Rajasthan regions, the author attempted to study on livestock population with lowest growth rate/negative trends in selected thesils of Jodhpur, Barmer and Nagaur districts of Rajasthan. Livestock farming represents an integral component of socio-economic status of the rural masses in Rajasthan.

The study was employed in a group of selected two tehsils of Nagaur district, which is also famous for holding the second largest cattle fair in India.

Nagaur: Geographically located in the middle of Jodhpur and Bikaner. Major towns of Nagaur district are Merta, Degana, Ladnun, Deedwana, Makarana, Parbatsar and Kuchaman. The total geographical area of the Nagaur district is 17,718 km, out of which 17,448.5 kms is rural and only 269.5 kms is urban.

Regarding Tehsils, Nagaur comprises of 13 major tehsils which are sub-divisions also namely Nagaur, Kheenvsar, Jayal, Merta City, Degana, Didwana, Ladnun, Parbatsar, Makrana, Kuchaman City, Nawa, Mundwa (according to census 2012 number of tehsil were 10). Further more, Nagaur has 11 blocks and 1607 villages.

Distribution of Livestock Population

According tolivestockcensus 2012, the totalpopulation of livestockis 3150011 in Nagaur district. This population when observed for individual tehsils, it was found out that the highest number of livestock is reported in Nagaur tehsil i.e. (4,71,547) this was further followed by Nawa (4,16,100), deedwana (3,66,258), Merta (3,41,199), Degana (3,14,211), Jayal (2,74,289), Khinvsar (2,65,348), Parbatsar (2,57,830), Ladnu (2,37,079), and the least distribution of livestock population was witnessed in Makrana i.e. (2,06,150).

Table 2: Livestock census District Nagaur 2012

Livestock Census District Nagaur 2012									
Tehsil	Cattle	Buffaloes	Sheep	Goat	Horses & Ponies	Donkey	Camel	Others	Total Livestock
DEGANA	52690	68115	57944	133492	380	167	852	571	314211
DEEDWANA	53434	70584	44606	195775	195	147	1002	515	366258
JAYAL	44677	57056	44025	126410	306	168	1259	388	274289
KHINVSAR	49166	25540	45137	144043	46	64	1352	0	265348
LADNU	33181	31261	32425	138550	212	208	1081	161	237079
MAKRANA	30646	41119	26729	105904	94	229	402	1027	206150
MERTA	70439	77775	78510	112600	325	121	479	950	341199
NAGAUR	79343	81214	79113	229543	237	275	1802	20	471547
NAWA	57087	65664	121380	168031	129	246	1304	2259	416100
PARBATSAR	30927	38270	54972	130703	162	146	1045	1605	257830
District Total	501590	556598	584841	1485051	2086	1771	10578	7496	3150011

Source: census report of livestock 2012, Board of revenue ajmer

Also when displayed in percentage, from Table 3, the maximum percent of livestock population is observed in Nagaur i.e. (15%) evidently followed by Nawa (13.2%), Deedwana (11.6%), Merta (10.8%), Degana (10%), Jayal (8.7%), Khinvsar (8.4%), Parbatsar (8.2%), Ladnu (7.5%) and Makrana recorded least percent of livestock population in Nagaur district.

Table 3: Tehsil Wise Livestock population Distribution in Nagaur District (1997-2011)

Tehsils	Livestock Distribution in Nagaur District (in %)	
	1961	2012
Nagaur	13.66	14.96
Jayal	8.49	8.70
Merta	11.90	10.83
Degana	14.83	9.97
Parbatsar	19.35	8.18
Nawa	12.03	13.20
Deedwana	11.67	11.62
Ladnu	8.03	7.52
Makrana	NA	6.54
Kheenvsar	NA	8.42
Total District	100	100

Source: live stock census report board of revenue Ajmer (1961-2012)

Livestock Composition

The livestock composition needs to be studied in detail, being an important aspect so as to make an estimate of the requirement of feed stuff and also for the grazing pattern of the livestock in Nagaur. According to 2012 livestock survey of Nagaur district it is noted that population of Goats is recorded highest here i.e. 47%, followed by sheep population (19%), Buffalo (18%), Cow (2%), camels are (.34%) etc. As shown in table 3.

Table 3: Tehsil Wise Livestock population Distribution in Nagaur District (1997-2011)

Year	Cattle	% of Total LS	Buffaloes	% of Total LS	Sheep	% of Total LS	Goat	% of Total LS	Horses & Ponies	% of Total LS	Donkey	% of Total LS	Camel	% of Total LS	Others	% of Total LS	Total Livestock
1961	81276	6	110765	8	397614	29	275666	20	1185	0.09	4952	0.36	27015	1.95	766	0.06	1388328
1966	86119	5	126319	7	590013	33	444697	25	1076	0.06	3998	0.22	36366	2.01	975	0.05	1813418
1972	79691	3	136513	6	802061	35	737196	32	797	0.03	3532	0.15	44748	1.94	1420	0.06	2304209
1977	89194	4	168861	7	846894	36	724520	31	1096	0.05	4083	0.17	40622	1.71	1790	0.08	2371741
1983	90284	3	208184	7	1226237	40	976187	32	705	0.02	3210	0.11	39961	1.31	3246	0.11	3055875
1988	59416	2	216579	9	911368	38	800937	33	1012	0.04	4061	0.17	32409	1.33	4748	0.20	2429528
1992	62897	2	296692	11	1067409	38	187528	7	824	0.03	5896	0.21	36391	1.30	10102	0.36	2793881
1997	53006	2	440507	14	1174957	36	1096861	34	1001	0.03	5478	0.17	29191	0.90	8460	0.26	3245153
2003	44678	1	784273	26	744857	25	1083177	36	1200	0.04	4112	0.14	17058	0.57	10629	0.35	3008509
2007	53479	2	444219	15	788394	26	1345498	45	1123	0.04	2054	0.07	13854	0.46	2019	0.07	2992684
2012	70439	2	556598	18	584841	19	1485051	47	2086	0.07	1771	0.06	10578	0.34	7496	0.24	3150011

*Source: live stock census reports board of revenue Ajmer (1961-2012) *% of LS = % of total livestock*

From the table-4 given above, we can see that population of Camels also known as the Sheep of the desert is witnessing a huge decline from 1961 to 2012. Nagaur district has recorded a massive decrease in the growth and rearing of camels. This is an important point to address and hence taken as a focal point of our case study. This decline of the camel population and its reasons and effects will be discussed in detail in the further section of this case study.

As already stated and also evident from the above table that Nagaur tehsil in Nagaur district has displayed the highest livestock population with Khinvsar holding the second place in livestock population distribution.

The Density of Livestock Population

From Table and figure given below, it is quite evident that the highest density of livestock population in Nagaur district is recorded as 178 livestock persqaure kilometerin 2012 in the district. Further, The tehsil wise density of livestock population is observed in Nawa273 livestock/sqkm followed by Parbatsar (233 livestock/sqkm), Deedwana (222 livestock/sqkm), Kheenvsar (185 livestock/sqkm), Degana (165 livestock/sqkm), Makrana (161 livestock/sqkm), Nagaur (154 livestock/sqkm), Ladnu (153 livestock/sqkm), Merta (149 livestock/sqkm), and least density of livestock population is recorded in Jayal i.e. 132 livestock/sqkm

Table 5 :- Density of Livestock Population in Nagaur District (1961-2012)

Tehsils	Livestock Density (1961)	Livestock Density (1997)	Livestock Density (2012)
Nagaur	40	156	154
Jayal	57	136	132
Merta	72	173	149
Degana	108	213	165
Parbatsar	121	252	233

Nawa	110	242	273
Deedwana	98	197	222
Ladnu	89	192	189
Makrana	NA	166	161
Kheenvsar	NA	176	185
District	78	183	178

Source: District Statistical Handbook, Nagaur (1961-2011)

Also from the abovetable, it is clear that except Khinvsar, Nawa and Didwana tehsils, rest all the tehsils are witnessing a decline in the livestock density. However, these tehsils recorded a rise in livestock density from 1997 to 2012.

The density of Livestock Population in Nagaur District (1997-2011)

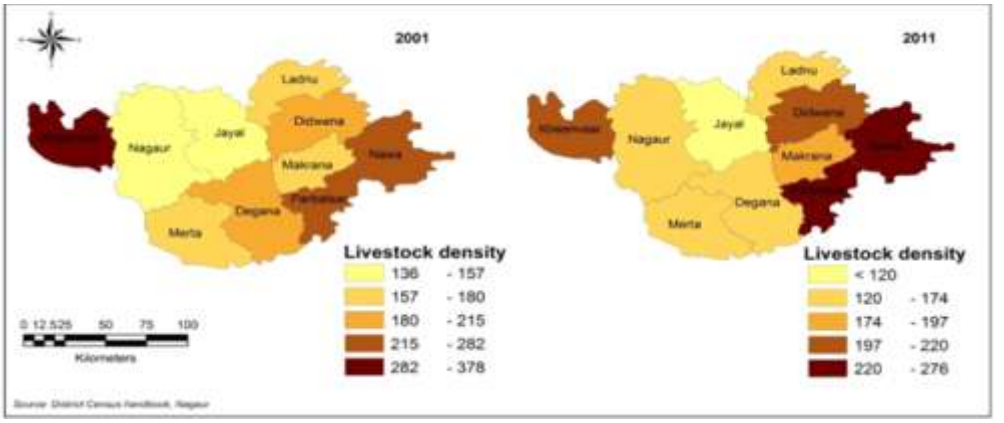

MAP-: Density of Livestock Population in Nagaur District (1997-2012)

Changes and fluctuations in Livestock Population show that there has been negative growth in the population of Cow in Nagaur district. However, the Buffalo population has been observed as following an increasing trend. Also, Sheep and Goat population is increasing from the year 1961-2012. However, the growth of camel is also on a decreasing trend. The increase or decrease in the population of livestock in Nagaur District is directly related with the climatic conditions of the area like the distribution of the amount of rainfall and water availability in the study area.

Assessment of Camel population in study area

Table 6 : Concentration of Camels (Camel Density of Nagaur District 1961-2012)

Tehsil/Year	1961	1966	1972	1977	1983	1988	1992	1997	2003	2007	2012
deedwana	2.82	3.46	3.90	3.48	3.35	2.17	1.93	1.51	1.11	0.80	0.61
Degana	1.50	1.90	2.39	2.32	2.31	2.37	2.42	1.69	0.78	0.73	0.45
Jayal	1.45	2.13	2.49	2.44	3.02	1.95	2.23	1.67	1.11	0.73	0.60
Ladnu	3.44	4.19	4.35	4.11	2.82	2.35	2.25	1.97	1.39	1.02	0.86
Merta	0.16	0.35	0.38	0.46	0.66	0.58	1.01	0.63	0.36	0.35	0.21
Nagaur	0.95	1.43	2.09	2.01	1.75	1.38	2.16	1.26	0.92	0.75	0.59
Nawa	1.99	2.29	3.07	2.91	3.33	3.17	3.03	3.78	1.57	1.61	0.86

Parbatsar	1.92	2.84	3.46	2.37	2.31	1.97	1.80	2.10	0.74	0.82	0.94
Khinvsar	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	1.80	1.26	0.74	0.82
Makrana	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	1.08	0.67	0.62	0.36
District Total	1.52	2.05	2.53	2.29	2.26	1.83	2.05	1.65	0.96	0.78	0.60

source: livestock census report 1961-2012, Board of revenue Ajmer Rajasthan

As already mentioned, the decline in the camel's population from 1961 to 2012 in Nagaur district is taken as a focal point of this case study. Also, regarding tehsils, it is witnessed from diagram given below that from 1961 to 2012 among different tehsils, ladnu, nawa, deedwana and parbatsa tehsils recorded maximum aggregation of Camel population followed by jayal, degana and nagaur of camel population. Two tehsils makrana and merta reported in the category of very low concentration of Camel population. When district total is discussed it can be observed that from 1961 to 2012 camel density in Nagaur witnessed a decline with highest value recorded in the year 1972 (2.53) and lowest in the year 2012 (0.60).

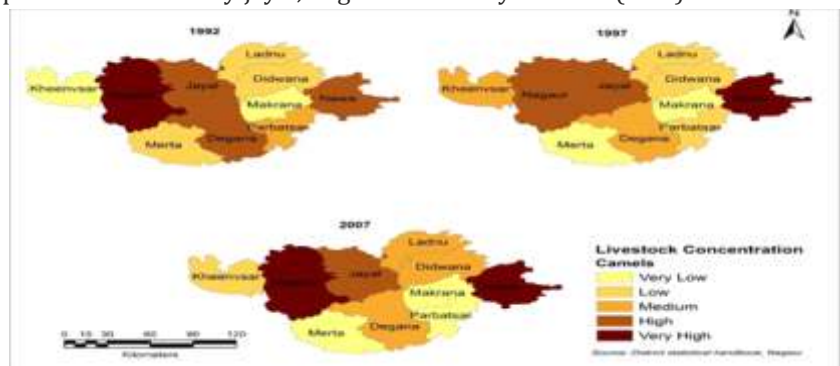

The concentration of Camels in Nagaur District (1992-2007)

Also from the above graph showing camel population of Nagaur district in three years viz. 1992, 97 and 2007, it can be seen that Nagaur has been in the category of very high or high concentration of camels in the respective years accompanied by Nawa and Jayal tehsils.

Table-6: Concentration of Camels in Nagaur District (1961-2012)

Camel population in Nagaur District 1961-2012												
Tehsil/Year	1961	1966	1972	1977	1983	1988	1992	1997	2003	2007	2012	Total
deedwana	4681	5744	6477	5778	5494	3553	3135	2479	1832	1325	1002	41500
%	2.89	3.26	2.58	2.26	1.69	1.33	1.15	0.77	0.57	0.4	0.27	17.17
Degana	2865	3620	4562	4422	4401	4512	4618	3221	1492	1384	852	35949
%	1.39	1.51	1.62	1.57	1.1	1.46	1.39	0.79	0.46	0.43	0.27	11.99
Jayal	3010	4414	5158	5062	5886	3801	4654	3467	2313	1510	1259	40534
%	2.55	2.39	2.16	1.95	1.71	1.88	1.76	1.23	0.89	0.62	0.46	17.6
Ladnu	4317	5263	5460	5166	4314	3589	3223	2482	1742	1281	1081	37918
%	3.87	3.78	2.83	2.7	1.75	1.78	1.56	1.03	0.85	0.65	0.46	21.26
Merta	369	792	869	1049	1480	1298	2236	1446	827	798	479	11643
%	0.22	0.33	0.37	0.39	0.45	0.44	0.61	0.36	0.22	0.21	0.14	3.74
Nagaur	4485	6729	9856	9449	8297	6537	10036	3855	2813	2286	1802	66145
%	2.36	1.95	2.03	1.7	1.39	1.49	1.73	0.81	0.7	0.55	0.38	15.09
Nawa	3023	3489	4666	4429	5017	4782	4529	5747	2387	2454	1304	41827

%	1.81	2.03	2.08	2.13	1.6	1.61	1.42	1.56	0.57	0.62	0.31	15.74
Parbatsar	4265	6315	7700	5267	5072	4337	3960	2326	825	905	1045	42017
%	1.59	2.01	1.97	1.5	1.01	1.03	0.87	0.83	0.31	0.33	0.41	11.86
Khinvsar	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	2967	2076	1217	1352	7612
%	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	1.09	0.94	0.52	0.51	3.06
Makrana	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	1201	751	694	402	3048
%	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	0.61	0.37	0.35	0.2	1.53
District Total	27015	36366	44748	40622	39961	32409	36391	29191	17058	13854	10578	328193
%	1.95	2.01	1.94	1.71	1.31	1.33	1.3	0.9	0.57	0.46	0.34	13.82
source: livestock census reports 1961-2012 , Board of Revenue Ajmer, Rajasthan * % of total livestock												

Above table shows the percentage concentration of camels in Nagaur district and its tehsils from year 1961-2012. In above table it could be viewed that tehsils having highest camel density from year 1961-2012 are Ladnu, Deedwana, Jayal, Nagaur and Nawa, and those coming under middle category are Degana, and Parbatsar, whereas Merta, Khinvsar and Makrana are displaying low camel concentration of camels. Also from the table it is clear that concentration of camel in Nagaur district has declined from year 1961 to 2012 with maximum concentration recorded in the year 1972 (44748) and minimum in the year 2012 (10578).

Conclusion

Several reasons for this decline have been identified like breeding camels is a tougher job and also the grazing lands disappearance. Traditionally camels were reared by the majority of rural poor in Nagaur district but now they are moving towards urban jobs. Also, there has been an increase in the illegal export of camels to gulf and UP and Bangladesh for their meat in slaughter houses and skin for leather making. Despite many efforts by Indian and Rajasthan state government, now Rajasthan govt declare camel as state animal in 2014 and enacted The Rajasthan Camel Act 2015 (prohibition of slaughter and regulation of temporary migration or export) providing punishment for selling camels for slaughter, for taking the animal outside the state, for castrating them and even for using the nose peg. This become a problem for camel keeper now they can't sell their camel outside the state, even they can't migrate outside the state with camel, the price of camel in camel fair is also declining per year now biggest fair of camel in Rajasthan Pushkar fair also facing the same problem. Pushkar camel fair has been drastic decrease in camel sales in the past few years in 2013-14 total 6953 camel were brought to sold in fair out of these out of these 2950 were sold but in 2017-18 the figure of sale is only 853 out of approx 8000 camels, nowadays this is a burning issue for a camel keeper. Changing life style of people is also a reason, Modernization has shifted the age-old camel carts usage for transportation with mini-vans, this leads to a decline in camel demand and hence rearing activities.

Apart from all these legal illegal issues, there are certain climatic issues that are giving momentum to this decline. Nagaur has faced frequent monsoon failures in the last few years due to which resulted in a widespread drought. These droughts consequently created a severe problem of the water crisis in the district thereby giving rise to many problems in camel rearing. We all know rainwater refills groundwater and surface water. Thus due to monsoon failures, Nagaur District has over burdened its groundwater generating severe water scarcity that ultimately leads to camel population decline in Nagaur as the drought makes it difficult for the rural people to rear camels.

The present study attempted to perform a detailed study of camels decline and possible reasons for this decline in Nagaur district.

The study was based on the data collected by the

authors on the basis of secondary sources gathered on this particular topic, also personal interaction with rural poor people of Nagaur district. It is thus suggested that the government and rural people should work hand in hand to stop this decline, better planning of drought and other climatic conditions and proper education on the topic may help in addressing the present decline. Also, present laws should be revising in term of export and migration, the government should stop illegal camel smuggling and slaughtering and support camel keeper financially by providing them withlow-interest loans for camel rearing at present govt providing rupees 10000 cash as incentive to camel herders under Ushtra Vikas Yojna (camel development plan) but in reality it is hardly impact them. Also, state government should arrange awareness-generating campaigns among the people explaining them the benefits of camel rearing and government strategies. Marketing of camel product like camel milk, dairy product, ice cream, camel dung paper , camel wool made product, milk soap, may be a tool to camel keeper camel dependent way of life.

References

1. *Farah, Z. and Fischer, A.: Milk and Meat from the Camel. Handbook on Products and Processing. VDF Hochschulverlag AG an der ETH ZUrich, Switzerland. (Eds.) 2004*
2. *Gahlot, T.K. and Chada, B.P. : Training and sport of the dromedary camel. In Selected Topics on Camelids (Ed. T.K. Gahlot), The Camelid Publisher, Bikaner 2000. pp. 577-591*
3. *Jodha, N.S.: The Decline of Common Property Resources in Rajasthan, India. Pastoral Development Network, paper 22c. Overseas Development Institute, London. 1998*
4. *Khanna, N.D.: Traits and calf behavior InBikaneri breed of camel, In Camels in Development (Ed. A. Hjort), Scandinavian Institute of African Studies, Uppsala. 1978 pp. 73-80*
5. *Khanna, N.D. and Rai, A.K.: Perspective and Strategic Plan for camel Improvement Research Programmes at NRC on camel at Bikaner (1995-2025), National Research Centre on Camel, Bikaner 1995.*
6. *Kohler-Rollefson, I.: The Raika dromedary breeders of Rajasthan: A pastoral system incrisis., Nomadic Peoples , 1992 74-83.*
7. *Kohler-Rollefson, I. b. The camels of Indiain social and historical perspective. Animal Genetic Resource Information 1992, p 53-64.*
8. *Kohler-Rollefson, I.: Ethnoveterinary practices of camel pastoralists in Northern Africa and India. Journal of Camel Practice and Research , 1994 p 75-82.*
9. *Kohler-Rollefson, I: Camel pastoralism: An indigenous arid land exploitation strategy, Journal of Camel Practice and Research 1994, p 1-6.*
10. *Kohler-Rollefson, I.: Rajasthan's camel pastoralists and NGOs: The view from the bottom, In Social Aspects of Sustainable Dryland Management (Ed. D. Stiles),. John Wiley & Sons, Chichester, 1995 pp. 115-128.*
11. *Kohler-Rollefson, I.: New hope for the Raikas of Rajasthan. Livestock International 1997, p 11-14 412.*
12. *Kohler-Rollefson, I. and Rathore, H.S. : The Malvi camel: A newly discovered breed from India. Animal Genetic Resource Information pp.31-42.*
13. *Leese, A.S. : A Treatise on the One-humped Camel in Health and Disease. Haynes and Son, Stamford pp.*
14. *Malhotra, S.P., Gupta, B.S., Goyal, D. and Taimni, V: Population, Lands, Crops and Livestock Statistics of Arid Zone of Rajasthan. CAZR], Jodhpur 1983.*
15. *Rathore, G.S.: Camels and their Management. Indian Council of Agricultural Research, New Delhi.*
16. *Srivastava, V.K. Who are the RaikaiRebaris? Man in India 1991, p 279-304*
17. *Stiles, D. : Camel pastoralism and desertificationin northern Kenya. Desertification Control 81983 p2-5.*

Weblink

1. *http://www.icar.org.inlnrccmlbiomain*
2. *http://www.camelsofrajasthan.com/*

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Referred Journal)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

Published by Dr. S. N. Tailor Foundation

Head Office : "SATYAM" Munot Nagar, Beawar - 305901

Branch Office : 54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018

E-mail : shodhshree@gmail.com • Web : www.shodhshree.com

Individual Subscription Form

Name .....

Designation .....

Name of Organization .....

.....

Address .....

.....

District .....

State

.....

Pin .....

Tel. No. (R) .....

Mobile .....

e-mail .....

Date (Signature)

Frequency	:	Shodh Shree is Published four time in a year (Quarterly) i.e. January, April, July & October.
Mode of Payment	:	Subscription fee can be deposit through online Banking.
Bank Details	:	**DR S N TAILOR FOUNDATION** (A TRIBUTE OF LATE SHRI PARAS HEMENDRA G TAILOR) Union Bank of India, Beawar -305901 UB A/C No. 0326321010000001 **IFS Code :** UBIN0826472 • **MICR Code :** 305026014 **Account Type :** Current • **Subscription Fees :** 2200 Rs.

Membership No. ..... Date .....

(For Office Use only)

DECLARATION FORM FOR CONTRIBUTORS

I.....

hereby declared that the paper entitled'.....

.....'is unpublished original paper which is not sent any where for publication.

This paper is prepared by me/jointly with.....

.....which is exclusively for your journal entitle 'Shodh Shree'.

I/We will not demand any honorarium for the same expect one copy of the Journal in which this paper will appear. Please send copy of the Journal at the address of author whose name is appeared at first,

Copy right of matter is with Shodh Shree. I/We will not reproduce it in any other journal of book except prior permission of the Chief Editor.

Signature .....

Name .....

Designation .....

Official Address .....

.....

Residential Address .....

.....

.....

Phone No. ..... Pin No. .....

e-mail Address .....

Shodh Shree

(A Peer Reviewed International Referred Journal)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

Published by Dr. S. N. Tailor Foundation

Head Office : "SATYAM" Munot Nagar, Beawar - 305901

Branch Office : 54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018

E-mail : shodhshree@gmail.com • Web : www.shodhshree.com

Institutional Membership Form

The Editor
Shodhshree
Jaipur

Dear Sir
I want to become a member of this Journal for -

☐ 1 year	☐ 2 years	☐ 3 years
(Rs. 1200/-)	(Rs. 2000/-)	(Rs. 2800 /-)

I am sending here with Rs..... through online banking/cash for membership of your Journal.

Name of Institution .....

.....

Address.....

..... Pin Code.....

Phone/Mobile No. .....

E-mail ID .....

Date: Signature

For Office Use Only

Membership No. _____ Date _____

Frequency : Shodhshree is Published four time in a year(Quarterly)
i.e. January, April, July, October.

Mode of Payment : Subscription fees can be deposit through online Banking.

Bank Details : Cheque / DD must be in Favor of DR S N TAILOR FOUNDATION
(A TRIBUTE OF LATE SHRI PARAS HEMENDRA G TAILOR)
Union Bank of India, Beawar - 305901
UB A/C No. 0326321010000001 • Account Type : Current
IFS Code : UBIN0826472 • MICR Code : 305026014

Guidelines for the Contributors

1. All research paper must be typed in Microsoft Word and use KRUTI DEV 010 font for Hindi or Times New Roman Font for English can submit by C.D. or through e-mail.

2 All manuscripts must be accompanied by the brief abstract, Abstract including Keywords must not exceed more then 150 words.

3. A separate list of references should be given at the end of the paper and not at each page. Footnotes may be given on the same page if any technical term needs some explanation.

4. Table, Model, Graph or Chart should be on separate pages and numbered serially with appropriate heading.

5. Maximum word limit of research paper up to 3000 words.

6. Special care must be taken to avoid spelling errors and grammatical mistakes in the paper, otherwise it will not be accepted for publication.

7. The author(s) should certify on a separate page that the manuscript is original and it is not copyrighted.

8. The copyright is Reserved for 'Shodhshree' for All Research papers and Book Reviews, published in this journal.

9. Publication of research paper would be decided by our editorial board or subject specialist.

Book Review : For Book Review to be included in this journal only reference books and research publications are considered. One copy of each such publication must be submitted to the Editor.

Note : Shodh Shree have copyright on papers published in the journal therefore, prior permission is necessary for reproduction of paper, anywhere by author or other person. However, papers published in the journal may be freely quoted in further study. All disputes are subject to jaipur jurisdiction.

Research Paper may be sent to our e-mail: shodhshree@gmail.com
For any assistance, Please Contact Dr. Ravindra Tailor - 09413224134

To,

प्रिन्टेड मैटर
If undelivered please return to :

शोध श्री (त्रैमासिक)
54-ए, जवाहर नगर कॉलोनी
टोंक रोड, जयपुर-302018

स्वात्त्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान सम्पादक – डॉ. वीरेन्द्र शर्मा के लिए मुद्रित व 54–ए,
जवाहर नगर कॉलोनी, टोंक रोड, जयपुर–302018 मो. 9460124401